त्रिवेणी ग्रन्थमाला का २७ वाँ पुष्पः—

स्त्री शास्त्र

लेखक—

१५ जनवरी सन् ३४ के प्रलय-

कारी भूकम्प के शिकार।

स्वर्गीय मदनलालजी खेमका—

मुंगेर निवासी।

प्रकाशक—

बैजनाथ प्रसाद बुकसेलर

पुस्तक विक्रेता तथा प्रकाशक

बनारस सिटी

प्रथम संस्करण	सन् १९३४	मूल्य २)

प्रकाशक
चौधरी एण्ड सन्स,
बनारस सिटी

मुद्रक—
महादेव [illegible]
अर्जुन प्रेस,

विषयानुक्रम

[प्रथम भाग]

संख्या विषय	पृष्ठ संख्या
१—ईश-वन्दना	२
२—स्त्री-जाति का पतन	३
३—विद्याध्ययन	५
४—ब्रह्मचर्य	८
५—त्याग, बलिदान और आत्मोत्सर्ग ...	९
६—विवाह-विधान	११
७—बाल-विवाह	१४
८—नववधू को ११ उपदेश	१८
९—गृहस्थी	२०
१०—गृहिणी कर्त्तव्य	२१
११—प्रेमोपचार	२४
१२—दाम्पत्य जीवन	२६
१३—पातिव्रत	२८
१४—पत्नीव्रत	३२
१५—अनाचार	३५
१६—पर्दा	३७
१७—पर्दे से हानि	४०

संख्या विषय			पृष्ठ संख्या
१८—लज्जा	...	...	
१९—सतीत्व	...	...	४१
२०—बुरी दृष्टि	...	...	४२
२१—पर्दे का इतिहास	...	...	४२
२२—स्त्रियों की स्वतन्त्रता और समानाधिकार			४६
२३—पुरुषों से दो शब्द	...	...	५४

[द्वितीय भाग]

२४—स्वास्थ्य रक्षा	...	...	६०
२४—स्वास्थ्य सहायक बातें		...	६८
२५—स्वास्थ्य विनाशक बातें		...	६९
२.—शयन गृह	...	...	७१
२७—एक शय्या	...	...	७२
२८—मितव्ययिता	...	...	७३
२९—चटोरपन	...	...	७४
३०—ऋण	...	...	७५
३१—दाई नौकरों के प्रति सद्व्यवहार		...	७६
३२—फुटकर गणित	...	...	७
३३—दैनिक आय व्यय लिखने की रीति		...	८०
३४—पत्र-प्रबोध	...	...	८२
३५—गृहस्थी के ११ प्रबन्ध	...	...	८८
३६—रेल यात्रा की उपयोगी बातें	...	...	८९

[तृतीय भाग]

३७—भोजन संस्कार	...	...	९२
३८—पाक-विधान	...	...	९५

संख्या विषय			पृष्ठ संख्या
३९—षटरस भोजन	...	...	९६
४०—गेहूँ की रोटी	...	...	९६
४१—भात	...	...	९७
४२—मीठे चावल	...	...	९८
४३—केसरिया भात	...	...	९८
४४—अरहर के दाल की खिचड़ी	...	...	९९
४५—मूँग के दाल की खिचड़ी	...	..	९९
४६—भुनी खिचड़ी	...	...	१००
४७—दाल के छिलके छुड़ाने की विधि		..	१००
४८—अरहर की दाल	...	...	१००
४९—मूँग की दाल	...	...	१०१
५०—सब प्रकार की दाल	...	...	१०१
५१—उरद की दाल	...	...	१०१
५२—दाल का पानी	...	.	१०१
५३—दलिया	...	...	१०२
५४—बड़ी	...	...	१०२
५५—मुँगौड़ी व चनौरी	...	...	१०३
५६—टटकी मुगौड़ी	...	...	१०३
५७—तिल मुँगौड़ी	...	...	१०४
५८—कढ़ी	...	...	१०४
५९—झोर	...	...	१०४
६०—शाक और भाजी	...	..	१०५
६१—शाक	...	..	१०५
६२—आलू	...	...	१०६
६३—जिमीकन्द	...	...	१०७

संख्या विषय — पृष्ठ संख्या
१८—लज्जा ... ...
१९—सतीत्व ४१
२०—बुरी दृष्टि ४२
२१—पर्दे का इतिहास ४२
२२—स्त्रियों की स्वतन्त्रता और समानाधिकार ४६
२३—पुरुषों से दो शब्द ५४

[द्वितीय भाग]

२४—स्वास्थ्य रक्षा ६०
२४—स्वास्थ्य सहायक बातें ... ६८
२५—स्वास्थ्य विनाशक बातें ... ६९
२.—शयन गृह ७१
२७—एक शय्या ७२
२८—मितव्ययिता ७३
२९—चटोरपन ७४
३०—ऋण ७५
३१—दाई नौकरो के प्रति सदव्यवहार ... ७६
३२—फुटकर गणित ७
३३—दैनिक आय व्यय लिखने की रीति ... ८०
३४—पत्र-प्रबोध ८२
३५—गृहस्थी के ११ प्रबन्ध ८८
३६—रेल यात्रा की उपयोगी बाते ८९

[तृतीय भाग]

३७—भोजन संस्कार ९२
३८—पाक-विधान ९५

संख्या विषय पृष्ठ संख्या

३९—षटरस भोजन ९६
४०—गेहूँ की रोटी ९६
४१—भात ९७
४२—मीठे चावल ९८
४३—केसरिया भात ९८
४४—अरहर के दाल की खिचड़ी ९९
४५—मूँग के दाल की खिचड़ी ९९
४६—भुनी खिचड़ी १००
४७—दाल के छिलके छुड़ाने की विधि .. १००
४८—अरहर की दाल १००
४९—मूँग की दाल १०१
५०—सब प्रकार की दाल १०१
५१—उरद की दाल १०१
५२—दाल का पानी १०१
५३—दलिया १०२
५४—बड़ी १०२
५५—मुँगौड़ी व चनौरी १०३
५६—टटकी मुगौड़ी १०३
५७—तिल मुँगोड़ी १०४
५८—कढ़ी १०४
५९—भोर १०४
६०—शाक और भाजी १०५
६१—शाक १०५
६२—आलू १०६
६३—जिमीकन्द १०७

संख्या विषय — पृष्ठ संख्या

६४—करेला १०८
६५—भिण्डी ११०
६६—बैंगन ११०
६७—परवर १११
६८—चटनी १११
६९—राइता ११३
७०—आचार ११४
७१—पापड़ ११९
७२—सिरका बनाने की विधि १२०
७३—गँवार की फली १२०
७५—मुरब्बे का वर्णन ... १२१
७६—चासनी बनाने की विधि ... १२२
७७—खीर ... १२३
७८—सेंवई ... १२३
७९—नारियल की खीर ... १२३
८०—फलाहार व शाकाहार ... १२४
८१—सत्तू बनाने की विधि ... १२६
८२—गर्म मसाला बनाने की विधि ... १२६
८३—साधारण मसाला बनाने की विधि ... १२७
८४—कुंडलिनी (जलेबी) बनाने की विधि ... १२७
८५—लड्डू बनाने की विधि ... १२७
८६—हलुवा वा मोहनभोग ... १२९
८७—बादाम की बर्फी ... १३०
८८—कचौरी ... १३०
८९—पकौड़ी ... १३२

संख्या विषय			पृष्ठ संख्या
९०—बड़े		...	१३२
९१—अन्य पाक		...	१३२

[चतुर्थ भाग]

९२—गृह शिल्प	...	...	१३५
९३—कताई और चर्खा	...	...	१३८
९४—सिलाई की जरूरी चीजें	...	...	१४६
९५—सीने का अभ्यास	...	...	१४८
९६—ट्रायल वा कच्चा पहनाना	...	...	१४८
९७—नाप शिक्षा	...	...	१४९
९८—स्त्रियों की मुख्य पोशाकें	...	...	१५०
९९—ब्लाउज़	...	...	१५०
१००—जाकेट	...	...	१५४
१०१—सेमीज	...	...	१५५
१०२—फ्राक	...	...	१५५
१०३—लँहगा	...	...	१५६
१०४—चोली	...	...	१५७
१०५—सुजनी	...	...	१५७
१०६—कई भाँति की सिलाई	...	...	१५७
१०७—पिरोना	...	...	१५८
१०८—सादा पहनावा	...	...	१५८
१०९—कपड़े की रँगाई	...	...	१५९
११०—कपड़ों के धब्बे छुड़ाना	...	...	१६७
१११—काली रोशनाई	...	...	१६८
११२—ब्ल्यूब्लैक रोशनाई	...	...	१६८

संख्या विषय			पृष्ठ संख्या
११३—लाल रोशनाई	...	...	१६८
११४—ताँम्बे व पीतल के वासन साफ करने की विधि			१६९
११५—ताम्बे के वर्तनपर कलई करना			१६९
११६—नाथ व बाली के मोती उँजालना		...	१६९
११७—पूटीन बनानो		...	१६९
११८—अद्भुत पदार्थ		...	१७०
११९—सुगन्धित तैल		...	१७०
१२०—संगीत विद्या		...	१७०
१२१—हारमोनियम बोध		...	१७२
१२२—फुटकर औषधियाँ		...	१८५

[पंचम अध्याय]

१२३—भविष्य निर्माण	...	...	१९२
१२४—रजोदर्शन	...	...	१९५
१२५—रज समाप्ति	...	...	१९७
१२६—रजवती के लक्षण	...	...	१९८
१२७—रज के दिनों में सावधानी	...	...	१९८
१२८—रजस्वला स्त्री का कर्त्तव्य	...	...	१९९
१२९—पुरुष वीर्य उत्पत्ति और वीर्यपर वैज्ञानिक दृष्टि			२००
१३०—स्त्री वीर्य अथवा स्त्री डिम्ब		...	२०४
१३१—गर्भाशय		...	२०६
१३२—अण्डकोष		...	२०६
१३३—गर्भाधान की तैयारी		...	२०७
१३४—गर्भ संचार अथवा गर्भाधान		...	२११
१३५—जोड़ी सन्तान होने का कारण		...	२१४

संख्या विषय | पृष्ठ संख्या

१३६—दो शरीर की एक सन्तान होने का कारण २१४
१३७—मासिक श्राव का कारण ... २१५
१३८—इच्छानुसार कन्या या पुत्र उत्पन्न करना २१५
१३६—गर्भ रहने की शर्तिया पहिचान ... २२८
१४०—गर्भवती के लक्षण ... २२६
१४१—गर्भवती के कर्त्तव्य ... २२६
१४२—गर्भपात के लक्षण और उचित उपाय ... २२६
१४३—गर्भवती के जी मिचलाने की औषधि ... २३०
१४४—गर्भवती के छाती के दर्द की औषधि ... २३०
१४५—गर्भवती के शूल की औषधि ... २३०
१४६—गर्भ में बालक का किस अवस्था में रहना २३०
१४७—गर्भ में पुत्र और कन्या होने की पहिचान २३१
१४८—सातवें और आठवें मासमें बालक का उत्पन्न होना २३२
१४६—गर्भ न रहने का कारण और उचित उपाय २३३
१५०—गर्भधारण करानेवाली औषधियाँ २३५
१५१—इच्छानुसार गुणयुक्त संतान उत्पन्न करना २३६
१५२—सूतिका गृह ... २४०
१५३—सौरिगृह के लिये आवश्यक चीजें ... २४१
१५४—धाय ... २४१
१५५—प्रसव की तैयारियाँ ... २४२
१५६—प्रसव या नया जन्म ... २४३
१५७—प्रसव का प्रथम चिन्ह ... २४३
१५८—प्रसव का द्वितीय चिन्ह ... २४४
१५६—प्रसव सम्बन्धी आवश्यक जानकारी २४६
१६०—प्रसव गिराने की रीति ... २४६

संख्या विषय — पृष्ठ संख्या

१६१—बालक का पेट में मर जाना ... २५०
१६२—धाय सम्बन्धी जानकारी ... २५०
१६३—बालक का हाथ पाँव व शिर के बल निकलना २५१
१६४—प्रसव के समय जच्चा की सहायता २५२
१६५—पैदा होतेही बालक का न रोना और उचित उपाय २५६
१६६—नार काटना और बालक को घी, शहद चटाना २५७
१६७—नार काटने के बाद बालक को स्नान कराना २५८
१६८—बालक के अङ्ग प्रत्यङ्ग की जांच ... २५९
१६९—औनार का गिरना ... २५९
१७०—प्रसव के बाद सुख की नींद ... २६०
१७१—क्लोरोफार्म का प्रयोग ... २६१
१७२—प्रसव के बाद बारूद आदि की आवाज ... २६१
१७३—प्रसव के बाद बालक को घुट्टी देना ... २६२
१७४—सौरिगृह में धूनी देना ... २६२
१७५—प्रसव के बाद प्रसूता को भोजन ... २६२
१७६—प्रसव के बाद स्नान ... २६३
१७७—चरुये का पानी अथवा बत्तीसा ... २६३
१७८—दशमूल का काढ़ा ... २६३
१७९—प्रसव के बाद तैल मर्दन ... २६४
१८०—प्रसव के बाद हवाखोरी ... २६४
१८१—प्रसव के बाद बालक को दूध पिलाना और न पीने पर उचित उपाय २६४
१८२—दूध से भरे और कड़े स्तनों की औषधि २६६
१८३—बालक को स्नान कराना २६६
१८४—माताके दूषित दूधसे हानि और दूधके दोषदूर करनेके उपाय २६

संख्या विषय पृष्ठ संख्या

१८५—धाय की नियुक्ति २६८
१८६—दूध पिलाने वाली का आहार और दूध बढ़ाने का उचित उपाय २६९
१८७—दूध पिलानेका नियत समय और दुध छुड़ानेकी तरकीबें २७१
१८८—बालको को बैठाने, उठाने और सुलाने सम्बन्धी बाते अथवा अङ्ग-परिचालन २७२
१८९—यन्त्र,मन्त्र और झाड़ फूँक आदि पर अन्ध विश्वास २७७
१९०—बालको को गहने पहनाने से हानि ... २७९
१९१—दाँत निकलने का सुगम उपाय ... २८०
१९२—दन्तोत्पन्न के लक्षण ... २८०
१९३—दाँत निकलने के समय सावधानी ... २८१
१९४—मुख स्राव और उसका उचित उपाय ... २८२
१९५—निष्क्रमण संस्कार ... २८२
१९६—शीतला अथवा माता ... २८३
१९७—शीतला के रोगी का उपाय २८६
१९८—मुख से न बोलने वाले बच्चो के रोग की पहिचान और उचित उपाय २८९
१९९—बाल-चिकित्सा ... २९२
२००—ज्वर-चिकित्सा ... ३००
२०१—स्त्री-चिकित्सा ... ३०४

[षष्ठम भाग]

२०२—बच्चो के सुधार पर वैज्ञानिक दृष्टि ... ३११
२०३—विधवाओं का धर्म और कर्तव्य ... ३१६

संख्या विषय		पृष्ठ संख्या
२०४—स्त्रियों के लिये उपवास और व्रत	..	३२२
२०५—स्त्रियों का धर्म क्या है	.	३२४
२०६—सती महात्म्य	..	३२४
२०७—पातिव्रत का प्रभाव	..	३२८
२०८—गान्धारी	...	३२९
२०९—सावित्री	...	३३१
२१०—अरुन्धती	...	३४०
२११—दुर्गावती	...	३४४
२१२—विलासकुमारी	...	३४८
२१३—कर्मदेवी		३५२

स्वर्गीय श्री मदन लालजी खेमका।

प्रथम भाग

ईश-वन्दना

ॐ असतो मा सद् गमय ।

तमसो मा ज्योतिर्गमय ।।

मृत्योर्मा ऽमृतंगमय ।

(शतपथ ब्राह्मण)

हे प्रभो ! तुम हमें अधर्म-मार्ग से पृथक् कर सन्मार्ग में चलाओ । तुम हमें अन्धकार में न ले जाकर प्रकाश में ले चलो और मृत्यु से दूर कर मोक्ष-सुख को प्रदान करो ।

स्त्रिजातिका पतन

हमारा भारतवर्ष क्यो उच्च दशा को प्राप्त था ? हमारी हिन्दू-जाति किस के बल पर उन्नत हुई थी ? यहाँ की सुशिक्षिता, पतिव्रता एवं आदर्श गुणवन्ती स्त्रियो के कारण। पुरुष कभी भी उत्तम कार्य नहीं कर सकते, जब तक कि उनके घर में सच्ची, साध्वी पत्नी न हो। इस सम्बन्ध में नीति शास्त्र का एक श्लोक उद्धृत कर देना बहुत उचित जान पड़ता है:—

यस्यास्ति भार्या पठित सुशिक्षिता,
गृहक्रिया—कर्म—सुसाधने क्षमा।
स्वजीविकां धर्म-धनार्जनं पुनः,
करोति निश्चिन्तमथोहि मानव ॥

जिसकी स्त्री पढ़ी लिखी, सुशिक्षिता, गृह-कार्य तथा अन्य व्यवहारों मे सुयोग्या होती है, वह पुरुष चिन्ता रहित प्रसन्नमन होकर अपने धर्म तथा धन का उपार्जन कर सकता है।

काल के प्रभाव से अब स्त्रियो की प्राचीन-मर्यादा का लोप हो रहा है। हिन्दू-जाति में अब स्त्रियो की उतनी कदर नहीं होती। उनकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध बिगड़ गया है। इस प्रकार अयोग्य स्त्रियों को गृहस्थी के गुरुतर भार सौंपे जाने लगे और

देश रसातल को पहुँच गया। स्त्रियों के इसी सम्बन्ध का एक हिन्दी-कवि ने अपने पद्य में कैसा अच्छा चित्र खींचा है:—

सोचो ! नरों से नारियाँ किस बात में हैं कम हुई ।
मध्यस्थ से शास्त्रार्थ में वे भारती के सम हुई ॥
होती अनेको रही गार्गी और मैत्रैयी जहाँ।
है अब अविद्या मूर्ति सी कुल-नारियाँ होती वहाँ ॥

(भारत—भारती)

जिस स्त्री-जाति ने शङ्कराचार्य और रामानुजाचार्य जैसे वेदान्ती, राणा प्रताप और शिवाजी जैसे शूरवीर, बाल्मीकि तुलसीदास जैसे कवि, दयानन्द जैसे समाज सुधारक और तिलक तथा गाधी जैसे देश सेवक उत्पन्न किये, उसकी दुर्दशा किसे न असह्य जान पड़ेगी ?

एक समय वह भी था जब समाज में स्त्रियो का स्थान बहुत ऊँचा था। उस समय उन्नति के लिये उन्हें ज्ञान और धर्म में विकाश करने का पूरा समय मिलता था। वैदिक संस्कार और उच्च शिक्षा पद प्राप्त करने का भी उन्हे सम्पूर्ण अधिकार था, कुमारिकाओ के तो उपनयन संस्कार होते थे, जैसा कि यम और हारीत के ग्रन्थों के देखने से पता लगता है। यज्ञोपवीत धारण कर वे वेदाध्ययन और अग्निहोत्र की अधिकारिणी वन जाती थीं और यजमान-पत्नी बिना यज्ञ कार्य अधूरा समझा जाता था।

इतना ही नहीं, आज तक जितने सत्पुरुष हुए हैं, वे सब सदाचारिणी माताओ के कारण ही हुए हैं। स्त्री-जाति का सुधार

ही राष्ट्रीय सुधार समझना चाहिये। जो जाति उन्नत होना चाहती है, वह सब से प्रथम स्त्रियो में सद्गुणो का प्रचार करे और उन्हे शिक्षिता बनावे। यह बात मिथ्या है कि "आदर्श स्त्रियाँ केवल प्राचीन समय में ही हुआ करती थीं। कलियुग में सती स्त्रियो का आविर्भाव होना ही असम्भव है।" आत्मोन्नति करने की प्रबल इच्छा रखने वाली देवियो के लिये आज भी सतयुग विद्यमान है। वर्तमान समय मे भी भारत मे कितनी ऐसी श्रेष्ठ महिलाएँ हैं, जो अपने चारु चरित्र का दिव्य प्रकाश चारो ओर फैला रही है। मै चाहता हूँ भारत का समस्त स्त्री समाज इसी प्रकार उच्च सद्गुणो से अपनी आत्मा को विभूषित करे और स्वच्छ हृदय से विदुषी, परोपकारी और पतिव्रता बनने का संकल्प करें।

× × + × ×

विद्या ध्ययन

कुमारीं शिक्षयेद् विद्यां, धर्म—नीतौ निवेशयेत्।
द्वयीः कल्याणदा प्रोक्ता, या विद्यामधि गच्छति ॥
(हेमाद्रि)

कुमारी को विद्या पढ़नी चाहिये। उसी भाँति धर्म और नीति में भी प्रवेश करना योग्य है। जो कन्या विदुषी होती है, उससे दोनो कुलो का कल्याण होता है।

विद्या पढ़ाने का अभिप्राय साक्षर बनाने से नहीं है, बल्कि योग्य बनाने से है। वही कन्या विद्याध्ययन कर सकती है जो

ब्रह्मचर्य का पालन करे। जब तक वह ब्रह्मचारिणी तथा अविवाहिता है, तब तक वह नानाप्रकार की विद्यायें और कलाये सीख सकती है। प्रत्येक बहन के लिये विद्या प्राप्त करना परमावश्यक है। ६–७ वर्ष की आयु से ही इन्हे विद्या प्राप्त करनी चाहिये।

बहनो! तुम्हारे पढ़ने का समय अधिकांश रूप में तुम्हारे पिता के यहाँ ही रहता है। विवाह होने के बाद तुम अपने ससुराल चली जाती हो, जहाॅ तुम्हे घर का सारा काम धन्धा सँभालना पड़ता है तथा गृहस्थी चलानी पड़ती है। इसलिये उचित है कि पिता के घर मे ही रह कर विवाह काल तक पूर्ण शिक्षिता बनो। परन्तु बहनों! यह मत समझना कि हमे ससुराल में जाकर न पढ़ना चाहिये। विद्या तो जितनी प्राप्त की जाय उतनी ही थोड़ी है। विद्या प्राप्त करने में कोई आपत्ति नहीं। यह तो एक गुण है, जो सभी जगह लिया जा सकता है। अगर अवकाश न मिले तो भी कम से कम एक घंटा अपने पढ़ने के लिये अवश्य ही निकाल लेना चाहिये। कितनी स्त्रियाँ तो यह कह देती हैं कि,—"कहीं बूढ़े तोते भी पढ़ते हैं?" पर वे यह नहीं जानतीं कि कितनी स्त्रियाँ अधिक अवस्था में भी पढ़ लिख कर पुरुषों से भी अधिक चतुर हो गयी हैं। जैसे, जयदेव की स्त्री पद्मावती ने विवाह के बाद काव्य पढ़ा, लोलम्बराज की स्त्री रत्नकला—जिसने युवावस्था मे काव्य और वैद्यक पढ़ा और अहल्या बाई तीस वर्ष की अवस्था में पढ़ी और राजभार लिया।

बुद्धि तो थोड़ी बहुत सब ही को परमेश्वर ने दी है। परन्तु

विद्या ही उसको चोखी बना कर काम में उन्नति की ओर अग्रसर कर देती है। यो तो पशु-पक्षी सब ही को बुद्धि है, परन्तु विद्या नहीं। मिट्टी सब स्थानो मे है पर बासन वहाँ ही बन सकता है, जहाँ कुम्हार बास करता है। लोहे में काट है, परन्तु जब तक शान पर नहीं चढ़ता, काटने योग्य नहीं रहता। हीरा भी जब तक ओपा नहीं जाता, तब तक चमकता नही। इसी प्रकार विद्या प्राप्त किये बिना बुद्धि भी पैनी और चोखी नहीं हो सकती।

मूर्ख स्त्रियो का न तो पिता के यहाँ ही आदर होता है और न उनकी पतिदेव से ही पटती है। और यदि कहीं वे अविद्या के कारण कुसंगति में पड़ गयी तो जन्म बिगड़ा—"धोबी का कुत्ता, घर का न घाट का।" इतना ही नहीं मूर्ख स्त्रियाँ बहकावे में भी बहुत जल्द आ जाती है। उन्हे हर कोई ठग लेता है। जरा सी इधर उधर की बातों पर ही वे विश्वास कर बैठती हैं, जिसके लिये उन्हें पीछे पश्चात्ताप् करना पड़ता है। फिर आजकल कितने मक्कार धूर्त्त कपटी साधुओं के वेश बना घूमते फिरते हैं। बिचारी भोली भाली अशिक्षित बहनें इनके फेरमें पड़ खूब धन का अपव्यय करती हैं। ये मक्कार इन्हें डोरे, तावीज, तथा तन्त्र-मन्त्र के बहाने से फुसला लेते है और फिर इनसे खूब धन ठगते हैं। आजकल कितना वितण्डावाद उठ खड़ा हुआ है, यह प्रत्येक बहन के समझने की परम आवश्यकता है। बात बात पर खतरे की घंटी सुनाई पड़ती है। इसलिये, बहनों! शिक्षा प्राप्त करो, विदुषी बनो और फिर एक वार सती, सावित्री और सीता की सी स्वामि परायणता, उत्तरा

और द्रौपदी जैसी तेजस्विता और मैत्रेयी, अनसूया की सी धर्म जिज्ञासा दिखला कर पाश्चात्य संसार की आँखों में चकाचौंध पैदा कर दो। अपनी हुंकार से फिर एक बार भारत को सचेत कर दो, तुम्हारे बिना देश, धर्म और समाज का कल्याण होना असम्भव है।

× + + ×

"ब्रह्मचर्येण कन्या युवानां विन्दते पतिम्।"

(अथर्ववेद)

ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य का पालन करने के पश्चात् कन्या अपने योग्य युवक पति को प्राप्त करती है।

कुछ हठी और अज्ञानी पुरुषो का विचार है कि,—"कन्याओ के लिये शास्त्र में ब्रह्मचर्य की आज्ञा नही दी गयी है। ब्रह्मचर्य का पालन उसी के लिये है, जो वेद पढ़ने का अधिकारी हो; पर कन्याओं को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं, इसलिये वे ब्रह्मचर्य की भी अधिकारिणी नहीं।"

वास्तव मे यह विचार भ्रम मूलक और समाज को दुराचार के समुद्र मे गिराने वाला है। हम बल पूर्वक कहते हैं कि कहीं भी किसी ऋषि—महर्षि ने ऐसी आज्ञा नहीं दी है कि कन्यायें वेद न पढ़ें। वैदिक काल में बहुत सी ऐसी स्त्रियाँ थी, जो वेदों का अध्ययन करती थीं और ऋचाओ का अर्थ जानती थीं। सरस्वती और गायत्री की आज भी संसार में पूजा हो रही है। गार्गी, मैत्रेयी तथा अरुन्धती आदि स्त्रियाँ वेद जानती थीं और उनके चरित्रों में

भी हमें वैदिकता के प्रमाण मिलते हैं। फिर हम कैसे मान सकते हैं कि स्त्रियो को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं ? और जब वेद पढ़ने का अधिकार नहीं है, तब वे ब्रह्मचर्य के पालन से किस प्रकार विमुख रह सकती हैं ?

हमारे शरीर—शास्त्र के जानने वाले महर्षि शुश्रुत ने भी कन्याओ को सोलह वर्ष के पहले विवाह करने के अयोग्य बताया है। अतएव जब तक वे अयोग्य हैं, ब्रह्मचर्य का पालन कर ज्ञानवती बनें तथा नाना प्रकार की विद्याये और कलायें सीखे।

× + + +

त्याग, बलिदान और आत्मोत्सर्ग

हमारी शिक्षा का यह अर्थ नहीं कि हमारी बहनें बी० ए और एम० ए की डिग्रियाँ प्राप्त कर भोग, विलास और मनोरञ्जन की सामग्रिया का उपयोग करें। हमारी शिक्षा का वस्तविक उद्देश्य तो त्याग, बलिदान और आत्मोत्सर्ग है। हम ऋषि सन्तान है, हम ऋषियो की तरह रहकर ही जीवन व्यतीत करना चाहते हैं। न तो हम भोग विलास और मनोरञ्जन की सामग्रियों का उपयोग करने के लिये पुरुषो को ही कह सकते हैं और न स्त्रियो को ही।

जिस देश में प्रति वर्ष १० लाख, प्रतिमास ८६ हजार, प्रतिदिन २८८०, प्रति घंटा १२० और प्रति मिनट दो मनुष्य "हाय अन्न !

हाय अन्न !' कर मर जांय; जहाँ प्रत्येक मनुष्य की वार्षिक आय १७) से भी कम हो; जहाँ ७० लाख भिखारी द्वार-द्वार टुकड़े मांगते फिरते हो; जहाँ १० करोड़ किसान एड़ी-चोटी का पसीना एक कर मुश्किल से एक वक्त रूखा-सूखा आधा पेट भोजन पाते हों; वहाँ हमे भोग विलास और मनोरञ्जन की सामग्रियों का उपभोग करना शोभा नहीं देता। हमारो शिक्षा का पाश्चात्य शिक्षा से सम्बन्ध नही। हम यह नही देखना चाहते कि हमारी माताएँ और वहिनें फैशन के फेर मे पड़ दिन रात अँधाधुन्ध खर्च करें, गोटे-किनारी और फैन्सी वस्त्रों का प्रयोग करें तथा दिन रात थियेटर और सिनेमा हाउसों के दरवाजे खटखटावें अथवा आँखों में रोल्ड-गोल्ड का चश्मा लगा फैशन में चूर हो यो ही अनर्गल बाजारो मे घूमती फिरें। हम तो अपनी माताओं और वहनो द्वारा देश का उत्थान चाहते हैं। हम अपनी माताओ और बहनों को सती, सावित्री और सीता के रूप में देखना चाहते है। जरा विचार करो! उनके जीवन मे कितनी सादगी थी? वे धन, वैभव और सुकुमारता की गोद में पली हुई देवियाँ अपने धर्म और कर्म के लिये कितना बड़ा त्याग करती हैं? संसार के सामने कितना उच्च आदर्श रखती हैं?

हम अपनी माताओ और वहनो में वही सादगी देखना चाहते हैं, वही त्याग देखना चाहते हैं। समय आने पर हम किसी समय भी भोग, विलास और मनोरञ्जन की सामग्रियो का उपभोग कर लेंगे। यह समय तो स्वदेशोत्थान का है, इस समय हमे भोग, विलास और मनोरञ्जन की सामग्रियो से क्या काम?

हमारे लिखने का कोई बहन यह अर्थ न लगा ले कि हमें बी० ए और एम० ए की डिग्री प्राप्त ही न करनी चाहिये। डिग्रियाँ प्राप्त करो, शिक्षिता बनो, अपने उचित अधिकारों के लिये आवाजें उठाओ, परन्तु स्मरण रक्खो–तुम्हारी जबान पर भोग, विलास और मनोरञ्जन का नाम भी न आने पावे। हम इसके लिये पुरुषो से भी आग्रह करते हैं कि यदि वे अपनी देवियो का कल्याण चाहते हैं, देशका उत्थान चाहते हैं तो स्वयम् थियेटर, सिनेमा और राग-रङ्गमें जाना छोड़े और भोग, विलास और मनोरञ्जन को सामग्रियो का उपयोग करना छोड़ें। अन्यथा, केवल देवियो को ही त्याग, बलिदान और आत्मोत्सर्ग की शिक्षा देना अन्याय है।

× × × ×

"कन्याना सम्प्रदानञ्च, कुमाराणांच रक्षणम्।"
(मनुस्मृति)

विवाह-विधान

कन्याओ का दान और कुमारो का संरक्षण बहुत विचार कर करना चाहिये।

गृहस्थी रूपी गाड़ी चलाने के लिये दो बैलो की आवश्यकता है। दोनो बैल, रूप में, गुण में, साहस में और परिश्रम में समान होने चाहिये। इन दोनो बैलो में एक स्त्री और एक पुरुष है। इन दोनों के संयोग हुए बिना और दोनों मे समान्यता हुए बिना गृहस्थी रूपी गाड़ी चलनी असम्भव है। इस लिये गृहस्थी रूपी गाड़ी चलाने के लिये प्रथम स्त्री और पुरुष की आवश्यकता है,

फिर इन दोनों के गुणादि में समान्यता की आवश्यकता है। अतः यदि कन्या और वर का विवाह सामान्यता लेकर हुआ तो वे सुमार्ग पर चलते हुए आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करेंगे, अन्यथा उनकी जीवन यात्रा उनके लिये भार स्वरूप हो उठेगी।

यही कारण है कि प्राचीन समय में वैदिक काल में वैवाहिक विषय वर और कन्या के अधीन था। अथ० १४।१।९ में कहा है कि,—"वर-वधू का चाहने वाला हो और वधू पति को पसन्द कर रही हो।" इन उच्चारणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वेद की सम्मति में वर-वधू का विवाह एक दूसरे को अच्छी प्रकार जान लेने के पीछे परस्पर की सम्मति से होना चाहिये। परस्पर की सम्मति के विना वर-वधू का विवाह नहीं होना चाहिये। एक बात और है। यद्यपि विवाह में वर-वधू की पारस्परिक सम्मति का रहना अत्यावश्यक है, पर स्त्री पुरुष को अपने जीवन भर का साथी चुनने में अपने माता-पितादि तथा गुरुजनों की सलाह का भी ध्यान रखना चाहिये, ताकि नवयुवक और नवयुवती अपना साथी चुनने में कोई गलती न कर बैठे। इस भाव को बनाने के लिये अथ० १४।१।९ में कहा है कि,—"मनसा सवितादददात्" अर्थात् कन्या को उत्पन्न करने वाला पिता अपने मन से सारी बातें सोच समझ कर कन्या को पति के हाथ में दे। उसी मन्त्र में कहा है,—"अश्विनास्तामुभा वरा" अर्थात् वर या कन्या के माता पिता, कन्या या वर को पसन्द करने वाले बनते हैं। इस प्रकार वैदिक मतानुसार माता-पिता आदि गुरुजनों की सलाह लेते हुए

वर-वधू एक दूसरे को अच्छी प्रकार जान और देख भाल कर परस्पर की अभिरुचि और सम्मति से विवाह करें ऐसा वेद का आदेश है।

प्राचीन समय मे माता-पिता अपनी संतानो के विवाह रूप, गुण, शील और स्वभावादि देख कर करते थे। आज की तरह नहीं। आज तो केवल एक मात्र परिडतसे जन्म कुण्डली दिखाई और वर कन्या का संयोग निश्चित कर दिया। कैसा विचार है ? कुछ समझ मे नहीं आता। जिन बातोको देखना चाहिये उन बातो की ओर तो माता-पिता ध्यान ही नहीं देते। केवल ब्राह्मण—वचन प्रमाण मान एक ओर तो शिक्षिता, सुन्दरी, कोकिल-कण्ठी और लज्जावती बालिकाएँ-मूर्ख, असभ्य, और कुरूप लड़को के साथ विवाही जा रही है और एक ओर सुन्दर, बलिष्ट, विद्वान और चतुर बालको का विवाह—अशिक्षिता और कुरूपा लड़कियो के साथ किया जा रहा है। कैसा घृणित संयोग है ? कैसा वीभत्स व्यापार है ?

आज विवाह की वेदी पर थैलियो के बीच कितने वर-और वधू मूक पशु की नाई वलिदान किये जा रहे है ! कितने बालक और बालिकाओ का भविष्य अन्धकारमय किया जा रहा है !! इसी कारण, आज हमारी सोने की गृहस्थी मिट्टी मे मिल रही है। दिन रात घर घर मे कलह चक्र चल रहा है। प्रेम का नामो-निशान नहीं है। हो भी कैसे ? हमारे यहाँ तो शिक्षा-दीक्षा की ओर ध्यान न देकर केवल दान-दहेज और लेन-देन की ओर ध्यान दिया जाता है। कन्या और वर का सम्बन्ध होना हमारे यहाँ एक व्यापार के रूप मे

परिणत हो गया। कहाँ, कितना दहेज मिलेगा? कहाँ कितना देना पडेगा? बस, इन्हीं दो बातो पर विचार होता है; न कि गुण, रूप और योग्यता पर। क्या इससे बढ़ कर भी हिन्दू-जाति का कोई नैतिक पतन हो सकता है?

\+ × × ×

बाल विवाह

उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त आज बाल-विवाह की भी धूम है। आज-कल की बारह-बारह वर्ष की गुड़ियो की सन्तान क्या बलवान विदेशियो के साथ जूझेंगीं, क्या देश का उद्धार करेंगीं और कैसे अपनी जीवन—यात्रा आनन्द पूर्वक समाप्त कर सकेंगी?

बाल—विवाह की प्रथा प्राचीन नहीं है। जान पड़ता है भारतवर्ष में इस प्रथा का प्रारम्भ यवन—साम्राज्य के समय में हुआ। मनु ने वाल-विवाह का समर्थन नहीं किया, यवन साम्राज्य के पहले भारतवर्ष में वाल-विवाह की प्रथा नहीं थी, जैसा कि धार्मिक तथा ऐतिहासिक पुस्तकों के अवलोकन करने से पता लगता है। प्राचीन समय में अधिकांश विवाह स्वयंवर द्वारा ही होते थे, और यह तभी सम्भव था, जब कन्या युवती हो।

यवनों के आक्रमण काल में कन्याओ को बचाने के लिये पराशरी और शीघ्र बोध में,—"अष्ट वर्षा भवेद् गौरी, नव वर्षा च रोहिणी" जैसे पाठ गढ़ दिये गये थे, जो आजतक प्रचलित हैं।

परन्तु अब इस समय हमें यह सोचना चाहिये कि यह कानून उस काल विशेष के लिये बनाया गया था या सदैव के लिये ? जो औषध रोग निवारण के लिये दी जाती है, उसका यह अर्थ नही कि रोग निवृत होने पर भी वह बराबर दी जाय। ऐसा करने से लाभ के बदले हानि ही उठानी पड़ती है। ठीक इसी प्रकार हिन्दू-जाति ने बाल-विवाह की प्रचारित प्रथा को उस काल के समाप्त होनें के पश्चात् भी प्रयोग में लाकर हानियाँ उठाई और आज भी उठा रही है।

कितने ही अशिक्षित माता-पिता रजोदर्शन के पूर्व ही कन्या का विवाह कर देना धर्मानुकूल समझते हैं और पूछने पर कह देते हैं कि,—"ऐसा न करने से पिता आदि को दोष लगेगा।" परन्तु; उन्हे विचारना चाहिये कि दोष किस बात का ? कन्या तो अपने पिता-माता के आधीन रहती है, वह कोई कुसंगति में तो जाती ही नहीं।

यदि कोई यह कहे कि,—"सन्तानोत्पत्ति होने का समय है" इस लिये माता-पिता को दोष लगेगा। इस पर उन्हे यह विचारना चाहिये कि रजोधर्म प्रकट होने के बाद कम से कम तीन वर्ष का समय तो कन्या को शारीरिक विकाश के लिये अवश्य ही मिलना चाहिये। हमारी इन्द्रियाँ भी तो जन्म लेते ही कोई काम नहीं करतीं। नवजात शिशु चल फिर नहीं सकता, यद्यपि उसे हाथ पैर होते हैं, वह बोल नहीं सकता, यद्यपि उसे जिह्वा है। प्रकृति के नियमानुसार कोई चीज़ जन्म लेते ही अपने काम के लिये तैयार नहीं हो जाती, उसके विकाश के लिये कुछ समय की आवश्यकता रहती है। यह

तो हमारे विज्ञान सम्बन्धी विचार हैं और इन्हीं विचारों से मिलती जुलती आज्ञा हमारे धर्माचार्य मनु ने भी दी है:—

काममामरणात्तिष्ठेद् गृहे कन्यर्तुमत्यपि ।
न चैवैनां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित् ॥

(मनु० ९।८९)

अर्थात्, चाहे रजस्वला होकर भी कन्या मरणपर्यन्त पिता के घर में ही रहे, परन्तु गुण-हीन वर के साथ उसका विवाह नहीं करना चाहिये।

परन्तु आज हजारों पण्डित बाल-विवाह की प्रथा को शास्त्रानुकूल बता कर जनता को बहका रहे हैं और समाज में विधवाओं की संख्या बढ़ा कर हानि पहुँचाने की चेष्टा कर रहे हैं। विवाहों से अपरिपक्व सन्तानो की ही भरमार और विधवाओं की ही वृद्धि होती है। सन १९२१ ई० की गणना के अनुसार हमारे भारत में १ वर्ष से लेकर १५ वर्ष तक की ३३५०१५ विधवाएँ हैं। सोचें, क्या स्पष्ट ही इसका कारण बाल-विवाह नहीं है? इस समय इंगलैण्ड मे प्रति शत बच्चो की मृत्यु संख्या जन्म से लेकर एक वर्ष तक १० के लगभग है, परन्तु हमारे भारत मे प्रति शत मृत्यु संख्या ४०। इंगलैण्ड में प्रतिशत ७ विधवाएँ होती है, परन्तु हमारे यहाँ प्रतिशत विधवाओं की संख्या २८ से कम नहीं। इस अधिकता और न्यूनता का कारण एक मात्र बाल-विवाह ही है।

सुश्रुत आदि वैदक ग्रन्थो के देखने से भी यही पता चलता है कि जब तक कन्या और वर पूर्ण युवावस्था को प्राप्त न कर लें

तब तक उनका विवाह नहीं होना चाहिये। इसलिये प्रत्येक माता पिता का यह कर्त्तव्य है कि:—

ततो वराय विदुषे, कन्या देया मनीषिभिः।
एषः सनातनः पन्थाः, ऋषिभिः परिगीयते॥

जब कन्या ब्रह्मचर्य का पालन करले अर्थात् जब वह युवती हो जाय तो उसे विद्वान वर को समर्पित करना चाहिये। यही सनातन मार्ग है और इसे ही ऋषि लोग मानते आये हैं।

इसी से मिलती जुलती आज्ञा धर्माचार्य मनु ने पुरुषों के लिये दी है:—

चतुर्थ मायुषो भागमुषित्वाद्यं गुरौद्विजः।
द्वितीय मायुषो भागं, कृतदारो गृहे वसेत्॥

आयुष्य के चार विभाग का प्रथम भाग गुरुकुल में बिता कर अर्थात् विद्या प्राप्त कर उसके द्वितीय भाग में विवाह कर गृह में वास करे।

बाल-विवाह से होने वाली कुछ हानियाँ नीचे लिख देते हैं।

(१) तेजस्वी बालक भी बाल्यावस्था के विवाह से मूर्ख तथा हतभागी बन जाता है।

(२) प्रथम तो संतान होती ही नहीं, यदि होती भी है तो रोगी और निर्बल होकर शीघ्र ही मर जाती है।

(३) बालिकाएँ रुग्णा, निर्बला, कुलटा, बुद्धिहीना होकर शीघ्र मर जाती हैं।

(४) बाल-विवाह से देश और समाज की सब से बड़ी हानि होती है।

(५) बाल-विवाह से देश में वेश्यओं की वृद्धि होती है।

× × × × ×

नववधू को ११ उपदेश

माता का कर्त्तव्य है कि विवाह होने के पश्चात् वह अपनी कन्या को अच्छे २ उपदेश सुना विदाई दे। कारण ? उस समय के दिये हुए उपदेशों पर बालिका का अटल विश्वास होता है। यह घड़ी वियोग की होती है और वियोग-स्मृति में बालिका उन मातृ-उपदेशो को स्मरण कर गौरवान्वित हो उठती है, वियोग हलका पड़ जाता है और वह उन उपदेशो को स्मरण रखती हुई दोनो कुलों को उजागर कर देती है। जापान में विवाह के दिन माता पुत्री को निम्नलिखित ११ उपदेश देती है।

(१) बेटी ! आज विवाह हो जाने के बाद तू मेरी पुत्री नहीं रहेगी आज तक तू जिस तरह मेरी और अपने पिता की आज्ञा मानती रही है, उसी तरह अब तू अपने सास-श्वसुर की आज्ञा का पालन करना।

(२) विवाह के बाद तेरा पति ही एक मात्र तेरा स्वामी होगा। उसके साथ हमेशा नम्रता और प्रेम के साथ बर्ताव करना। अपने पति की आज्ञा का अक्षरश: पालन करना, यह स्त्री का सर्वश्रेष्ठ गुण है।

(३) ससुराल के लोगों के साथ सदा विनय और सहनशीलता का व्यवहार करना।

(४) उन के साथ कभी झगड़ा मत करना; नहीं तो तू अपने पति का प्रेम खो देगी।

(५) क्रोध न करना; पति यदि कुछ अनुचित काम करे तब भी मौन ही रखना और जब पति शान्त हो तब नम्रता से उसे समझाना।

(६) बहुत बातें न करना, झूठ न बोलना, पड़ोसी की निन्दा न करना।

(७) हाथ देखने वाले ज्योतिषियों से अपने भाग्य का हाल मत पूछना।

(८) अपना गृह-कार्य मितव्ययिता से चलाना और सावधानी के साथ सब व्यवस्था ठीक रखना।

(९) अपने पिता की उच्च पदवी अथवा अमीरीपन का घमण्ड न करना; और पति के सामने पिता की अमीरी का कभी जिक्र न करना।

(१०) तू जवान है, फिर भी युवतियो के साथ ज्यादा उठ बैठ न करना (अर्थात्, वृद्ध स्त्रियों के साथ रहना ही हितकर है)।

(११) सदा ऐसे ही वस्त्र पहिनना कि जिनमे स्वच्छता और लज्जा का भाव हो। बहुत भड़कीले रँगीन वस्त्र न पहिनना।

ये उपदेश प्राचीन काल से परम्परागत चलते आये हैं।

— × × ×

गृहस्थी

गार्हस्थ्य धर्म कठिन है और इसका साधन भी कठिन ही है। क्योंकि,जितने अन्य आश्रय हैं, वे सब गार्हस्थ्य धर्म पर ही निर्भर हैं। गृहस्थाश्रम न होता तो संसार का कोई काम ही नहीं चलता, शृष्टि कर्म दुर्लभ हो जाता। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी, सन्यासी, परम-हंस, योगी और वैरागी सब इसी के आश्रय रहते हैं। प्रथम तो संतान इसी आश्रम मे होती है, फिर पालन भी सबका इसी आश्रम में होता है। कोई आश्रम ऐसा नही, जो इस आश्रमसे कुछ न कुछ आशा न रखता हो। इसलिये यह आश्रम सर्वोपरि है और इसी कारण इसमें विघ्न भी शीघ्र पड़ने का भय रहता है। इसका निर्वाह वहुत सावधानी से करना चाहिये। यह उज्वल श्वेत वस्त्र के समान है; जिसमे तनिक सा भी मैला छींटा तुरन्त ही चमक उठता है।

गृहस्थी रूपी एक गाड़ी है, जिसमे धर्मकी धूरी और सुमति और प्रीति के पहिये हैं। स्त्री पुरुप दोनो बैल हैं। यदि परिश्रम और साहस से सुमार्ग पर चले तो मनोरथ प्राप्त कर सकते हैं। नही तो अगल-बगल के गहरे गर्तों में गिरकर चकनाचूर होने का भय, कुमार्गगामी होने पर रहता है। इस आश्रम के मुख्य मुख्य कर्त्तव्य—कर्मो का उल्लेख नीचे कर दिया जाता है।

१ धर्म के साथ आजीविका के लिये धन एकत्रित करना।

२ सुपात्रो को दान देकर संसार का हित करना।

३ नित्य अपने घर मे अग्निहोत्र करना और गौ का पालन।

४ पति-पत्नी में परस्पर प्रेम और सहकारिता का भाव रखना।
५ बालकों का यथायोग्य पालन पोषण करना तथा उनकी शिक्षा का प्रबन्ध करना।
६ सरल और सदाचार युक्त जीवन बिताना।
७ माता पिता की सेवा और अतिथि सत्कार करना।

× × × ×

"स्त्रि दिव्या शोभते गृहे।" (चाणक्य नीति)

गृहिणी कर्तव्य

दिव्य गुणों वाली स्त्री घर में शोभित होती है।

१-स्त्री का कर्त्तव्य है कि घर के कामो में चतुराई युक्त सब पदार्थों के उत्तम संस्कार तथा घर की शुद्धि रक्खे और व्यय में अत्यन्त उदार रहे अर्थात् यथा-योग्य खर्च करे। सब चीजे पवित्र और पाक इस प्रकार बनावे जो औषधि रूप होकर शरीर मे रोग को न आने देवे, जो जो व्यय हो उसका हिसाब यथावत् लिखकर पति को सुना दिया करे, घर के नौकर चाकरों से यथा योग्य काम लेवे और घर के किसी काम को बिगड़ने न देवे।

२-स्त्री का सौन्दर्य-वस्त्र, आभूषण तो एक ओर रहे,-रूप रङ्ग में भी नहीं है। स्त्री का वास्तविक सौन्दर्य तो शील, लज्जा, सत्व, धर्म स्वच्छता, साधुता, सहनशीलता, मधुर भाषण और पति सेवा में ही है। इसलिये न तो अपने रूप के अभिमान में आकर किसी का अपमान ही करना चाहिये और न वस्त्रों और आभूषणों की

प्राप्ति के लिये इच्छा ही प्रकट करनी चाहिये। व्यर्थ की इच्छा प्रकट करने से क्या लाभ ?

३–कुसंग में पड़कर अपने को सदाचारी बनाये रखना लोहे के चने चबाने के समान है। अच्छी से अच्छी स्त्रियों को भी इस बात का अभिमान न करना चाहिये कि दुष्टा और कुलटा स्त्रियों की मण्डली में बैठकर अपना धर्म निभा सके। अतएव सत्संगति में रहना ही लाभदायक है। इससे सद्‌बुद्धि का उदय होता है और मन का अविवेक छूट जाता है।

४–अपने से जो बड़े हैं सास-श्वसुर इत्यादि, अवस्था मे बड़ी स्त्रियाँ तथा पति से जिनका सम्बन्ध हो, ऐसे परिचित बन्धुवर्ग इत्यादि के सामने अहंकार को त्याग दे, जिसमें उनके मन में किसी प्रकार का कष्ट अथवा इर्ष्या या स्त्री की शिकायत पति से करने का और मन मे फर्क डाल देने का मौका न मिले। इसके अलावा पति के उपार्जन किये हुए धन में से भी उनका यथोचित अंश उनको प्रदान करे। इन वातों से स्त्री सबो की आदरणीया बनी रहती है।

५–जो स्त्रियाँ स्वभाव से आलसी हैं, उनको परिश्रम के नाम से भय होता है। वे घर का काम-धाम करने में रोती हैं। इसी कारण उन्हें घर में सबो से बातें सुननी पड़ती है। परन्तु श्रम करने वाली स्त्रियाँ परिश्रम को ईश्वर का आशीर्वाद मानती हैं। वे परिश्रम द्वारा निर्मल आनन्द भोग करती हैं और उनका स्वास्थ्य भी ठीक

रहता है। परन्तु जो स्त्रियाँ परिश्रम नहीं करतीं वे अधिकांश रूप में अस्वस्थ रहती हैं। इसलिये परिश्रम ही सर्वोपरि है।

६—स्त्री को सदा शान्त स्वभाव रखना चाहिये। संसार में शान्ति बड़ी ही आनन्ददायक वस्तु है। परमेश्वर स्वयं शान्ति-स्वरूप है। फिर ऐसी अमूल्य वस्तु को कोई स्त्री क्यो छोड़े? जिस स्त्री ने शान्ति को छोड़ा उसने अपने आनन्द को हाथ से खो, दुःख मोल लिया और उसके हृदय मे क्रोध आदि शत्रु बास कर लेते हैं।

जिस स्त्री के हृदय मे क्षमा नहीं, उससे कितने ही काम चटपट में ऐसे अनुचित बन जाते है कि पीछे जन्मभर उसका पश्चात्ताप रह जाता है। कोई कोई तो यह कहती हैं कि,—"जो जो हमें गाली दे उसे यदि हम गाली न दे तो हमारी प्रतिष्ठा में बट्टा लगेगा।" पर यह उल्टी ही बात है। गाली पर गाली देने से टंटा बढ़ता है और चुप रहने से कोई जानता ही नहीं। इसलिये स्त्री के हृदय में क्षमा का वास रहना उचित है। जिसके हृदय में क्षमा रहती है, उसके हृदय में दया भी रहती है।

८—इस संसार मे कितनी ऐसी क्षुद्र स्त्रियां हैं जो कुछ शोक उपस्थित होने पर कूप में गिरकर या जल में डूबकर या अग्नि में जलकर आत्म हत्या कर बैठती हैं। यह उनकी मूर्खता है। विपत्ति-काल में धैर्य धारण और ईश्वर पर भरोसा करना चाहिये। दिन के वाद रात और रात के वाद दिन आता ही है। फिर शोक-समुद्र उमड़ने पर घवड़ाना किस वात का?

९—मानव जीवन का विचार ही सार है। सारे काम विचार से

ही वनते हैं। इसलिये विचार से काम लेने की आदत डालो; न कि हठ से।

१०-संसार हँसने और समालोचना करने की जगह है। यहाँ, एक दूसरे की चर्चा चलती ही रहती है तथा एक दूसरे को देखकर हँसता ही रहता है। इसलिये इसका बुरा मत मानो।

११-संसार, कसौटी है। यहाँ भले बुरे की पहिचान होती है। इसलिये सावधान होकर चलो।

\+ + × ×

प्रेमोपचार

प्रेम ईश्वर प्रदत्त वस्तु है। मनुष्य मात्र को उसने यह बड़ी उदारता के साथ प्रदान किया है। जिस मनुष्य के हृदय में प्रेम न हो, उसे हम हृदयहीन कह सकते हैं। प्रेम की भावना जन्म से ही मनुष्य के हृदय में बीजरूप से विद्यमान रहती है। धीरे धीरे यह बीज अंकुरित होता है और शनै. शनैः संसार की वस्तुओं पर अधिकार जमा लेता है। बच्चे का प्रेम पहले पहल अपने माता पिता पर, फिर भाई-बहन तथा स्वजनों पर और तदनन्तर संसार की अन्यान्य वस्तुओं तथा मनुष्यों पर होता है। जो जितना ही बुद्धिमान, गुणवान, सतोगुणी होता है, उतना ही उसका प्रेम भाव बढ़ता जाता है। यही कारण है कि ज्ञानी और उदारचरित स्त्री वा पुरुष सब को अपना लेते हैं, उन्हें समस्त संसार अपना परिवार सा दिखाई देने लगता है। इसी को विश्व-प्रेम कहते हैं। यह प्रेम भावना बढ़ते २

अन्त में प्रकृति की सीमा में जा पहुँचती है और याद को उसकी भी सीमा उल्लंघन कर परमात्मा में पहुंचकर उसी में तन्मय हो जाती है। इसी को शास्त्रकारों ने मोक्ष या निर्वाण कहा है।

इसलिये समझे रक्खो, प्रेम पर ही इस सृष्टि का विकाश अवलम्बित है। संसार में यदि प्रेम का अस्तित्व न होता तो बिना प्रलय हुए ही उसका सर्वनाश हो गया होता और इस धरातल पर महासागर की उत्ताल तरङ्गें क्रीड़ा करने लगतीं। कोई किसी को पहचनता भी नहीं और मुँह से बोलता भी नहीं। संसार में जो कुछ होता है, सबका कारण एक मात्र प्रेम ही है। संसार की सारी शक्तियाँ यदि पलड़े के एक ओर रख दी जाय तो भी प्रेम का पलड़ा नीचा रहेगा। प्रेम के आगे मानवी सृष्टि का तो कहना ही क्या, हिंसक जन्तुओं को भी मस्तक झुकाना पड़ता है। प्रेम का सम्बन्ध हृदय से है, रूप से नहीं। जो स्त्री व पुरुष रूप के लोभी होते हैं, उनके हृदय में प्रेम की परछायीं भी नहीं रहती। प्रेम, प्रेम ही से पहचाना जा सकता है, इसके पहिचानने का और कोई उपाय नहीं। जिसके हृदय में प्रेम का स्थान है, उसके सम्मुख संसार की सारी वस्तुएँ तुच्छ हैं। परन्तु जिसके हृदय में प्रेम नहीं, वह देव होकर भी दानव है; नर होकर भी नराधम है और चैतन्य होकर भी जड़ है।

× × × ×

सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता, भर्त्रा भार्या तथैव च ।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं, कल्याण तत्र वै ध्रुवम् ॥

दाम्पत्य-जीवन

जिस कुल में पत्नी से पति सन्तुष्ट रहता है और उसी भांति पति से पत्नी सदैव प्रसन्न रहती है, उस कुल का कल्याण होना निश्चित है ।

विवाहित स्त्री पुरुषों में परस्पर जो प्रेम पाया जाता है, उसे दाम्पत्य-प्रेम कहते हैं । संसार में जितने प्रकार के प्रेम हैं उनमें दाम्पत्य प्रेम ही श्रेष्ठ है । भाई और बहिन, माता और पुत्र, स्वामी और सेवक किंवा अन्यान्य लोगों में जो प्रेम दिखाई देता है, उससे यह सर्वथा भिन्न होता है । भाई किंवा बहिन के प्रेम में ममता, माता के प्रेम में वात्सल्य और सेवक के प्रेम में केवल सेवा-भाव इस प्रकार एक ही भाव की प्रधानता रहती है, किन्तु दाम्पत्य-प्रेम में ममता, वात्सल्य, सेवा-भाव आदि सभी भाव एकत्र पाये जाते हैं । इसलिये दाम्पत्य-प्रेम सब प्रेमो में श्रेष्ठ कहा जाता है ।

दाम्पत्य-प्रेम बड़ा ही पवित्र है । शान्ति दाता है । इसकी महिमा अपरम्पार है । इसी से संसार की प्रतिष्ठा होती है, इसी से गृहस्थी नन्दन-कानन बनती है और इसी से दो विभिन्न हृदय अभिन्नता को प्राप्त करते हैं । किन्तु यह बड़े ही दुख की बात है कि आजकल वास्तविक दाम्पत्य-प्रेम हमारे देश में बहुत ही कम दिखाई पड़ता है । हम जिधर दृष्टिपात करते हैं, उधर ही हमें इसमें कुछ न कुछ त्रुटि अवश्य दिखाई देती है । फिर इसका कारण क्या ? और इसमें किसका दोष ? हम तो इसके लिये पुरुष समाज को

ही दोषी ठहरावेगें। क्योकि पुरुष समुदाय यथेष्ट शिक्षा दीक्षा प्राप्त कर सकता है, किन्तु स्त्रियाँ उससे वञ्चित रक्खी जाती है। पुरुष शासक और स्त्रियाँ शासित समझी जाती है। स्त्रियो को सदा दासत्व के ही पाठ पढ़ाये जाते हैं। उन्हे सिखाया जाता है कि पति ही उनका जीवन सर्वस्व है, चाहे वह दुर्गुणी और अपाहिज ही क्यो न हो। किन्तु दूसरी ओर पुरुषो के मन मे ऐसे भाव भर दिये जाते है कि जिससे वे स्त्रियों को पैर की जूती समझने लगते हैं। हमारी समझ मे, स्त्री और पुरुषो की यह परिस्थिती और उनकी यह शिक्षा दीक्षा और उनके यह भाव ही उनके दम्पत्य-प्रेम में बाधा उपस्थित करते हैं।

हृदय, मनोभाव और आचरणो का साम्य ही दाम्पत्य-प्रेम की मूल भित्ति है। दाम्पत्य-प्रेम उसी अवस्था में उत्पन्न होता है, जब स्त्री और पुरुष दोनो मे किसी प्रकार का छलकपट या अन्तर नहीं रहता, जब दोनो के हृदय विशुद्ध और पवित्र होते है और जब दोनों अपने अधिकारो या अपनी स्वतन्त्रता का दुरुपयोग नही करते। प्रेम हृदय की वस्तु है। हृदय, हृदय से नहीं छिपाया जा सकता। हृदय हृदय को पहिचान लेता है। जहाँ विभिन्नता, अन्तर या छलकपट होता है, वहाँ एक दूसरे का हृदय कैसे मिल सकता है?

मानव जीवन में स्त्री और पुरुष दोनों के जीवन मे और भी अनेक घटनायें ऐसी होती हैं, जो उनके दाम्पत्य-जीवन को विशृङ्खल बना देती हैं, उनके सोने की गृहस्थी को मिट्टी मे मिला देती हैं और उनके जीवन को सदा के लिये अशान्त बना देती हैं।

सन्तान वृद्धि, अतिविहार, नाना प्रकार के रोग, काम शास्त्र की अज्ञानता आदि ऐसी ही बाते है। हमने इस पुस्तक में यथासाध्य इन बातो पर भी प्रकाश डाला है और अपने पाठक एवम् पाठिकाओ को दाम्पत्य-जीवन को सुखी बनाने के उपाय बतलाने की चेष्टा की है।

× + × +

"कोकिलानां स्वरो रूपं, स्त्रीणां रूपं पतिव्रतम्।"

(चाणक्य नीति)

पातिव्रत

कोकिला का रूप उसका स्वर और स्त्री का सौन्दर्य उसका 'पतिव्रत' होता है।

पत्नीके लिये-पति ही ब्रह्म है। उसके साथ नियमानुकूल आचरण करना ही ब्रह्मचर्य है। स्त्री पुरुष की अर्द्धाङ्गिनी होती है। अतएव पति के हित में तत्पर रहना ही उसका सनातनधर्म है। जो स्त्री अपने पति का आदर करती है तथा मन, वचन और कर्म से उसकी आज्ञा का पालन करती है, वही स्वर्ग-सुख पाती है। इस देश में प्राचीन काल मे सती सीता, सावित्री, सुलोचना, सुकन्या और अनसूया आदि अनेक पतिव्रता स्त्रिया हो गयी हैं, जिनकी कीर्ति आज भी भू—मण्डल में व्याप्त है। इस बात का साक्षी भारतीय इतिहास है कि जितनी सती, साध्वी स्त्रियाँ हिन्दू-जाति में हुईं, उतनी कहीं सुनने में भी नहीं आयीं। प्राचीन समय मे कितनी स्त्रियाँ ऐसी भी हो गयी हैं, जिन्होंने पति के प्रेम में प्राण तक दे

दिये। उनके कीर्त्ति-स्तम्भ भग्नावस्था में अब कहीं-कहीं दिखलाई पड़ते हैं।

पतिव्रता स्त्रियों के कुछ कर्तव्य नीचे लिख दिये जाते है।

(१) प्रत्येक स्त्री का कर्त्तव्य है कि वह निष्कपट और निस्वार्थ भाव से पति की सेवा करे! पति से प्रीति करना और पति की सेवा करना ही स्त्रियो का परमधर्म है और यही उनका सुहाग है। पर आजकल की स्त्रियाँ अपना सुहाग और बड़ाई— शृङ्गार करने, बहुत सा गहना पहिनने और चटकीले मटकीले मोटे किनारी के कपड़े पहिनने ओढ़ने मे ही समझती हैं। यह उनकी गहरी भूल है। स्त्री का वास्तविक सुहाग तो पति-प्रेम ही है। तुलसी दास जी ने भी स्त्रियो के पातिव्रत धर्म के विषय में कितना उच्च उपदेश लिखा है—

"एकै धर्म एक व्रत नेमा, काय, वचन, मन पति-पद प्रेमा।"

(२) स्त्री को अपने पति से कभी कड़वी बात न बोलनी चाहिये सदा नम्र स्वभाव रहे, कभी पति को ऐसा उत्तर न दे जिससे उसके मन को दुःख हो वा बुरा जान पड़े। जब कभी पति को क्रोध में देखे तो वाणी की मधुरता से उन्हे शान्त करने की चेष्टा करे। वाणी की मधुरता का प्रभाव प्रायः सभी जगह पड़ता देखा गया है। किसी कवि ने वाणी की मधुरता के विषय में कितना अच्छा उदाहरण दिया है:—

कागा काको धन हरे, कोयल काको देय।

मीठे वचन सुनाय के, जग अपनो कर लेय॥

(३) अपने पति से स्त्री को सदा सत्य बोलना चाहिये कभी कोई बात कपट वा छल की नहीं करनी चाहिये। क्योंकि ये दोनो बातें प्रीति की छुड़ाने वाली हैं, जैसे--

विलग होय रस जाय, कपट खटाई परत ही।

(४) पतिव्रता स्त्री को स्वप्न में भी पर पुरुष का ध्यान न करना चाहिये। उसे अन्य पुरुष को भ्राता, पिता और पुत्र की दृष्टि से देखना चाहिये। जो देवियाँ धर्म और कुल का विचार कर पातिव्रत धर्म निभाती हैं, उन्हे अनसूया देवी ने निकृष्ट स्त्री बतलाया है; जो स्त्रीयाँ समय न मिलने के कारण बच रहती हैं, उन्हें अधम स्त्री कहा है और जो पति को ठगकर वा धोका देकर अन्य पुरुष के साथ रति करती हैं, उन्हें सौ कल्प तक घोर नर्क मे पड़े रहना बताया है। निम्न लिखित उपदेश अनसूया जी ने सीता को दिया था:—

उत्तम के अस बस मन मांहीं, सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं॥

मध्यम परपति देखहिं कैसे, भ्राता, पिता, पुत्र निज जैसे॥

धर्म विचार समुझि कुल रहहीं, ते निकृष्ट तिय श्रुति अस कहहीं॥

बिनु अवसर भयते रह जोई, जानेहु अधम नारि जग सोई॥

पति वञ्चक परपति रति करई, रौरव नर्क कल्प शत परई॥

५—पति के विदेश रहने पर श्रृङ्गार और भोग विलास की सामग्रियों का त्याग करे और नित्य प्रति प्रातःकाल उठकर परमात्मा से पति की मंगल कामना के लिये प्रार्थना करे।

६—पति से बढ़कर पतिव्रता स्त्री के लिये दूसरा देवता ही नहीं है। इसलिये यदि स्त्री देवी और देवताओं की पूजा करना चाहती है, तो वह अपने पतिदेव की ही पूजा करे।

"पतिर्ब्रह्मा पतिर्विष्णुः पतिर्देवो महेश्वरः,
पतिश्च निर्गुणा धारो ब्रह्मरूप नमोऽस्तु ते।"

७—प्रत्येक स्त्री को उचित है कि वह अपने पति को मन्त्री बन कर परामर्श दे, दासी बन कर सेवा करे, माता बनकर भोजन करावे, शयन के समय रम्भा बन कर पति को आनन्द दे, धर्म में पति की सहायक होवे और पति के अपराधों को धरित्री बनकर क्षमा करे।

"कार्य्येषु मन्त्री करणेषु दासी।
भोज्येषु माता शयनेषु रम्भा॥
धर्म्मेषु सहाया क्षमया धरित्री।
षड्गुणा युक्ता सा धर्म्म पत्नीः॥"

८—पति के पहले सो कर उठे और पति के पीछे सोवे, यह पतिव्रता स्त्रियों का विलक्षण गुण है।

९—भर्त्तुः शुश्रूषणं स्त्रीणां-परो धर्मो ह्यमायया।
तद्बन्धूना च कल्याणः-प्रजानां चानुपोषणाम्॥

दुःशीलो दुर्भगो वृद्धो जड़ो रोग्यधनोऽपिवा ।
पतिः स्त्रीभिन हातव्यो लोकेप्सुभिरपातकी ॥
(श्रीमद्भागवतगीता)

निष्कपट होकर पति और उसके माता पिता की सेवा करना तथा प्रजा का पालन करना—यह स्त्रियों का धर्म है। पति दुष्ट स्वभाव हो, ऐश्वर्यहीन हो, वृद्ध हो, मूर्ख हो, रोगी निर्धन कैसा भी पति क्यों न हो, स्त्री अपने पति को तब तक नहीं छोड़ सकती जब तक कि वह पातकी न हो जाय।

अन्य धर्मों मे स्त्री बदबू के कारण पति को छोड़ देती है परन्तु सनातन धर्म में धनहीन, रोगी और कुष्ठी होने पर भी पति को ईश्वर तुल्य मान कर पूजने की आज्ञा है। इसलिये पति कैसा भी क्यों न हो उसका आदर सत्कार करना प्रत्येक स्त्री का धर्म है।

* * * *

पत्नीव्रत

जिस प्रकार स्त्रियों के लिये पातिव्रत धर्म का पालन करना आवश्यक है, उसी प्रकार पुरुषों के लिये पत्नीव्रत धर्म का। परमात्मा ने पुरुष स्त्री दोनों को एक ही गर्भ से उत्पन्न किया है। दोनों के जीवन का लक्ष्य भी एक ही बनाया है। दोनो को अपने शारीरिक, नैतिक और मानसिक विकाश का समान अधिकार है। फिर पुरुषों के लिये पत्नीव्रत धर्म का पालन न करना घोर अन्याय और जघन्य पक्षपात ही समझा जायगा।

हमारे यहाँ जहाँ स्त्रियो को यह कहा जाता है कि,—"चाहे पति बृद्ध, रोगी, जड़, काना-कुबड़ा, लुच्चा वा अपाहिज हो अथवा कैसा ही क्यों न हो, स्त्रियो के लिये देवता के समान पूज-नीय है, वहाँ पुरुषो का पर-स्त्री के पास जाना, वेश्याओ के तलवे चाटना कितना बड़ा पाप है? पुरुष जाति का कितना बड़ा नैतिक पतन है? हमारे भारत में आज जो ४७५००० लाख वेश्याये है, और जिनपर हमारे दरिद्र भारत का यह पुरुष-समाज प्रति वर्ष ६२०० ००,००० (बासठ करोड़) रुपये खर्च कर देता है, उसका कौन जिम्मेवार है ? क्या इस दरिद्र भारत का इतना रुपया वेश्याबाजी मे बर्बाद कर डालना पुरुष समाज का न्याय कहाँ जायगा ? पुरुषो का इस प्रकार स्वच्छन्द होकर पापाचार करना, व्यभिचार करना कितना बड़ा अन्याय है ? यदि कोई शक्ति इन पापो को दण्ड देने वाली हो, तो हमें गारत हो जाना चाहिये। इसी पापके कारण हम गारत हुए भी, परन्तु हमारी माताओ, बहिनो और देवियोंके पातिव्रतधर्म ने हमे गारत होनेसे बचा लिया।

कितने ही स्वार्थी और भेड़िये ग्रन्थकारों ने पतित पतियो को वेश्या के घर कन्धे पर चढ़ाकर ले जाने के लिये पतिव्रताओं की तारीफ की है, परन्तु वास्तव में यह उन ग्रन्थकारों का पक्षपात है, स्त्री जाति के प्रति ऐसा लिखना उन ग्रन्थकारों का घोर अन्याय है। जहाँ स्त्री जाति को स्वप्न में भी पर पुरुष का चितवन करने से रोका जाता हो वहाँ पतित पति का पत्नी के कन्धे पर चढ़कर वेश्या के

यहाँ जाना कितना बड़ा पाप है ? कितना भारी पक्षपात है ? कहाँ का न्याय है ? आप स्वयम् इसका निर्णय करे।

मैं पुरुषों से अनुरोध करता हूँ कि वे इस पापाचार को छोड़ दें। हमारे शास्त्रकारों ने कहीं भी पुरुषो को इस प्रकार पापाचार करने की स्वतन्त्रता नहीं दी है, कहीं भी पर-स्त्री और वेश्या-गमन करने के लिये नही लिखा है। मैं माताओं, बहनो और देवियों से भी सादर निवेदन करता हूँ कि वे पुरुषो को यह पापाचार छोड़ने के लिये कहे, यदि न मानें तो उन्हे ललकारें और सब समय उनकी इन हरकतों का विरोध करें। पतिव्रता स्त्री इस अपमान को कदापि सहन न करेगी।

एक वात ओर है, जिस प्रकार पति को प्रसन्न करने के लिये एक पतिव्रता स्त्रीको कितने ही नियमो का पालन करना पड़ता है, उसी प्रकार पुरुष मात्र को भी अपनी पत्नी को सन्तुष्ट रखने के लिये उन्हीं नियमो का पालन करना चाहिये, जो स्त्री—समाज के लिये वनाये गये हैं। यह न समझना चाहिये कि ये नियम केवल एक मात्र स्त्री-जाति के लिये ही हैं। स्त्री जाति को प्रसन्न और सन्तुष्ट रखने के लिये हमारे शास्त्रकारों ने पूरा जोर दिया है—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता.।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्रा फला' क्रिया ॥

जहाँ स्त्रियों का आदर होता है, वहाँ देवगण निवास करते हैं और जहाँ उनका निरादर होता है, वहाँ सारे कार्य निष्फल हो जाते हैं।

शोचन्ति जामयोयत्र, विनश्यत्याशु तत्कुलम् ।
न शोचन्ति तु यत्रैताः, वद्धते तद्धि सर्वदा ॥

जिन घरों में स्त्रियाँ कष्ट पाती हैं, वे शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। और जिस कुल में ये सुख पाती है, वे सदैव उन्नति करते हैं।

*   *   *   *   *

अनाचार

अनाचार! और भारतीय ललनाओ के साथ? किसकी मजाल है? किसकी हिम्मत है? जो इनकी ओर आँख उठाकर देख सके और अँगुली से इनकी ओर इशारा कर सके। भारतीय ललनाएँ—मर मिटेंगीं, प्राण दे देंगीं, पर प्राण रहते कौन माई का लाल है, जो इनके सतीत्व धर्म पर आघात कर सके। इतिहास इसका साक्षी है, कितनी ही रमणियो ने अपने सतीत्व धर्म की रक्षा के लिये प्राणोत्सर्ग तक कर दिया, परन्तु अन्य पुरुष की परछाहीं भी अपने पवित्र शरीर से स्पर्श न होने दिया। सन् १६५६ई० से लेकर सन १८२६ ई० तक यवनों के शासन कालमें अपने सतीत्व धर्म की रक्षा के लिये कितनी ही नारियों ने प्राणोत्सर्ग किया है, अग्नि में प्रवेश कर अपने धर्म की रक्षा की है। चित्तौड़ की रानी पद्मिनी का नाम आज भी इतिहास के पन्नों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। अल्लाउद्दीन बादशाह चित्तौड़ पर चढ़ाई कर पद्मिनी को अपनाना चाहता था, परन्तु उसकी इच्छा निष्फल गयी। अपने पति और पुत्रों के लड़ाई में मारे जाने के बाद अपने सतीत्व धर्म की रक्षा के

लिये रानी पद्मिनी असंख्य राजपूत रमणियों के साथ अग्नि में प्रवेश कर जल मरी। सर्व प्रथम पद्मिनी ने चिता-रोहण किया था। कहते है कि इतनी स्त्रियाँ उस समय सती हुई थीं कि उनकी नथे जो तौली गयीं तो ७४॥ मन उतरीं। उन्हीं की आन अब तक चिट्ठियों पर लिखी जाती हैं कि,--जो कोई अन्य की चिट्ठी खोलेगा, उसको इतनी हत्या का दोष लगेगा।

गिरी से गिरी अवस्था में भी आदर्श रमणी अपने सतीत्व धर्म की रक्षा करेगी। कुमार्ग गामी पुरुष भी सतीत्व धर्म पर अटल विश्वास और श्रद्धा रखने वाली देवी का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। माता सीता को ही देखिये---वर्षों तक दुष्ट रावण के यहाँ कैद रहीं, परन्तु क्या मजाल कि सीता का कुछ बिगाड़ सके। परन्तु फिर भी कितनी ही स्त्रियाँ यह कहने में बाज नहीं आतीं कि हम क्या करें ? दुष्टों के आगे हम अपना सतीत्व धर्म कैसे बचावें ? द्रौपदी को ही देखिये---वह एक वीर क्षत्राणी थी, राजपूत का शौर्य्य और मनोबल उसके चेहरे पर चमकता था। कीचक और जयद्रथ जैसे नराधम जब द्रौपदीको पकड़कर उसपर बलात्कार करने का प्रयत्न करते हैं, तब वह उन्हें एक वीर आदर्श रमणी की भाँति ऐसे जोर से धक्का देती है कि वे जमीन पर गिर पड़ते है और फिर उन्हे द्रौपदी से छेड़ करने का साहस ही नहीं होता है। यह क्या है ? यह है सतीत्व धर्म की शानदार विजय !

स्त्रियों को अनाचार से बचने के लिये अपने पास एक कटार अवश्यमेव रखनी चाहिये, उससे समय कुसमय पर बहुत कुछ सहा-

यता मिलती है। क्योंकि, कितने गुण्डे बदमाश इन्हीं सब फेरो में घूमते फिरते हैं। तीर्थ क्षेत्रों में, मेले ठेलों में, वा जहाँ अधिक भीड़ भाड़ होती है, ये गुण्डे अपना जाल फैलाने में बाज नहीं आते। कितने तो पापी पण्डे और पुजारी भी इस जघन्य कार्य में सम्मिलित होते देखे गये हैं। इसलिये प्रत्येक स्त्री को अपने पास बराबर कोई न कोई शस्त्र रखना ही चाहिये। जो स्त्रियाँ घूँघट के भीतर से कुछ बोलतीं भी नहीं, पाषाण प्रतिमा की तरह खड़ी रह जाती है, वे खास कर इन गुण्डों की शिकार बनती हैं और फिर उनका जीवन सदैव के लिये अन्धकारमय हो जाता है, वे कहीं की भी नहीं रहतीं।

× × × ×

परदा

वह कल्याणमयी और स्नेहमयी देवी जो घर के भीतर रह कर, गौरव के कमलासन पर बैठ कर अपनी प्रेम-ज्योति से सारे गृह को आलोकित कर रही थी, आज गर्व से कह रही है,—"अब मैं चहारदीवारियों के भीतर के ही दृश्य में अधिक दिनों तक नहीं ठहरने की तथा अब मैं पिञ्जर-बद्ध पत्नी की नाईं अधिक दिनों तक जीवन व्यतीत नहीं करने की। मुझे प्रकृति का बाह्य-सौन्दर्य भी चाहिये। मैं मुक्त होकर मुक्त वायु का सेवन करूँगी। बाहर और भीतर के योगायोग पर विचार करके अपना अधिकार देखूँगी। हमारे भी आत्मा है और हम उसका पूर्ण विकाश चाहती हैं।"

वास्तव में बात भी ऐसी ही है। पर्दे में रहते रहते स्त्रियाँ अब उठी है और उनकी अन्तरात्मायें अकुला उठी है। कारण ? पर्दे के भीतर रख कर किस प्रकार अगणित वीभत्स अत्याचार इन गृह-रमणियो के ऊपर किये जा रहे हैं, यह किसी से छिपा नहीं है। इन गृह-देवियो का स्वास्थ्य बिगड़ चुका, आत्मिक शक्ति क्षीण हो चुकी और वाह्य संसार से ये विल्कुल ही अनभिज्ञ हैं। ऐसी दशा मे यदि ये देवियाँ मुक्त होकर मुक्त वायु का सेवन करना चाहती है तो इसमें आश्चर्य्य क्या ?

पर्दा प्रथा के पोषको में यह आम विचार पाया जाता है कि हमारी स्त्री कुम्हड़ा बतिया की तरह अन्य पुरुष की दृष्टि तक से भी दूर रहे। परन्तु वे खुद स्वतन्त्रता पूर्वक इधर उधर घूमा करते हैं। अपने जीवन-सङ्गिनी के साथ इतनी क्रूरता और अविवेकता का यह व्यवहार वस्तुतः मनुष्यता के पवित्र इतिहास पट पर लाञ्छन है। पुरुष समाज स्वभावतः ही स्वार्थी और ईर्षालु है। इसीलिये तो उसने विश्वकर्त्ता की सर्वश्रेष्ठ विभूति को इस प्रकार बन्द कर के रक्खा है।

ईश्वर ने सन्तान को सभ्य नागरिक और सुशील बनाने का भार स्त्रियो पर ही डाला है। परन्तु जब माता ही वाह्य जगत की बातों से शून्य है—तब वह अपने बच्चो को क्या बतावे ? वह उन्हें लोक व्यवहार की शिक्षा कैसे दे सकती है ? रसोई घर और बच्चा घर मे रह कर ही ये काम नहीं हो सकते। वास्तव में आज भारतीय स्त्रियो का जीवन उस सुन्दर, सुगन्धित और विकसित

पुष्प की भाँति है—जो अपनी सुगन्ध के साथ २ स्वयं ही मुर्झा जाता है। स्त्रियाँ स्वभाव ही से निस्वार्थ और त्यागशील होती हैं। दया और पतिभक्ति उनका दैवी और प्राकृतिक गुण है। परन्तु पुरुष उनके इन गुणो का अनुचित प्रयोग करते हैं। इस लिये पुरुष समाज से सादर अनुरोध है कि वे इन देवियो का पर्दा हटा कर मुक्त वायु का सेवन करने की आज्ञा दें।

न्यायानुकूल उस बुराई का हटाया जाना नितान्त आवश्यक है—जो स्त्रियो की उन्नति के राह में बाधक हो और जो उनकी उन्नति की गति को शिथिल करती हो। पर्दे को बाधक समझ कर टर्की में पर्दे के विरुद्ध बगावत हुई। वहाँ के मुसलमानो में अब पर्दा प्रथा की कड़ाई इतनी ढीली पड़ गयी है कि—अब वहाँ पर्दा देखने में ही नही आता। पर्दा हटा कर टर्की ने आशातीत सफलता प्राप्त की है, विदेशों की स्त्रियाँ भी आज पर्दा न रहने के कारण आश्चर्यजनक उन्नति कर रही हैं। फिर कोई कारण दिखलाई नहीं पड़ता कि हमारी भारतीय देवियों को पर्दा हटा कर सामाजिक, सास्कृतिक और शिक्षा सम्बन्धी उन्नति करने से रोका जाय।

× × × ×

पर्दे से हानि

ये तो पर्दे के विरुद्ध भावुक बाते थीं। पर्दे का साधारण स्वास्थ्य पर भी अत्यन्त घातक प्रभाव पड़ता है। यक्ष्मा रोग के एक विद्वान चिकित्सक का कथन है कि पर्दा नशीन औरतोंमें यक्ष्मा बड़ी शीघ्रता से फैलता है। उन्हे, दिनो, हफ्तो, और महीनो खुली हवा में सास लेना नसीब नहीं होता, वे अपने घर की चहारदीवारी में बन्द रहकर स्वास्थ्य को उन्नत करने के लिये कोई व्यायाम नहीं कर सकती। घरों में बैठे बैठे अग्निमांद्य और अजीर्ण जैसे रोग हो जाते हैं। कहने का मतलव यह है कि उनके चारों ओर सुस्ती और आलस्य का ही साम्राज्य रहता है। यत्रा में तो उनकी दशा और भी शोचनीय हो जाती है। न बिचारियो को बैठने की सुविधा होती है, न खाने पीने की और न नहाने आदि की। पर्दे की सबसे बड़ी हानि यह है कि इससे स्त्रियो में आत्मावलम्बन और साहस पैदा नहीं होता और इसी कारण इन्हे जरा जरा सी बातों पर पुरुपो की सहायता पर निर्भर रहना पड़ता है। अतः पुरुषो का यह मुख्य कर्त्तव्य है कि वे इस घातक प्रथा का उन्मूलन करने में उद्योग करें और स्त्रियो को साहस दें।

× × × ×

लज्जा

कितनी स्त्रियाँ ऐसी भी हैं जो पुरुपो के कहने पर भी पर्दा हटाना नहीं चाहतीं और पर्दा न हटाने का कारण पूछने पर कह देती हैं कि—लज्जा के लिये पर्दे की आवश्यकता है और इनकी

यह आवश्यकता यहाँ तक देखी गयी है कि ये स्त्रियो से भी पर्दा कर बैठती हैं। यह स्त्रियों की मूर्खता है। लज्जा के लिये पर्दे की आवश्यकता नहीं ! लज्जा यही नहीं कि डेढ़ हाथ का घूँघट खींच लिया और मन में कुछ लाज नहीं रक्खी। लज्जा तो मन की ही है। घूँघट न निकाल खुले मुँह रहने में कुछ डर नहीं। परन्तु मन की निर्लज्जता को प्रथम ही त्याग देना चाहिये। क्योंकि यदि कोई स्त्री मन की निर्लज्जता को न त्याग सकी तो यही कहावत चरितार्थ होगी,—"यह खेलें कुल की वधू, टट्टी ओट शिकार।"

\+ \+ \+ \+

सतीत्व

कितने स्त्री पुरुष यह भी कहते पाये जाते हैं कि स्त्रियाँ पर्दे के भीतर रह कर ही अपने सतीत्व की रक्षा कर सकती हैं। यह विचार समाज को रसातल में पहुँचाने वाला है। आज भारत के जिस प्रान्त और जिस जाति में पर्दे की प्रथा नही है, क्या उस जाति की स्त्रियाँ अपने सतीत्व धर्म की रक्षा नहीं करतीं ? ऐसी स्त्रियाँ तो पर्दे वाली स्त्रियों से विशेष रूप मे अपने सतीत्व की रक्षा कर सकती हैं। महाराष्ट्र प्रान्त को ही लीजिये, वहाँ की स्त्रियाँ पर्दा भी नही करतीं और उनका पतिव्रत धर्म भी आज सराहनीय गिना जाता है।

\+ \+ \+ \+

बुरी दृष्टि

कितने पुरुष और स्त्रियाँ यह कहती पायी जाती हैं कि पर्दा न रहने से उनकी ओर हर कोई बुरी दृष्टि से देखेगा। यह विचार भी वास्तव में ठीक नही। पर्दे वाली स्त्रियों की ओर ही लोग आँखें फाड़ फाड़कर देखते हैं। जो स्त्रियाँ खुले मुँह रहती हैं, उनकी ओर या तो कोई देखता ही नहीं यदि कोई देखता भी है, तो बस सिर्फ एक बार। पर्दा करने वाली स्त्रियो में एक और बुराई पायी जाती है कि वे घरवालो से तो पर्दा करती हैं और नौकर चाकरों से पर्दा नही करतीं तो वे घरवालो से क्यो परदा करती हैं ?

× × × ×

पर्दे का इतिहास

पर्दा प्रथा के विषय मे यह निश्चय करना असम्भव है कि यह प्रथा कब से और कहाँ से आरम्भ हुई ? परन्तु यह निश्चय है कि यह प्रथा शास्त्रनुमोदित नहीं है। लोग कहते हैं कि मुसलमानों का अत्याचार बढ़ जाने पर वे रूपवती हिन्दू स्त्रियो को जबर्दस्ती पकड़ कर ले जाते थे। इसलिये मुसलमानो की कामुकता और पैशाचिकता से बचने के लिये हिन्दुओं ने पर्दा प्रथा का अनुसरण किया था। हो सकता है, इसमें बहुत कुछ सचाई हो; किन्तु यदि यही कारण होता तो मुसलमानों में पर्दा क्यों होता और वह भी इस भयङ्कर रूप से जिसे हिन्दुओ ने अब तक भी ग्रहण नहीं किया है। तो अनुमान है कि मुसलमान इस प्रथा को अरब से अपने साथ भारतवर्ष मे लाये थे और हिन्दुओं का उनके साथ घनिष्ट

सम्वन्ध रहने के कारण तथा मुसलमानों में विशेष कामुकता और धर्मान्धता रहने के कारण और इस भय से भी कि पर्दे के कारण उन-पर ऐसे विचार वाले दुष्टों की नजर न पड़े, हिन्दुओं ने इस प्रथा को ग्रहण कर लिया था। इसी कारण अब तक भारत के जिन जिन प्रान्तों में मुसलमानो का विशेष आवागमन हुआ, वहाँ अब तक और प्रान्तों की अपेक्षा विशेष रूप मे पर्दे की प्रथा विद्यमान है।

* पर्दा प्रथा हमारे भारत में नही थी। कैकई का राजा दशरथ के साथ युद्ध में जाना, मण्डन मिश्र की धर्म-पत्नी सरस्वती देवी का शङ्कराचार्य और मण्डन मिश्र के शास्त्रार्थ में मध्यस्थ बनना, द्रौपदी का कौरवो की भरी सभा में चीरहरण रोकने के लिये

---

* कुछ लोगों का यह भी कहना है कि पर्दा प्राचीन समय में भी था, जैसा कि कालिदास और महाकवि भास के नाटकों के देखने से पता लगता है।

"जाते मुहूर्तं मा लज्जस्व ! अपनेष्यामि तावत्ते
अवगुण्ठनं ततास्त्वं भर्ता अभिज्ञास्यति" (कालिदास)

"मैथिलि अपनीयता मवगुण्ठनम्
स्वैरहि पश्यन्तु कलत्र मेतत्
बाष्पाकुलाक्षैर्वदनैर्भवन्तः
अदोषदृश्या हि भवन्ति नार्यो
यज्ञे विवाहे व्यसने वने च।" (भास)

अपने श्वसुर भीष्म पितामह से प्रार्थना करना इसका काफी प्रमाण है। यदि आजकल की तरह उस समय यह प्रथा प्रचलित होती तो इन देवियो को इस प्रकार सभा में बोलने का, युद्ध में जाने का, तथा मध्यस्थ बनने का साहस ही नहीं होता। महाराणी सीता, लक्ष्मी, सरस्वती और सावित्री जैसी प्रातः स्मरणीय देवियाँ कभी पर्दा नहीं करती थीं। इसी प्रकार महाराणी अहिल्याबाई, ताराबाई कर्मदेवी और रूपनगर की वीर राजकन्या अपने पीछे चमकता इतिहास छोड़ गयी है, ये पर्दा नहीं करती थीं। यहीं क्यो, मुसलमानो के आने के कुछ ही समय पूर्व तक क्षत्रियों में स्वयम्बर की प्रथा विद्यमान थी। पृथ्वीराज का संयोगिता के साथ विवाह इसका

महाकवि रचित शिशुपाल वध में भी पर्दे की रिवाज का पता लगता है। और ये कविगण मुसलमानी शासन काल के बहुत पहले से हुए हैं। इसलिये यह निश्चय करना असम्भव है कि मुसलमानों के पहले पर्दे की प्रथा थी या नहीं। हाँ, यह हो सकता है कि उस समय पर्दे की रिवाज सारी प्रजाओं में न रही हो। आज भी जिस प्रकार विदेशी रीति-रिवाजों का असर विशेष कर ऊपर वर्ग के लोगों पर ही होता है, उसी प्रकार अनुमान किया जा सकता है कि कालिदास के समय में या और कुछ इधर उधर भारतवर्ष में यह मान्यता फैल गयी हो कि राजा की रानियों को जनाने में ही रहना चाहिये, जैसा कि किसी समय ग्रीस देश की कुलांगनायें छतसे नीचे नहीं उतरती थीं।

(लेखक)

प्रमाण है। अतः यह बात निश्चित सी है कि मुसलमानो के आगमन के पूर्व भारतवर्ष में पर्दा प्रथा का नामोनिशान नही था। अतः जिस किसी कारण से भी हो, जब कि इस समय लोग इस प्रथा की बुराइयो को किसी प्रकार से भी तर्क का सहारा नहीं देते तो इसका बनाये रखना महिला समाज के लिये भयंकर अत्याचार और नाशकारी है।

× × × ×

पर्दा निवारण के लिये रामचन्द्रजी की सम्मति

जिस समय विभीषण माता जानकी को पालकी में बैठाकर घटाटोप पर्दा कर रामचन्द्रजी के पास ले जा रहा था उस समय विभीषण से रामचन्द्रजी ने स्वर्णाक्षरों में अङ्कित करने वाले ये शब्द कहे थे,—"स्त्रियों के लिये न घर, न वस्त्र और न राजसत्कार रूपी पर्दे की आवश्यकता है, स्त्रियों का वास्तविक पर्दा तो उनका शुद्ध आचरण है।"

" न वस्त्राणि न गृहाणि,
न प्रकारस्तिरस्क्रिया ।
नेदृशा राज सत्कारा,
वृतमावरणं स्त्रियः ॥ " (वाल्मीकि रामायण)

अन्तिम निर्णय

आज देश में अल्ला-उद्दीन और अकबर जैसे कामी बादशाहों का राज्य नहीं है। आज भारत में चारों ओर एक ही प्रकार की

हवा बह रही है। घरों की चहारदीवारी में बन्द रहने वाली स्त्रियाँ आज समर प्राङ्गण में रण-चण्डी का रूप धारण कर अपने सर्वस्व तक की बलि दे रही है और वे उन्नति के यथा सम्भव उच्चतम शिखर तक पहुँचने की चेष्टा कर रही हैं, वहाँ यह रक्त-शोषिणी प्रथा क्यों जारी रहे? हम हिन्दू हैं, हमारा धर्म, हमारी संस्कृति पर्दा प्रथा की कदापि आज्ञा नहीं देती। इसलिये जितनी जल्दी हो सके इस नाशकारिणी प्रथा का अन्त होना चाहिये।

*　　*　　*　　*

स्वतन्त्रता और समानाधिकार

अपनी इच्छा की बलि देकर पति की दासता ही प्राचीन हिन्दू स्त्रियो का लक्ष्य रहा है। पर अब संसार के अन्यान्य राष्ट्रों की लहर के साथ बहकर हमारी देवियाँ स्त्री पुरुषो के समानाधिकार पर जोर देने लगी हैं। बँगला और हिन्दी मासिक पत्रो मे इस सम्बन्ध में स्त्रियो द्वारा लिखित जो लेख निकलते है, उन्हे पढ़ने से समझ में आने लगता है कि हवा का बहाव किस ओर है। बंगाल की ग्रेजुएट महिलाएँ तो अपने लेखो मे इस हद तक आगे बढ़ गयी है कि उनकी राय में स्त्री को एकदम स्वतन्त्र, पति की इच्छा से बिल्कुल निरपेक्ष रहकर अपनी इच्छानुकूल (यथेच्छाचरण) करने की स्वाधीनता होनी चाहिये। पुरुषों के साथ नाचने और रंगालयों मे घुसकर अभिनय करने पर भी अनेक बंग महिलाएँ जोर दे रही हैं। हिन्दी जगत् की मिडिल पास,

ललनाएँ यद्यपि इतनी दूर जाने का साहस अभी तक नहीं बटोर सकी हैं तथापि पति की आधीनता में रहने के आदेश का खण्डन वे बड़े जोरो से कर रही हैं और कहती हैं कि जब पुरुष समाज स्वेच्छापूर्वक सभी काम कर सकता है, तब स्त्रियों को भी उसी तरह स्वतन्त्रता क्यों नहीं प्रदान की जाती ?

हम स्त्री स्वातन्त्र्य और स्त्री शिक्षा के समर्थक होने पर भी बतला देना चाहते हैं कि दाम्पत्य-प्रेम की अभिवृद्धि के लिये अथवा पर्दा त्यागने पर भी सीता दमयन्ती का स्निग्ध —करुणा आदर्श बनाये रखने के लिये, ये बातें उतनी आवश्यक नहीं हैं, जितना पुरुषो के स्वेच्छाचार का नियन्त्रण। स्त्रियो का इस प्रकार की स्वतन्त्रता चाहने की अपेक्षा तो पुरुषो के स्वेच्छाचार पर नियन्त्रण रखना ही हमारे समाज के लिये अधिक हितकर और वाञ्छनीय है। जिस प्रकार स्वतन्त्र रहने के कारण पुरुष समाज पतित और स्वेच्छाचारी हो गया है, उसी तरह स्त्रियो के लिये भी ऐसी स्वतन्त्रता घातक सिद्ध हो सकती है। भारत की स्त्रियाँ अपने पिता, पति और पुत्र के आधीन रहने के कारण अब भी देवियाँ बनी हुई हैं। वे अपने आदर्श से विचलित नही हुई। किन्तु पुरुष समाज आदर्श से नीचे गिर गया है—राक्षसों की श्रेणी में परिगणित करने योग्य हो गया है। स्त्रियों में अब भी घर घर सीता और सावित्री जैसी देवियाँ दिखाई देती है, परन्तु पुरुषो मे राम जैसा कोई एक पत्नी व्रतधारी मुश्किल से ढूँढने पर मिलेगा। ऐसी

अवस्था में हम स्त्रियो की परन्त्रता को उतनी घातक नहीं कह संकते, जितनी पुरुषो की स्वतन्त्रता या निरंकुशता को।

पाश्चात्य देश बड़े उन्नत कहे जाते हैं। वहाँ स्त्री और पुरुषों को समान स्वतन्त्रता प्राप्त है। परन्तु संसार की गति विधि से परिचित रहने वाले पाठक और पाठिकाओ को यह न बतलाना पड़ेगा कि उनकी नैतिक अवस्था कितनी पतित हुआ करती है वहाँ स्त्री और पुरुषो का विवाह एक खेल हो गया है। तलाक का बजार दिन पर दिन गरम होता जा रहा है। कभी कभी तो व्याह होने के बाद पहले ही सप्ताह में स्त्री पुरुष एक दूसरे को तलाक देकर अलग हो जाते है। स्वतन्त्रता और स्वेच्छाचार के कारण उनकी रुचि ऐसी विचित्र होजाती है कि उन्हे उपयुक्त जीवन संगिनी ही नही मिलती। इस स्वतन्त्रता के कारण वहाँ के लोग आजीवन दुखी ही बने रहते हैं। वहाँ न जाने कितने युवक और युवतियो का जीवन संगियो को बदलते ही बदलते पूर्ण हो जाता है। हम नहीं समझते कि वे क्षण-भर के लिये भी मानसिक शान्ति अनुभव करते हों।

हमारे यहाँ स्त्री पुरुष की बदलौवल नहीं हो सकती। विवाह होने के बाद पति पत्नी को तलाक नहीं दे सकता और पत्नी पति को तलाक नहीं दे सकती। ऐसी दशा में पाश्चात्य स्त्रियो के ढंग की स्वतन्त्रता प्राप्त करने की इच्छा प्रकट करनी हमारे देश और प्राचीन देवियों के आदर्श के लिये कितनी घातक सिद्ध होगी, आप स्वयम् इसका निर्णय करें।

इङ्गलैण्ड में तो स्त्रियो की स्वतन्त्रता यहाँ तक बढ गयी है कि

समाज को सुधार की ओर आगे बढ़ने से रोक किनारे पर फेंकने का यत्न करना प्रारम्भ कर दिया है—अतएव वहाँ समाज की गति ऐसी डवाँडोल हो रही है कि, वह पीछे की ओर मुड़ना चाहती है। उदाहरण के लिये, वहाँ पचास और साठ वर्ष की बूढ़ी ने पैंतीस और चालीस वर्ष के युवको से व्याह किया, कुमारियो के गर्भ से बच्चे पैदा होने लगे, यहाँ तक कि उन स्त्रियो की स्वतन्त्रता ने निर्लज्जता का रूप धारण कर लिया है, जिससे व्यभिचार का बाजार गर्म हो उठा और समाज को विश्रृङ्खल तथा विकृत करना शुरू कर दिया। वहाँ पार्लमेन्ट की सदस्यता के लिये महिला उमीदवारो ने स्वतन्त्रता का कैसा दुरुपयोग किया है—इसकी कल्पना कर आज वहाँ के दूरदर्शी राजनीतिज्ञ किसी भावी भय की आशङ्का से कांप उठते हैं। हमें तो ऐसा प्रतीत होता है कि वहाँ की स्त्रियाँ समाज को आगे बढ़ाने के बदले अपनी स्वतन्त्रता का दुरुपयोग करने के कारण उलटा देना चाहती हैं। हमारे देशवासी और हमारी भारतीय महिलाएँ तो ऐसी स्वतन्त्रता को शायद दूर से ही नमस्कार करना पसन्द करेंगी।

इसलिये हमारी माताओं, वहनों, और देवियों को पाश्चात्य स्त्रियों की स्वतन्त्रता का अनुकरण न कर महाराष्ट्र प्रान्त की स्त्रियों का अनुकरण करना चाहिये। महाराष्ट्र स्त्रियों का शान्त-आदर्श अखण्डरूप में अवतक वर्तमान है। मुसलमानी राज्य के समय में भी महाराष्ट्र देश की स्त्रियो में कभी पर्दा नहीं था और अब भी नहीं है। अर्थात् पर्दाहीन होकर रहना उनका एक सहज स्वभाविक धर्म सा हो गया है। स्त्री-शिक्षा का प्रचार वहाँ भारत के किसी प्रान्त से

कम नहीं, बल्कि अधिक ही है, पर वहाँ की महिलाए ग्रेजुएट होने परभी अपना सकरुण, स्निग्ध शान्त भाव नहीं छोड़ना चाहतीं। देश के सभी आन्दोलनो में उन्होने भाग लिया है और लेती हैं और उन्हों ने मताधिकार भी प्राप्त किया है पर गृहलक्ष्मी की जो महिमा उनकी आत्माओ मे व्याप्त है, उसे वे कभी नहीं छोड़तीं। उनका यह आदर्श यदि हमारी नव जागृत महिलाओ में किसी रूप से प्रचारित हो सके तो देश एक सङ्कटजनक स्थिति से त्राण पा सकता है। इसका असर यह होगा कि स्त्रियाँ पूर्णतया स्वतन्त्र भी होंगी, समानाधिकार भी प्राप्त करेंगो और साथ ही अन्तरात्मा के प्रति विमुख भी नही होना चाहेगी। धर्म तथा कर्म, हृदय तथा बुद्धि का सामञ्जस्य प्राप्त करके वे देश को मङ्गलमय बनाकर वास्तविक उन्नति की ओर ले चलेंगी। धर्माचार्य मनु, स्त्रियो की स्वतन्त्रता पर इस प्रकार अपनी सम्मति प्रकट करते है:—

पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति॥

अर्थात्, स्त्रियो को वचपन मे पिता की रक्षा में, युवावस्था प्राप्त होने पर पति की रक्षा मे और वृद्धावस्था प्राप्त होने पर पुत्र की रक्षा में रहना चाहिये। इन तीनों की इच्छा से बिल्कुल निरपेक्ष रहकर अपनी इच्छानुकूल स्वतन्त्रता स्त्रियो के लिये घातक है।

भारत भगनियों! देखो, अपने धर्माचार्य मनु की सम्मति? इसलिये स्वतन्त्रता तो प्राप्त करो परन्तु पाश्चात्य स्त्रियों की भी

नहीं, अन्यथा तुम्हे ही कष्ट भोगना पड़ेगा और अपने कोमल माधुर्य को खोकर तुम विश्व में अशान्ति फैलाओगी, समाज को उन्नति की ओर न ले जाकर अवनति के अंधेरे गर्त्त में गिरा दोगी।

देवियो, तुम्हारे लिये एक विशेष उपयोगी बात स्मरण रखने योग्य और है और वह यह है कि पिता, पति और पुत्र के आधीन रहते हुए भी तुम्हारा अधिकार किसी बात में भी पुरुषो से कम नहीं है। वैदिक धर्म में स्त्रियों के अधिकार पर किसी भी प्रकार की रुकावट नहीं है। स्त्रियो को पुरुषो की नाईं अपनी शक्ति को विकसित करने का पूर्ण अधिकार है। जो कुछ पुरुष प्राप्त कर सकता है, वह स्त्री भी प्राप्त कर सकती है। जहाँ पुरुष पहुँच सकता है वहाँ स्त्री भी पहुँच सकती है। दोनो के अधिकार (Rights) समान हैं।

यदि हम स्त्री-पुरुष सम्बन्धी वेद के सारे प्रकरणो को मिलाकर पढ़ें और उनकी भिन्न भिन्न शिक्षाओं का समन्वय करें तो हमें उनसे एक विशेष निर्देष निकलता प्रतीत होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वेद स्त्रियों की सेवा में एक डेपुटेशन ले जाते हों और उनसे कहते हों कि देवियो,—"अधिकार और हक की दृष्टि से तुम सर्वथा पुरुषो के समान हो, तुम्हारे हक छीने या रोके नहीं जा सकते। तुम जो चाहो बन सकती और कर सकती हो।" प्रमाण स्वरूप कुछ सूक्त यहाँ उद्धृत किये जाते हैं:—

(१) ब्रह्मचर्येण कन्या युवानां विन्दते पतिम्। अर्थात् कन्या को भी ब्रह्मचर्य का जीवन बिता करके ही विवाहित जीवन मे प्रवेश करना चाहिये।

कन्या के ब्रह्मचर्य से जीवन बिताने का अभिप्राय यह है कि वह ब्रह्मचारी के सदृश ही कर्त्तव्य-कर्म को पूरा करे अर्थात् जो कुछ ब्रह्मचारी के लिये जानना और करना आवश्यक है उसे जाने और करे। इस प्रकार हम देखते है कि इस सूक्त में बालिकाओं की शिक्षा पर उतना ही बल दिया गया है, जितना कि बालकों की शिक्षा पर।

(२) (अथर्व० १४।२।६६) मैं ज्ञानवान हूँ, तूँ भी ज्ञानवती है। मैं सामवेद हूँ, तूँ ऋग्वेद है।

(३) जिन्होने गम्भीरता से वेदों का स्वाध्याय किया है, उन्हे पता है कि वेद के राजनैतिक प्रकरणो में राष्ट्र का प्रबन्ध ठीक ढंग से चलाने के लिये प्रत्येक राज्य में सभा और समिति नाम की दो सभाओ के स्थापित करने की आज्ञा है। अथर्व० ७।३८।४ और १२।३।५२ में क्रमशः सभा और समिति में जाकर स्त्रियो के भाग लेने और बोलने का वर्णन आया है। जब कोई स्त्री सभा और समिति में जा सकती है और बोल सकती है, तब वह राष्ट्र के किसी भी ऊँचे ऊँचे पद को सुशोभित करने के लिये भी चुनी जा सकती है। यह स्पष्ट ही है। इसी से मिलता जुलता ऋग्वेद के १० वें सूक्त का सारांश यहाँ दिया जाता है। वैदिक धर्म में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति को समझने मे उससे अच्छी सहायता मिलेगी।

"एक गृह-पत्नी प्रातः काल उठते ही अपने उद्गार प्रकट करती है:—"यह सूर्य उदय हुआ है, इसके साथ ही मेरा सौभाग्य भी ऊँचा चढ़ निकला है। मैं अपने समाज और घर की ध्वजा हूँ।

मैं भारी व्याख्यात्री हूँ। मेरे पुत्र शत्रु विजयी हैं। मेरी पुत्री संसार में चमकती है। मैं स्वयं शत्रुओं को जीतने वाली हूँ। मेरे पति का असीम यश है। मैंने वह त्याग किया है जिससे इन्द्र विजय पाता है। मुझे भी विजय मिली है। मैंने अपने शत्रु निःशेष कर दिये हैं।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि वैदिक धर्म में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति पर किसी भी प्रकार की रुकावट नहीं है। उसे अपनी शक्ति को विकसित करके संसार में कुछ भी बनने और करने का अधिकार है। उसके सब क्षेत्रों में पुरुष के समान अधिकार हैं। अतः देवियो, तुम अपने हृदय में यह मत सोचो कि हमारे अधिकार पुरुषों से कम हैं। परन्तु इस बात का भी ध्यान रक्खो कि इस अधिकार के नशे में तुम्हारी स्वतन्त्रता का कभी दुरुपयोग न हो। नहीं तो समाज और देश को उन्नत करने की अपेक्षा तुम अवनति की ओर ले जाओगी और भारतवर्ष की गुण-गरिमा सदव के लिये नष्ट हो जायगी। भारतवर्ष अब भी नारी जाति के सतीत्व, पतीत्व और आदर्श पर अभिमान कर सकता है। इसलिये तुम्हारी धमनियों में सीता सविश्री आदि देवियों का जो पवित्र रक्त प्रवाहित हो रहा है, उसे ही प्रवाहित होने दो और अपने करुण एवं स्निग्ध आदर्श से फिर एकबार भारतवर्ष को सचेत कर दो। इसी में सब का मंगल है।

* * * * *

पुरुषों से-
दो शब्द

पुरुषो ! स्त्रियो को गुलाम बनाकर आप ने सब से बड़ा पाप किया है। ये स्त्रियाँ हमारे ही घरों में पैदा होतीं, हमारे ही माता-पिता के खून और मास से बनतीं, हमारे ही साथ खाती पीती और बड़ी होती हैं। पर वे जीवन, सामाजिकता और मानवीयता के सभी अधिकारो से वञ्चित रहती हैं। उन्हे न पिता की सम्पत्ति में कुछ अधिकार है, न पति की सम्पत्ति में; उन्हे न विद्या पढ़ने का अधिकार है और न किसी विषय पर अपनी सम्मति प्रकट करने का। जब कि हमारे पुत्र स्कूलों, कालेजो में बड़ी बड़ी विद्यायें पढ़ते और संसार के युद्ध में योद्धा बनने की तैयारी करते हैं, तब हमारी पुत्रियाँ घरों में सुस्त उपेक्षित भाव से पड़ी हुई जूठे वर्तन मांजती और घर भर के बचे हुए जूठे टुकड़े खाती हैं। जब हमारे पुत्र स्वाधीनता के प्रकाश में छाती फुलाकर देशभक्ति, विज्ञान, साहित्य, और कला-कौशल के क्षेत्रों में मतिष्क का विकास करते हैं, तब वे बदनसीब किसी नालायक लड़के के सुपुर्द कर दी जाती हैं, इसलिये कि वे उसकी और उसके उसके आदमियों की गुलामी करे, जूतियाँ लात और गालियाँ खायँ, उसके पाशविक-वासना की दासी बनें, कच्ची उम्र में बच्चे जनें और भरी जवानी में मर जायँ या विधवा हो जायँ। मध्यकाल में यद्यपि कितनी स्त्रियाँ अपनी इच्छा से सती हुई थी, परन्तु कितनी स्त्रियों को सती होने के प्रति अनिच्छा प्रकट करने पर भी हिन्दुओं ने मुर्दों के साथ जिन्दा फूँक दिया और उसे धर्म बताया गया है।

मैं पुरुषों से पूछता हूँ, इन पर इस प्रकार का जघन्य अत्याचार करने का कारण क्या ? स्त्रियाँ, जो हमारे बच्चों की मातायें हैं, उन बच्चो की जो हमारे भविष्य में महाराष्ट्र की सम्पत्ति हैं, वे जब पतित, अधम, मूर्खा, दासी तथा अपने अधिकार से च्युत कर दी गयीं, तो क्या वे तेजस्वी, दिग्विजयी पुत्र पैदा कर सकती हैं ? क्या देश में आज कौशिल्या, सुमित्रा, शकुन्तला और कुन्ती जैसी मातायें जन्म लेती हैं ? हाय ! अधम, पाखण्डी और स्वार्थी पुरुषपशुओं ने देश की माताओं को अपनी हविश और पशुवृत्ति का दास बना डाला !! और इस प्रकार देश सुपुत्रों से हीन हो गया !!!

पुरुषो ! प्राचीन समय की ओर दृष्टि डालो, राम, लक्ष्मण, पाण्डव, ध्रुव और भरत सरीखे वीर पुत्र-रत्न इन माताओं की गोद में ही शिक्षा पाकर यशस्वी हुए हैं । पं० शोभारामजी धेनुसेवक ने इस विषय पर बहुत अच्छी कविता लिखी है । पाठक और पाठिकाओं की जानकारी के लिये उस कविता को यहाँ पर अङ्कित कर देना बहुत आवश्यक है ।

जिस भारत के नाम से भारत बसा,
उसके पराक्रम को विचारो तो सही ।
उस सिंह विजयी वीर बालक की कथा,
अभिमान से अब भी भरत-भू गा रही ॥
किस ने भरी थी भावनायें शौर्य्य की,
उर में भरत के आर्यो ! सोचो भला

निर्माणकर्त्री शिशु भरत के भाग्य की,
थी वीर माता साध्वी शकुन्तला ॥ १ ॥
आदर्श भ्राता जो कहाते आज भी,
बन्धु-हित जिनका समर्पित माथ था ।
विजयी बनाने में तनय सौमित्र को,
देवी सुमित्रा का ही शिक्षित हाथ था ॥
बनते नहीं भीमार्जुन भी रण जयी,
भरती न उर में वीर भावों को प्रथा ।
शोक ! फिर भी कह रहे हैं आज हम,
देवियों को ज्ञान देना है वृथा ॥ २ ॥
खिलती नहीं संसार में ऋषि-भूमि की,
आलोकप्रद कमनीय कीरति क्यारियाँ ॥
लेती नहीं जो जन्म भारतवर्ष में,
पूज्य सावित्री सी विदुषी नारियाँ ॥
इन देवियो से ही सुपथ विस्तीर्ण था,
आर्यों के यश अमित उत्कर्ष का ।
सौख्य रवि सौभाग्य निर्मल व्योम में,
था प्रकाशित भव्य भारतवर्ष का ॥ ३ ॥
जो बनी थीं साधिका-सुख योग की,
थीं बनीं महिलाएँ मणि की राशियाँ ।
संगिनी अब बन रहीं बस भोग की,
और कुछ यदि तो गृहों की दासियाँ ॥

तम तेजवत् अब दिख रही विपरीत हा,
देवियों की दीनता-दायक दशा।
जिन से भरत-भू रत्नगर्भा थी कभी,
वन रही अब आज उनसे कर्कशा ॥ ४ ॥
मूर्ख माताओं से पल कर पुत्र क्यों,
योग्य होंगे सोचने की बात है।
दर्श दे सकते दिवाकर क्या वहाँ,
तममय जहाँ फैली अमावस रात है ॥
गृहणियों को हम गिराकर गिर गये,
हतभाग्य हो दुर्भाग्य से घिर गये।
आर्य अवनत हो पतन पर फिर गये ॥ ५ ॥
सन्मान से ये रमणियाँ रमती जहाँ,
बनती यहाँ सब सम्पदाएँ सेवियाँ।
पददलित तुम भी रहोगे तब तलक,
पददलित जब तक रहेंगी देवियाँ ॥
उर-मंदिरों में नारियों के प्रेम से,
आर्यों दीपक जला दो ज्ञान का।
भूलो इसे मत तुम सुशिक्षित नारियाँ,
हेतु बनती हैं स्वदेशोत्थान का ॥ ६ ॥

पुरुषो ! अपने विचारों में परिवर्तन करो, अपने कठोर और कलुशित हृदय मे दया का श्रोत फूटने दो। तुमने वहुत दिनो तक स्त्री-जाति पर अत्याचार किया है, तुम बहुत दिनों से स्त्री-जाति

को पददलित करते आ रहे हो। अब भी समय है, सँभल जाओ। नहीं तो याद रक्खो! तुम्हारा शेष अस्तित्व लोप हो जायगा, तुम्हारी हस्ती दुनियाँ से नेस्तनाबूद हो जायगी। जिन्हें तुम अपनी विषय-वासनाओं की तृप्ति के लिये पिकवैनी, सुकेशी आदि मधुर और स्निग्ध विशेषणोंसे पुकारते आ रहे हो, वे तुम्हारी इस कविता को ठुकरा कर तुम्हारे प्रति विद्रोह कर देंगी, रण-चण्डी का रूप धरकर क्रान्ति उत्पन्न कर देंगी, उस समय तुम्हारे किये धिये कुछ न हो सकेगा। इसलिये अब भी इन देवियों पर पाशविक अत्याचार करना छोड़ो, इन्हे मुक्त होकर मुक्त वायु का सेवन करने दो, बाहर और भीतर के योगायोग पर विचार करने दो और इन्हे इनका उचित और न्यायपूर्ण अधिकार दे दो। इन्हें भी आत्मा है, इन्हे उसका पूर्ण विकाश करने की स्वतन्त्रता दो। प्रत्येक राष्ट्र या समाज में पुरुष और शक्ति के योग से शान्ति की स्थापना मानी गयी है। इसलिये यदि तुम शान्ति की स्थापना चाहते हो, तो इन्हें इनका उचित अधिकार दे शान्त करो। फिर देखो, यह तुम्हारा उजड़ा हुआ भारत, कितनी जल्दी हरा भरा नन्दन कानन हो जाता है और कितनी जल्दी अविद्या का नाश कर फिर वही मातायें राम, लक्ष्मण भरत और अर्जुन ऐसे सपूतों को जन्म दे भारत को गौरवान्वित कर देती हैं।

* * * * *

द्वितिय भाग

"धर्मार्थ काममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्"
(सूक्ति)

स्वास्थ्य-रक्षा

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का मूल कारण आरोग्य (स्वास्थ्य) ही है।

जो स्त्री व पुरुष रोगी हैं—जिसका स्वास्थ्य ठीक नहीं है, उसका जीवन भी भार स्वरूप है; वह इस संसार में शेष जीवन की घड़ियाँ दुःख से कराहते हुए व्यतीत करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता। रोगी मनुष्य के इहलोक और परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं—यह अटल सिद्धान्त है, निर्विवाद सत्य है। क्योंकि उस

अवस्था में उससे न तो किसी प्रकार मानव जाति की सेवा ही हो सकती है और न ईश्वर का भजन ही। रोना एवं चिल्लाना ही सच पूछिये तो उसके भाग्य में लिखा हुआ मान लेना पड़ता है। सुस्वास्थ्य, मनुष्य मात्र के लिये परमावश्यक ही नहीं प्रत्युत उसके भविष्य का मूल है। सुस्वास्थ्य रह कर ही प्रत्येक प्राणी अपनी इच्छानुकूल प्रत्येक कार्य कर सकता है। स्वास्थ्य रहना मनुष्य मात्र का परम कर्त्तव्य है। इसमें उदासीनता प्रकट करना महापाप है, तथा अपने आप को धोका देना है।

ब्रह्मचर्य पालन, स्वच्छता, नियमित रूप से भोजनादि करना एवं व्यायाम सुस्वास्थ्य के मुख्य मुख्य चार स्तम्भ हैं। सुस्वास्थ्य रूपी सुरम्य भवन इन्हीं चारों स्तम्भो पर निर्माण किया गया है। खेद के साथ लिखना पड़ता है कि चारों ही स्तम्भ आज प्रायः जीर्ण-शीर्ण से हो रहे हैं। यही कारण है, जो आज हम रोगी हैं, अशक्त हैं, कायर है, एवं परले सिरे के डरपोक हैं। सुतरां यदि हमें इस दुर्दशा के दलदल से बाहर आना अभीष्ट है, होने वाले अपमान के विरुद्ध यदि आवाज उठानी है तो स्वास्थ्य ठीक रखना होगा और इसके लिये उसके स्तम्भों को अनिवार्य रूप से सुदृढ़ करना होगा।

"ब्रह्मचर्य पालन" शीर्षक स्तम्भ को सुदृढ़ करने के लिये बाल विवाह, वृद्ध विवाह एवं अनमेल विवाह इन तीनों को समाज से निकाल बाहर करना अनिवार्य है। कुपरिणाम के सम्बन्ध में यहाँ

कुछ लिखने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती क्योंकि उन्हें आज-कल प्रायः अधिकांश जनता कम से कम जान तो अवश्य ही गयी है। बाल विवाहादि कुप्रथाओंके कारण बालक बालिकाओंके संरक्षक उन्हें विवाह-बन्धन में बाध कर एक ऐसा अवसर उनके सामने उपस्थित कर देते हैं कि जहाँ पर अपने स्वास्थ्य को बनाये रखना उनके लिये दुस्साध्य सा हो जाता है। क्योंकि इन्द्रियों को वश में रखना हँसी खेल नहीं है। दुर्बलों का वहाँ पर सफलता प्राप्त करना कहना ही होगा—असम्भव है। बहुतसे अल्पायुमें ही नाना प्रकार के रोगों से घिर जाते हैं और इससे उन्हे अपना शेष जीवन नारकीय यातनाओं को निशिवासर सहन करते हुए ही व्यतीत करना पड़ता है।

"स्वच्छता" के सम्बन्ध मे भी हमारी कोई अच्छी दशा नहीं है। अधिकाश जनता ऐसे ऐसे तंग स्थानो में रहती है जो बहुत गन्दा रहता है, जहाँ स्वच्छ वायु और स्वच्छ प्रकाश का होना दुर्लभ सा हो गया है। इस प्रकार के गन्दे स्थानों मे रहने से स्वास्थ्य बिगड़ जाया करता है और स्वास्थ्य सुधार के लिये फिर रूपये पानी की तरह खर्च किये जाते है। ऐसे गन्दे स्थानो में रहने से राजयक्ष्मादि भयानक रोग प्रायः होते देखे गये हैं। इसलिये मनुष्य मात्र का कर्त्तव्य है कि वह स्वच्छता पर विशेष ध्यान दे। घर, हर समय साफ सुथरा रहना चाहिये। गन्दी चीजें फौरन से पेश्तर मकान से हटवा देनी चाहिये। मकान भी प्रायः ऐसा होना चाहिये, जहाँ वायु का प्रवेश खूब हो। सोने के स्थान में दर्वाजा खोलकर सोना चाहिये

और खासकर यह स्थान ऐसा होना चाहिये, जहाँ वायु का आवागमन खूब हो सके। वन्द कमरे में सोना स्वास्थ्य के लिये हानिकर है। कितने मूर्खता वश यह कह दिया करते हैं कि अधिक वायु लगने से शर्दी लग जायगी। परन्तु वास्तव में यह बात नहीं है। वायु तो जितनी मिले उतनी ही थोड़ी है। हाँ, वस्त्र का प्रबन्ध इतना अवश्य कर लेना चाहिये ताकि ठण्ढक शरीर में प्रवेश न कर सके। इसी प्रकार पहिनने के कपड़े आदि भी बरावर साफ़ सुथरे रहने चाहिये। गर्मी के दिनो मे कपड़े तीन चार दिनों मे बदलते रहना चाहिये। क्योंकि पसीना आने से कपड़े में दुर्गन्ध पैदा हो जाती है और शनैः शनैः उन कपड़ो में छोटे छोटे कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं, जिनसे कितने ही प्रकार की बिमारी होने का भय रहता है। स्नानादि के विषय में भी प्रायः ऐसी ही बात है। प्रतिदिन का स्नान करना स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त हितकर है। जाड़े के दिनो में अगर ठण्डा जल सहन न हो सके तो गर्म पानी से स्नान किया जा सकता है। परन्तु शिर पर गर्म पानी न डालना चाहिये; ऐसा करना नेत्रो के लिये हितकर है। यदि ठण्डे पानी से बारहो महीने नहाने का अभ्यास कर लिया जाय तो और अच्छी बात है।

स्वास्थ्य सम्बन्धी अन्यान्य नियमों में "खान-पान" का नियम सब से अधिक महत्वपूर्ण है, परन्तु हमें दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि हम इसी नियम का पालन नहीं करते। शुद्ध वस्तु का सेवन न कर के जब मिलावटी चीजो का व्यवहार होने लगता है :

तब स्वास्थ्य को बड़ा भारी धक्का लगता है। परन्तु हमें शायद ही कभी शुद्ध पदार्थ मिलते हो। हमारी नागरिक व्यवस्था ऐसी विचित्र हो गयी है कि इसमें सुस्वास्थ्य पदार्थों को प्राप्त करने के उपायो पर उतना भी ध्यान नही देते जितना हमें देना चाहिये। यह स्वास्थ्य नितान्त शोचनीय है। थोड़ा सा ध्यान देने से इसमें सुधार किया जा सकता है और फिर हमें शुद्ध घृत, दुग्धादि सहज ही में प्राप्त हो सकते हैं।

बाजार की मिठाई और खोमचा आदि के खाद्य पदार्थ तो स्वस्थ्य की दृष्टि से नितान्त वर्ज्य हैं। अम्ल, पित्त मन्दाग्नि आदि दुःख देने वाले रोग इन मिठाइयों से पैदा होते हैं। इनके अतिरिक्त हैजा आदि बड़ी २ बिमारियाँ और राजयक्ष्मा जैसे घातक रोग भी इन मिठाइयों द्वारा उत्पन्न हो जाते हैं।

आटा का प्रश्न, जब तक कि हाथ की चक्की से काम लिया जता था, कुछ भी कठिन न था। परन्तु जब से कारखानो और बिजली की चक्कियो का प्रचार हो गया है, तब से इस प्रश्न में भी जटिलता आ गयी है। कल कारखानो का पिसा हुआ आटा अनेक प्रकार के रोग पैदा कर दिया करता है, यह बात वैज्ञानिको ने अकाट्य रूप से प्रमाणित कर दी है। और इधर हालत यह है कि इन कल कारखानों के कारण हाथ की चक्कियाँ प्रायः बन्द हो गयी है। इसलिये शुद्ध और हितकर आटा मिलना असम्भव हो गया है। यदि घर घर में हाथ के पिसे हुए शुद्ध आटे की व्यवस्था की जाय तो लोगों का बड़ा उपकार हो।

* जल में भी जो देखने में बहुत साधारण सी बात मालूम होती है, अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न हो जाते है। ज्वर, मेलेरिया मोतीझरा इत्यादि प्रधान रोग जल और दूध के दोष के कारण होते

---

* शुद्ध जल की पहिचान यह है कि, उसमें किसी प्रकार की दुर्गन्धि न हो, स्वाद और रंग बुरा न हो, कीड़े-मकोड़े वा मैल-मिट्टी न हो, जिनमें मल मूत्र न पड़ते हों, लोग जिसमें स्नान न करते हों तथा जो बहता हो, स्थिर वा बन्द न हो, काई अधिक न पड़ गयी हो-जैसा कि बहुधा छोटी नदी वा तालाबों की दशा होती है। जल सुधारने की विधि यह है:—

(१) मैल-मिट्टी इत्यादि मिले जल में थोड़ी सी फिटकिरी पीस कर घोल दे और थोड़ी देर रहने से, जब पानी फट कर मैल नीचे बैठ जावे, तब निथार कर दूसरे बासन में कर लेवे।

(२) यदि पानी में दुर्गन्ध हो तो औटा ले। चौथा भाग जल जाने पर निथार कर दूसरे बासन में कर ले।

(३) यदि पानी का स्वाद अच्छा न हो तो लोहा, ईंट सोने वा चाँदी के टुकड़ों को आग में लाल कर के कई बेर बुझा ले।

(४) स्याही सोख कागज में (ब्लाटिंग पेपर) पानी को छान लेने से भी पानी शुद्ध हो जाता है।

(५) घड़ों का यन्त्र (FILTER) भी इसी काम में आता है। इसमें कैसा ही खराब जल क्यों न हो बिलकुल स्वच्छ हो जायगा।

(६) सब से सुगम और सस्ता उपाय औटाने का ही है।

देखे गये हैं। हैज़ा भी इन कारणों से उत्पन्न हो जाता है। जल और दुग्ध में विषैले कीटाणु बड़ी सरलता पूर्वक प्रविष्ट हो जाते हैं। इस कीटाणुओं से जल और दुग्ध को किस प्रकार अलग रक्खा जाय, यह थोड़ी सी ही वैज्ञानिक व्यवस्था से हो सकता है। शहरों में जल मिलने की जो व्यवस्था है, उसमें म्युनिसिपैलिटी को अपनी सलाह देने और उसके द्वारा उस सलाह के अनुसार काम करवा लेने से काम चल सकता है। देहातों में भी कुँआँ तालाब आदि साफ करने पड़ेंगे। यह काम कुछ अधिक कष्ट साध्य है, तौ भी कुँआँ तालाबादि बराबर साफ करते रहना चाहिये। नहीं तो उसमें कीटाणु पैदा होने का भय रहता है। प्रति वर्ष कुँआँ में दो चार मन पत्थर का चूना देने से प्रायः जल स्वच्छ हो जाता है और कीटाणु आदि मर जाते हैं।

"व्यायाम" भी स्त्री और पुरुष दोनों को कुछ न कुछ बराबर करते रहना चाहिये। व्यायाम करने से तमाम शरीर के त्वचा कस जाते हैं, वदन खूबसूरत और सुडौल हो जाता है। अग्नि दीप्त, शरीर बहुत काल तक स्थाई, हल्का और मुलायम बना रहता है। व्यायाम करने वाली स्त्री और पुरुष परिश्रम, पियास गर्मी, सर्दी इन सब को सहन कर सकते हैं और उनको परम आरोग्यता प्राप्त होती है। कैसा हू मोटा सा मोटा मनुष्य क्यों न हो कसरत वा व्यायाम करने से अवश्य उसकी बेढंगी मुटाई कम हो जाती है, और कैसा हू दुबला होगा कुछ न कुछ ज़रूर मोटा हो सकता है। निश्चय है कि बिना व्यायाम किये तैयारी औ

ताक़त कभी नहीं आ सकती, चाहे वह दिन रात मोती ही क्यों न खाया करे। स्त्रियो के लिये भी व्यायाम करना उतना ही आवश्यक है, जितना पुरुषों के लिये। परन्तु आजकल स्त्रियाँ इतनी नाजुक और कोमलाङ्गी हो गयी हैं कि व्यायाम तो दूर रहे, घर का काम काज ही नहीं कर सकतीं। इन सब आदतो को हटा देना चाहिये और शारीरिक व्यायाम बराबर करते रहना चाहिये। स्त्रियों के लिये आजकल कितने ही प्रकार के व्यायाम निर्धारित कर दिये गये हैं। यदि स्त्रियाँ उन व्यायामों को बराबर करें तो उनका स्वास्थ्य बराबर ठीक रहेगा और उनकी सर्वाङ्गीण सुन्दरता कभी नष्ट न होने पायगी।

(१) दैनिक व्यायाम से मन शान्त और सदा प्रसन्न रहता है।

(२) कठिन से कठिन कार्य सरल ज्ञात होते है।

(३) इन्द्रियों के दमन की शक्ति मिलती है।

(४) विषय-भोगों मे निर्लिप्तता होती है।

(५) अनेक शारीरिक तथा मानसिक दुःख दूर होते हैं।

व्यायाम दिन में दो बेर भी किया जाता है। यदि न हो सके तो एक बार सबेरे अवश्य ही करना चाहिये। व्यायाम के पश्चात् थोड़ी देर ठहरकर कुछ जल-पान कर लेना चाहिये। नियम पूर्वक एक वर्ष तक किसी प्रकार का व्यायाम करते रहने से शरीर सुदृढ़ और सुन्दर हो जाता है। ब्रह्मचर्य का पालन करने वालों के लिये व्यायाम बड़ा ही उपयोगी होता है। इसलिये कन्याओं को

के पहले विद्याध्ययन के साथ साथ बराबर व्यायाम करते रहना चाहिये।

× × × ×

स्वास्थ्य सहायक बातें

प्रसिद्ध डा० डिकोरेनेट ने स्वास्थ्य रहने के सर्वोच्च १० उपाय बतलाये हैं, हम उन्हें यहाँ देते हैं:—

(१) वायु-सेवन—प्रातःकाल की वायु रक्त वर्द्धक है; अतः बहुत सवेरे उठकर टहलने जाना और सब दिन परिश्रम करना चाहिये।

(२) श्वास-प्रश्वास—पानी और रोटी से जीवन-शक्ति बढ़ती है। निरोगता के लिये शुद्ध वायु और सूर्य-किरणों की बड़ी आवश्यकता है।

(३) आचार-उदर—दीर्घ जीवन के लिये परिमित आचार और थोड़ा आहार ही सब से उत्तम है। एक आहार जब तक न पच जाय तब तक दूसरा आहार कभी मत करो, क्योंकि इससे पाचन शक्ति घट जाती है।

(४) शारीरिक-स्वच्छता—जैसे स्वच्छ किया हुआ यन्त्र अधिक दिनों तक चलता है, वैसे ही शरीर भी स्वच्छता से निरोग रहता है।

(५) उचित-निद्रा—निद्रा शरीर को फिर से शक्ति प्रदान कर देती है। बहुत पड़े रहने से दुर्बलता आती है। इसलिये प्राणी मात्र

को ६ घन्टे से कम और ८ घन्टे से अधिक न सोना चाहिये। कम सोने से मास्तिष्क में निर्बलता और अधिक सोने से शरीर में भारी-पन और आलस्य प्राप्त होता है।

(६) वस्त्र-व्यवहार—शीत और गर्मी से शरीर की रक्षा के निमित्त ऐसे कपड़े हों, जिनसे चलने फिरने में रुकावट न हो।

(७) रहने का घर-बहुत स्वच्छ और खुला हुआ हो; वायु और प्रकाश के पहुँचने योग्य हो।

(८) नैतिक स्वास्थ्य—आमोद-प्रमोद से मन अवश्य प्रसन्न होता है, पर इसकी अधिकता से शरीर-शत्रु-इन्द्रियाँ उत्तेजित हो कर मनुष्य को पाप की ओर ले जाती हैं। इस लिये आमोद प्रमोद भी सीमाबद्ध रहना चाहिये।

(९) मानसिक अवस्था—मन की प्रसन्नता स्वस्थता को बढ़ाती है, किन्तु दुःख और विषाद से असमय में वृद्धता प्राप्त होती है।

(१०) परिश्रम—केवल मस्तिष्क-परिश्रम से ही काम नहीं चलता। शारीरिक श्रम करने से ही आहार का अच्छी तरह परि-पाक होता है।

स्वास्थ्य विनाशक बातें

(१) धूप का बैठना, आग से पाँव सेकना और अग्नि को मुख से फूँकना मना है।

(२) विषमासन बैठना, गरिष्ठ भोजन करना, दूषित जल पीना और वीभत्स वस्तु देखना मना है।

(३) दूसरे के कपड़े पहिनना और दूसरे के विस्तर पर सोना मना है।

(४) ग्रीष्म ऋतु में काले कपड़े पहिनना मना है, इससे वीर्य की क्षीणता होती है।

(५) अधिक ठन्डे, गर्म, कड़े और खट्टे पदार्थ न खाने चाहिये।

(६) इन्द्रियों के वेग अर्थात् मल, मूत्र, अपान वायु, डकार, छींक, जँभाई, निद्रा, वमन, खाँसी, भूख और प्यास को न रोकना चाहिये।

(७) अज्ञात वस्तु वा औषधि न खानी चाहिये।

(८) धरती पर सोना मना है, ओस का सोना वर्जित है।

(९) दूध दही एक साथ न खाना चाहिये। सोने के समय मुख ढाँप कर न सोना चाहिये। ऐसा करने से दूषित वायु वस्त्र के कारण नहीं निकलने पाती और विमारी होने का भय रहता है।

(१०) शरीर पसीने से आर्द्र हो तो जब तक पसीना न सुख जाय तब तक आकाशी हवा, विशेष कर पूर्व की हवा न लगने देनी चाहिये और न पसीने से लथपथ शरीर पर पानी ही पड़ना चाहिये।

(११) औषधि जो अमृत के समान है, अशिक्षित वैद्यों के हाथों वह विष समान है। कहा भी है,—नीम हकीम खतरे जान। इन उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त मांस, मदिरा और तमाखू आदि

नशीली वस्तुयें भी स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हैं, कहा भी है–मधु मांसञ्च वर्जयेत्। (मनुस्मृति)

(१२) अति कटु (बहुत मिर्च वाला पदार्थ) अत्यन्त नमकीन, अत्यन्त दाह करने वाला आहार, तथा बासी और जूठा (अपवित्र) आहार स्वास्थ्य के लिये वर्जित है।

(१३) जल्दी जल्दी भोजन करना वर्जित है। प्रत्येक ग्रास को भली भाँति चबा चबा कर खाना चाहिये। कम से कम २८ बेर चबाने के बाद ग्रास पेट मे जाना चाहिये।

+ + + +

शयन गृह

शयन गृह जितना ही बड़ा और हवादार हो, उतना ही अच्छा है। जिस कमरे मे गुरुजनो का आवागमन हो उसे शयन के लिये पसन्द करना ठीक नहीं। जो स्थान पसन्द किया जाय वह सुन्दर, नेत्ररञ्जक और रमणीय होना चाहिये। उस कमरे की सजावट और व्यवस्था ऐसी रखनी चाहिये जिससे आनन्द और शान्ति पूर्वक सुख की नींद सोई जा सके। शयनगृह का फर्श यदि मिट्टी का हो तो लिपा हुआ और पक्का हो तो धो धाकर साफ रखना चाहिये। दीवारें साफ और चूने से पुती हुई होनी चाहिये। शयनगृह मे सुन्दर और सुशोभित चित्रादि रखना बहुत ही आवश्यक है। वैज्ञानिकों का कथन है कि सन्तानोत्पत्ति करते समय माता-पिता जिन पदार्थों या दृश्यों को देखते हैं उनका भावी सन्तान

प्रभाव पड़ता है। भले और आदर्श मनुष्यों के चित्र देखने से भली और बुरे चित्रों को देखने से बुरी सन्तान उत्पन्न होती है। जिन चित्रों के देखने से भय, शोक, ग्लानि और चिन्ता उत्पन्न हो उन्हें शयन गृह में कदापि न रखना चाहिये। दीवारों पर हो सके तो स्वर्णोपदेश के तख्ते टाँग देना चाहिये, इससे उठते बैठते भली बातों का स्मरण रहता है।

* * * * *

एक शय्या

बहुधा यह देखा जाता है कि पति और पत्नी दोनों एक ही शय्या में विश्राम करते हैं, यद्यपि यह निन्दनीय नहीं है, तथापि स्वास्थ्य की दृष्टि से दोनों का एक दूसरे से अलग सोना परमावश्यक है। यह तो सभी लोग जानते हैं कि श्वास लेते समय जो हवा बाहर निकलती है, वह विषैली और स्वास्थ्य के लिये हानिकर होती है। एक साथ सोने से वही हवा दोनों के श्वास में जाती है और शनैः शनैः स्वास्थ्य को हानि पहुँचाती है। यदि दो में से किसी एक को दमा, खांसी या क्षय आदि की बिमारी हुई तो उसके कीटाणु स्वाँस द्वारा दूसरे के शरीर मे प्रवेश कर उसे भी रोगी बना देते हैं।

एक साथ सोने से सब से बड़ी हानि यह होती है कि पति पत्नी को सदैव काम का चिन्तन हुआ करता है और वे अपेक्षाकृत अधिक बार समागम कर अपना स्वास्थ्य खो बैठते हैं। पृथक पृथक शय्याओं मे शयन करने से ऐसा होने की सम्भावना बहुत कम

रहती है। एक शय्या पर सोना उसी समय हितकर हो सकता है, जब स्त्री पुरुष में कलह और मनोमालिन्य चलता हो; अन्यथा, एक शय्या पर सोना सर्वथा वर्जित है।

× × × ×

मितव्ययिता

सादगी पूर्ण जीवन व्यतीत करने का अभ्यास करो। सादगी पूर्ण जीवन में ही शान्ति, सुख और सन्तोष है। घर का खर्च इसी हिसाब से चलाना चाहिये जो न तो अधिक हो और न कम। कम होने से हानि होने की सम्भावना है और अधिक होने से लक्ष्मी नहीं ठहरने की। फिर लक्ष्मी बिना आदर कहाँ? इसलिये अपनी योग्यता और सामर्थ्य को देखकर खर्च करने की आदत डालनी चाहिये। खर्च-वर्च करने में ऐसी कंजूसी भी न करनी चाहिये, ताकि क्षति उठानी पड़े। यदि घर में कोई बीमार पड़ा हो और सूमपना कर के उसका उचित प्रबन्ध न किया गया तो इसका कभी २ भयावह और रोमाञ्चकारी परिणाम निकल पड़ता है। फल-स्वरूप, रोगी की मृत्यु हो जाती है और फिर पश्चात्ताप करने के अतिरिक्त और कुछ शेष नहीं रहता। अतः खर्च आदि के विषय में विशेष सतर्क और सावधान रहने की आवश्यकता है।

जब किसी लड़के लड़की का विवाह वा अन्य कोई काम साधना हो तो उसका प्रबन्ध बहुत दिन पहले से करना चाहिये और उसका व्यय अपने सामर्थ्य के अनुसार करना चाहिये। ऐसा न हो कि

एकही उत्सव में अंधाधुन्ध खर्च किया जाय और फिर आवश्यकता पड़ने पर ऋण लेना पड़े। कहा भी है:—

अपनी पहुँच विचारि कै, करतब करिये दौर।
तेते पाँव पसारिये, जेते लम्बी सौर॥

*   *   *   *

चटोरपन

चटोरपन से अधिक व्यय होता है और कभी पूरा नहीं पड़ता। गृहस्थ की बहू बेटियों को चटोरपन से अत्यन्त दुःख भोगना पड़ता है। वे सदैव नङ्गी बूची सी रहती हैं। न तो उनके शरीर पर कभी अच्छा कपड़ा ही होता है और न उनका कहीं आदर सत्कार ही होता है। चटोरपन गृहस्थ को निर्धन कर देता है और निर्धन को कोई पूछता ही नहीं। जिसपर बीतती है, वही भोगता है। सम्पति में हजार संगी हो जाते हैं, परन्तु विपत्ति में सब दूर भागते हैं। इसी से किसी ने कहा भी है,—"वन में फिरना, हाथी और सिंह के मुखमे पड़ना, वृक्ष के नीचे निवास करना और घास पत्ते खाकर जीवन व्यतीत करना अच्छा है; परन्तु निर्धन हो कर किसी से सहायता की याचना करना ठीक नहीं।" इसलिये सञ्चित धन को व्यर्थ में चटोरपन की आदत लगा नष्ट न करना चाहिये।

जीभ न जाके वश रहे, सो नारी मतिहीन।
धन लज्जा आरोग्यता, करे प्रतिष्ठा छीन॥

ऋणी दुखी निज को करे, नारि चटोरी जोइ।
झूठ डाह कपटादि सब, औगुण ताके होइ॥

× × × ×

ऋण

ऋण लेना यद्यपि लोग सुगम समझते हैं, तथापि ऋण लेना मैं तो बहुत ही कठिन और बुरा समझता हूँ। क्योंकि, जिससे कोई बहन ऋण लेना चाहती हैं, उससे प्रथम तो माँगना पड़ता है, फिर उसकी लल्लो-पत्तो करनी पड़ती है। इसपर भी ऋण देने वाली बहन कभी आज कभी कल देने का बहाना बनाती ही रहती हैं। उसकी दश झूठी प्रशंसा करनी पड़ती है, तब कहीं ऋण का डौल बैठता है। पर ऋण चुकाना तो और भी कठिन है, जैसे पहाड़ का चढ़ना। यदि किसी अपने पराये से ऋण लिया जाय तो वह और भी बुरा है, क्योंकि ऋण के कारण राह-रीति, प्यार-प्रीति और हृदय में अन्तर पड़ जाता है। ऋण प्रीति की कतरनी है।

कभी २ ऐसा समय भी उपस्थित हो जाता है कि पास में पैसा नहीं है और काम व्यय का आ गया तो उस समय ऋण लेकर कार्य निकाल लेने में कोई हर्ज नहीं। परन्तु याद रखकर जितनी जल्दी हो सके ऋण चुका देना चाहिये। नहीं तो फिर किसी विशेष आवश्यकता पड़ने पर एक पाई भी नहीं मिल सकती। जो स्त्री उधार लेकर निश्चिन्त हो जायगी, वह सदा ऋण में ही डूबी रहेगी और

एकही उत्सव में अंधाधुन्ध खर्च किया जाय और फिर आवश्यकता पड़ने पर ऋण लेना पड़े। कहा भी है:—

अपनी पहुँच विचारि के, करतब करिये दौर।
तेते पाँव पसारिये, जेते लम्बी सौर॥

* * * *

चटोरपन

चटोरपन से अधिक व्यय होता है और कभी पूरा नहीं पड़ता। गृहस्थ की बहू बेटियों को चटोरपन से अत्यन्त दुःख भोगना पड़ता है। वे सदैव नङ्गी बूची सी रहती हैं। न तो उनके शरीर पर कभी अच्छा कपड़ा ही होता है और न उनका कहीं आदर सत्कार ही होता है। चटोरपन गृहस्थ को निर्धन कर देता है और निर्धन को कोई पूछता ही नहीं। जिसपर बीतती है, वही भोगता है। सम्पति में हजार संगी हो जाते हैं; परन्तु विपत्ति में सब दूर भागते हैं। इसी से किसी ने कहा भी है,—"बन में फिरना, हाथी और सिंह के मुखमें पड़ना, वृक्ष के नीचे निवास करना और घास पत्ते खाकर जीवन व्यतीत करना अच्छा है; परन्तु निर्धन हो कर किसी से सहायता की याचना करना ठीक नहीं।" इसलिये सञ्चित धन को व्यर्थ में चटोरपन की आदत लगा नष्ट न करना चाहिये।

जीभ न जाके वश रहे, सो नारी मतिहीन।
धन लज्जा आरोग्यता, करे प्रतिष्ठा छीन॥

ऋणी दुखी निज को करे, नारि चटोरी जोइ।
झूठ डाह कपटादि सब, औगुण ताके होइ॥

× × × ×

ऋण

ऋण लेना यद्यपि लोग सुगम समझते हैं, तथापि ऋण लेना मैं तो बहुत ही कठिन और बुरा समझता हूँ। क्योंकि, जिससे कोई बहन ऋण लेना चाहती हैं, उससे प्रथम तो माँगना पड़ता है, फिर उसकी लल्लो-पत्तो करनी पड़ती है। इसपर भी ऋण देने वाली बहन कभी आज कभी कल देने का बहाना बनाती ही रहती हैं। उसकी दश झूठी प्रशंसा करनी पड़ती है, तब कहीं ऋण का डौल बैठता है। पर ऋण चुकाना तो और भी कठिन है, जैसे पहाड़ का चढ़ना। यदि किसी अपने पराये से ऋण लिया जाय तो वह और भी बुरा है, क्योंकि ऋण के कारण राह-रीति, प्यार-प्रीति और हृदय में अन्तर पड़ जाता है। ऋण प्रीति की कतरनी है।

कभी २ ऐसा समय भी उपस्थित हो जाता है कि पास में पैसा नहीं है और काम व्यय का आ गया तो उस समय ऋण लेकर कार्य निकाल लेने में कोई हर्ज नहीं। परन्तु याद रखकर जितनी जल्दी हो सके ऋण चुका देना चाहिये। नहीं तो फिर किसी विशेष आवश्यकता पड़ने पर एक पाई भी नहीं मिल सकती। जो स्त्री उधार लेकर निश्चिन्त हो जायगी, वह सदा ऋण में ही डूबी रहेगी और

(१) रुपये का जै सेर होगा, एक आने का उतना ही कनवाँ होगा। जैसे, एक रुपये का बारह सेर तो एक आना का बारह कनवाँ (ऽ।।।) हुआ।

(२) जै रुपये सेर हो उतने ही आनों का एक छटाँक होगा। जैसे, ३।।) रु० सेर हो तो एक कनवाँ का दाम ≡)।। होगा।

(३) जितने रुपये मन, अढ़ाई सेर का उतना ही आना। जैसे, ५) रु० मन हो तो अढ़ाई सेर के पाँच आने हुए।

(४) जितने रुपये मन, एक कनवाँ का उसका आधा दाम। जैसे, १०) रु० मन हो तो एक कनवाँ का पाँच दाम। और पाँच दाम का एक पैसा होगा।

(५) जितने रुपये मन, सेर भर का उसी का अष्टगुणा दाम होगा। जैसे ५) रु० मन हो तो सेर भर का ४० दाम हुआ और ४० दाम का दो आना हुआ। क्योंकि पाँच दाम का एक पैसा होता है।

(६) जै पैसे सेर, एक पाव का उतना ही छदाम। जैसे, ८)।।। पैसे सेर हो तो एक पाव का दाम सात छदाम वा पौने दो पैसा हुआ। क्योंकि चार छदाम का एक पैसा होता है।

(७) रुपया का जै गज एक आना का उतना ही गिरह होगा। जैसे, १) रु० का पाँच गज तो एक आना का पाँच गिरह हुआ।

उसका दूना पैसा और दूना बट होता है। जैसे १५) रु० मासिक हो तो एक दिन के ३० पैसे और ३० बट हुए। १५ बट का एक पैसा होता है। इसलिये एक दिन का ३०+२=३२ पैसे अर्थात् ॥) आना हुआ।

(१०) एक वर्ष में जितना रुपया नौकर का वेतन हो एक मास का उतना ही आना और चार गुणा अंग्रेजी पाई होगा। जैसे, १०) सालाना अगर किसी नौकर का वेतन हो तो एक मास का ॥=) आना और ४० अंग्रेजी पाई हुआ। १२ अंग्रेजी पाई का एक आना होता है। इसलिये ४० अंग्रेजी पाई का तीन आना और चार अंग्रेजी पाई हुआ। इसलिये सब मिलाकर ॥=)+≡)।१= ॥।-)।=१ हुआ।

(११) इसी हिसाब से मिलता जुलता दरजन का दाम जानकर एक चीज का जाना जा सकता है। क्योंकि १२ मास का साल होता है और बारह चीजों का एक दरजन। इसलिये ऊपर वाला नियम ही इसमें काम आयगा। जैसे ३) रु० दरजन हो तो एक चीज का ≡) और १२ अंग्रेजी पाई हुआ। सब मिला कर ≡)+ -)=चार आने के हुए।

(१२) इसी प्रकार तोले का दाम जानकर मासे का भी जाना जा सकता है, क्योंकि बारह मासे का ही तोला होता है। जैसे ५) रु० तोला, तो एक मासे का।-) और २० अंग्रेजी पाई हुआ। सब मिला कर ।-)+-)॥२=।=)॥२ हुआ। तीन अंग्रेजी पाई का एक पैसा होता है।

(१३) जै रुपया तोला एक रत्ती का दूना अंग्रेजी पाई होगा। जैसे ८) रु० तोला तो एक रत्ती का १६ अंग्रेजी पाई होगा। और ८ रत्ती का एक मासा और १२ मासे का एक तोला होता है।

(१४) जितने रुपये भरी एक आना भर का उतना ही आना होगा और जितने आने भरी एक आना भर का उतना ही छदाम होगा। जैसे ५) भरी तो एक आना भर का ।-) हुआ। और ।-) भरी हो तो एक आना भर का पांच छदाम अर्थात् सवा पैसा हुआ।

(१५) जै आने तोला एक मासे का उतना ही अंग्रेजी पाई होगा। जैसे ।॥) तोला तो एक मासा का १२ अंग्रेजी पाई अर्थात् -) हुआ। इसी प्रकार जै आने साल, एक मास का उतना ही अंग्रेजी पाई होगा। इसी प्रकार जै आने दरजन, एक चीज का उतना ही अंग्रेजी पाई होगा। जैसे पांच आने दरजन तो एक चीज का पांच अंग्रेजी पाई हुआ।

दैनिक आय-व्यय लिखने की रीति

नित्य के आय व्यय का हिसाब जैसे लिखा जाता है, उसके नियम नीचे लिखे जाते हैं, इसी आय—व्यय को रोकड़ या जमा खर्च कहते हैं। प्रत्येक स्त्री को अपने आय-व्यय का हिसाब रखना चाहिये। नीचे लिखे नियम के अनुसार जमा खर्च लिखना आवश्यक है। प्रतिदिन का जमा खर्च प्रति दिन लिख लेना चाहिये, नहीं तो पीछे भूल जाने का भय रहता है।

मि० आश्विन शु० ५ सोमवार सम्वत् १६८६

तदनुसार ता: १०.जून सन् १६३२ ई०

१००) श्री रोकड़ बाकी—
५०) स्वामी द्वारा प्राप्त—
१०) पुत्र द्वारा प्राप्त—
५) रामलाल नौकर का जमा बाकी में

१६५) कुल

२१।।।-) घर खर्च—
४) डाक्टर की फीस
।।) औषधि
३=) घृत ऽ२।। सेर मारफत राम लाल नौकर—
६) चावल १ मन मारफत राम लाल नौकर—
३) किरासिन तैल एक टीन मारफत दाई के
४) दाई का वेतन ता. १० जून तक चुकती दिया
१) भारत वर्ष का इतिहास रामा ने खरीदा
=) खुदरा खर्च

२१।।।-)

५) दान दिया—
५) अवलाआश्रम मुंगेर मारफत बाबू गौरीनन्दन झा, मंत्री अवलाआश्रम

२६।।।-) कुल—

१३८=) शेष रोकड़ में—

१६५) टोटल

पत्र प्रबोध

पत्र लिखने की कुछ पुरानी प्रथायें अब भी प्रचलित हैं। किन्तु, अब उन प्रथाओं की आवश्यकता नहीं है। कितने ही विद्वानों की सम्मति है कि धीरे धीरे उस प्रथा को दूर कर देना ही उत्तम है। उसमें व्यर्थ की बातें लिखकर पृष्टपेषण किया जाता है। प्रचलित प्रथा के अनुसार पत्र लिखने सीखना और सिखाना विशेष लाभदायक है।

पत्र जहाँ तक हो सके शुद्ध और स्वच्छ अक्षरों में लिखा जाना चाहिये। जिस श्रेणी की स्त्री या पुरुष को पत्र लिखा जाय, पत्र में उसी प्रकार के शब्दो का प्रयोग उचित ढंग से करना चाहिये, जिससे पत्र पढ़ने वाली स्त्री या पुरुप किसी भी अंश में अपना अपमान न समझ सके। अपने से बड़ी को शीलता के साथ; अपने समवयस्कवाली को स्नेहसनी चटपटी भाषा में और अपने से छोटी को वात्सल्य पूर्ण शब्द समूहो का प्रयोग कर लिखना चाहिये। पत्र पढ़ने वाली के हृदय में उसी प्रकार का भाव जग जाना चाहिये, जैसा किसी देवी ने लिखा हो। यही अच्छी पढ़ी लिखी बहिनों की पहिचान है। साथ साथ पत्र का यह अभिप्राय भी होना चाहिये कि जैसे पत्र लिखने वाली सामने ही खड़ी हो। पत्र में उतनी ही बातें लिखनी चाहिये जो काम की हों। व्यर्थ की बातें और बेतुकी बातें लिखकर पृष्टपेषण न करना चाहिये। इससे समय का दुरुपयोग होता है।

पत्र के खण्ड को साफ़ और शुद्ध शुद्ध अलग अलग लिखना

चाहिये। आरम्भ ही से विराम, अर्द्ध विरामादि का प्रयोग करने का अभ्यास डाल लेना चाहिये। इससे वाक्य, स्पष्ट अर्थ झलका देते हैं। पत्र में भेजने वाली का स्थान; पता, तिथि के साथ पहले ही लिखा रहना चाहिये; जिससे पत्र आरम्भ करते ही पता लग जाय कि कहाँ का पत्र है? लिखने वाली अपना हस्ताक्षर पत्र के नीचे कर दिया करे। परन्तु यह स्मरण रखने की बराबर आवश्यकता है कि पत्र लिखने के प्रारम्भ ही से आदर सूचक शब्दों का प्रयोग किया जाय। जैसे,—

माता को—पूजनीया श्री माता जी।

पिता को—पूज्यवर पिता जी।

बड़े भ्राता को—पूज्यवर भ्राता जी।

छोटे भ्राता को—प्राण प्रिय।

पति को—प्राणनाथ, प्राणाधार, प्रियतम, पूज्यवर पतिदेव, जीवनधन, हृदयेश्वर और प्राणेश्वर आदि।

सास और बड़ी ननँद को—श्रीमती महामान्या, परमपूज्या और महामान्या आदि।

छोटी ननँद को—परममाननीय, शीलशिरोमणि आदि।

छोटी बहन को—प्राण प्यारी, नेत्र प्रकाशिनी आदि।

भावज को—सौभाग्य शिरोमणि।

जेठानी को—श्रीमती सर्वगुण खानि।

देवरानी को—रूपनिधान, शीलवान, पतिप्रमोदिनी आदि।

बहू को—कुलदीप्त, शीलवन्त, प्रियवादिनी।

सखी को—प्रिय सखी 'चपला'। (अथवा जो नाम हो)

१

माता के लिये पुत्री के पत्र का नमूना

सूजानगंज 'भागलपुर'
ता: ११—१०—३२ ई०

पूजनीया श्री माताजी,

सादर प्रणाम। आप का आशीर्वाद-पत्र मिला। पढ़कर मन प्रसन्न हुआ। पत्र देने में कुछ विलम्ब हो गया है, कृपया क्षमा करें। यह सुनकर हर्ष होगा कि मुन्नु वार्षिक परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया है।

आप की प्यारी पुत्री
"तारा"

२

बड़े भ्राता के लिये बहिन के पत्र का नमूना

नं० १४० बड़ा बाजार, कलकत्ता
ता: ५—११—१९३२ ई०

पूज्यवर भ्राता जी,

सादर अभिवादन।

बहुत दिनों से कृपापत्र नहीं आता, क्या कारण ? कुशल समाचार लिखने की शीघ्र कृपा करें। जन्मभूमि छोड़े बहुत दिन हो गये। देखने की प्रबल इच्छा बलवती हो गयी है। इसलिये यदि

हो सके तो बुलाने के विषय में पूज्य श्वसुरजी से पत्र व्यवहार कीजियेगा। आप सबों के दर्शन् के लिये आँखें अधीर हो रही हैं। विशेष विनय,

आप की सुखेच्छुका
"मंजरी"

३

सखी के लिये सखी के पत्र का नमूना

शान्ति निकेतन, देवघर—
मि० फाल्गुन कृ० ६ सम्वत् १९८९

प्रिय सखी कमला !
सस्नेह सम्मिलन।

कृपा पत्र मिला। समाचार ज्ञात हुआ। बहुत दिनों के बाद स्मरण किया, इसके लिये धन्यवाद ! यह समाचार पढ़कर अत्यन्त आनन्द हुआ कि आप बाबा वैद्यनाथ के दर्शन के लिये शीघ्र ही देवघर पधारने वाली हैं। यह मेरा सौभाग्य है, जो आप से भेंट होगी। कृपया, इस ग़रीबनी की कुटिया पर ही उतरने की उदारता दिखावेंगी। सब प्रकार का प्रबन्ध ठीक करवा दिया जायगा। उतरने में किसी प्रकार का संकोच न करना, घर आप का ही है। विशेष कृपा,

तुम्हारी बाल सखी
"लक्ष्मी"

४

स्वामी के लिये पत्र का नमूना

चौक बाजार, मुंगेर

ता: १—११—१९३२ ई०

प्रियतम,

सादर प्रणाम।

श्री चरणों की कृपा से मैं सकुशल हूँ। इधर कई दिनो से आप का कोई पत्र नहीं आया, इस से चिन्ता बढ़ती जा रही है। किसी कार्य में मन नहीं लगता है। पत्र देने में इतना विलम्ब न करें, अन्यथा मैं दुखी रहा करूँगी। आप की आज्ञानुसार बच्चों की देख रेख और पालन पोषण करती हूँ। आप विदेश में हैं, अपने स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान रक्खेंगें। अपने आवश्यक खर्च से कभी हाथ नहीं खींचेगें। पत्रोत्तर देकर कृतार्थ करेंगें। दासी पर कृपा बनाये रक्खेंगें। विशेष प्रेम,

चरण किंकरी

"माधुरी"

५

सम्पादक के लिये लेखिका के पत्र का नमूना

कचौड़ी गली, बनारस

मि० चैत्र शु० ३ सम्वत् १९८९

महोदय,

कृपा पत्र मिला। आप की आज्ञानुसार एक छोटी सी "खतरे

की घराटी" शीर्षक रचना प्रकाशनार्थ भेज रही हूँ। यदि रचना मौलिक और उचित समझें तो स्थान दे पत्र द्वारा सूचित करें।

"किशोरी"

६

निमन्त्रण पत्र का नमूना—

बांकीपुर, ता० ५–६–३२

श्रीमती बसन्तलालजी मुरारका

१४५ मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट, कलकत्ता

महामान्या,

सेवा में यह प्रार्थना करते बड़ा ही हर्ष होता है कि श्रीकृष्णचन्द्र की पूर्ण अनुकम्पा से हमारे द्वितीय पुत्र चि० गजानन्द का शुभ विवाह आगामी मि० मार्गशीर्ष शु० १ सोमवार तदनुसार ता: ५—५—३२ को भागलपुर निवासी श्रीमान भगवानदासजी की सर्वगुण सम्पन्ना आयुष्मती कन्या के साथ होना निश्चित हुआ है। विवाह, बांकीपुर में ही होगा। अतएव नम्र निवेदन है कि विवाह के पांच दिन प्रथम ही पधार कर विवाह के सर्व कार्य को सुसम्पन्न करें। आप ऐसी हितैषिकाओं की उपस्थिति और सतपरामर्श से ही विवाह में शोभा की वृद्धि होगी। क्योंकि, विवाह में पर्दा प्रथा को स्थान नहीं मिलेगा।

दर्शनाभिलाषिनी

"सरस्वती"

* * * * *

गृहस्थी के ११ प्रबन्ध

(१) सोते समय इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि कोई द्वार तो नहीं खुला रह गया है। जिस द्वार में ताला लगाना हो उसमें ताला लगा देना चाहिये, जिसमें साँकल लगती हो उसमें साँकल लगा देनी चाहिये और जिन द्वारों के खुले रहने की जरूरत हो, उनको वायु प्रवेश के लिये खुले रहने चाहिये।

(२) जब घर की कोई वस्तु समाप्त होने पर आवे तब उसका कई दिन पहले से प्रबन्ध कर लेना चाहिये। जिस दिन अच्छी और सस्ती मिले मँगा लेनी चाहिये।

(३) अपने घर मे सब वस्तु इस प्रकार और इतनी रखनी चाहिये ताकि यदि कोई पाहुन आ जाय तो बाजार से न मँगवानी पड़े। क्योकि न जाने किस समय पाहुन आ जाय और न जाने किस समय बाजार बन्द रहे।

(४) जो कपडे व अन्य वस्तु (जैसे, अचार, मुरब्बा) धूप लगाने योग्य हो उनको आठवें दिन धूप दिखा देनी चाहिये।

(५) ऊनी, पश्मीने और रेशमी कपड़ो की बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। इन कपड़ो की तह में नीम के सूखे पत्ते व कपूर आदि डालते रहना चाहिये।

(६) जहाँ दीमक लग जाता हो वहाँ कपूर और तम्बाकू को बाराबर बराबर ले और पीस सातवें दिन डाल देनी चाये। ऐसा करने से वहाँ दीमक न लगेगा।

(७) कभी कभी बाजार से आयी हुई चजों को तौलना चाहिये। क्योंकि अक्सर कितने दूकानदार गोलमाल किया करते हैं या कभी कभी नौकर चाकर भी।

(८) घर में वायु सुधारने की विधि है कि हवन करे, गन्धक की धूनी दे, धूप, गुग्गुल, लोहबान इत्यादि देवे अथवा धूप की वत्तियाँ जलावे। वायु सुधारने की विधि नित्य प्रति करनी चाहिये।

(९) जो वस्तु किसी के यहाँ से माँगी हुई आई हो उसको बहुत सावधानी से रखना चाहिये और काम हो जाने के पीछे तुरन्त ही पहुँचा देनी चाहिये।

(१०) बाहर के मनुष्य के सामने अथवा दाई नौकर के सामने कभी गहने व रुपये पैसे का घमण्ड न करे।

(११) यदि कोई भोज आदि करना हो तो उसकी तैयारी कई दिन पहले से ही करनी चाहिये।

*　*　*　*　*

रेल यात्रा की उपयोगी बातें

(१) एक वर्ष से लेकर तीन वर्ष के बच्चो तक का टिकट नहीं लगता। १२ वर्ष वालों तक का आधा टिकट लेना चाहिये।

(२) ज　नो गाड़ी　पुरु ा नहीं जा स　और मातायें १२ वर्ष तक के बच्चो को साथ बैठा सकती हैं।

(३) टिकट ले चुकने पर यदि गाड़ी पर चढ़ने को न मिले तो ३ घन्टे के अन्दर टिकट वापिस कर दाम लौटा लेना चाहिये। टिकट काटने वाला दाम लौटा देगा। न लौटाने पर स्टेशन मास्टर से कहना चाहिये। कानून के मुताबिक रेलवे कम्पनी को दाम लौटा देना पड़ेगा।

(४) रेल में अधिक दूर की सफ़र करने वाली स्त्री या पुरुष कहीं भी १०० मील के बाद उतरकर २४ घन्टे विश्राम कर फिर उसी टिकट से आगे जा सकता है।

(५) तीसरे दर्जे का यात्री बिछौने के अतिरिक्त २५ सेर, डेवढ़े का ३० सेर, दूसरे दर्जे का एक मन, और पहले दर्जे का डेढ़ मन (१।।) सामान अपने साथ लेकर चल सकता है।

(६) रेलवे कर्मचारी को जब कोई रकम दो, तब उससे रसीद अवश्य ले लो। रसीद में यदि कोई अनुचित रकम होगी तो वह लिखा पढ़ी कर के वापिस ली जा सकती है।

तृतीय भाग

भोजन-संस्कार

भोजन संस्कार सूप-विद्या के नाम से प्रसिद्ध है। यह विद्या बहुत बड़ी है। योतो प्रायः सभी स्त्रियाँ इसको जानती हैं, पर जिसप्रकार से जानना चाहिये, वैसे नहीं जानतीं। इसलिये यह विद्या स्त्रियों के सीखने योग्य है। क्योंकि यदि यह विद्या जानती होगी, तब तो अपने प्रबन्ध से भी अच्छा भोजन बनवा लेगी; नहीं तो दूसरे के हाथ से वही बुरा भला, कच्चा पक्का, जैसा तैसा और जला भुलसा पल्ले पड़ेगा। अर्थात् खर्च भी विशेष लगेगा और भोजन भी ठीक नहीं मिलेगा।

भोजन बनाने का भार स्त्रियों पर ही रहना अच्छा है। इस कारण कि विशेषतर स्त्रियाँ घर मे ही रहती हैं। हमारे यहाँ छप्पन भोग और छत्तीस व्यञ्जन अब तक प्रसिद्ध चले आते हैं। इससे साफ साफ पता लगता है कि किसी समय हमारी मातायें और बहिनें भोजन बनाने मे अर्थात् सूप-विद्या में बहुत ही चातुर थीं। उस समय एक एक वस्तु में नाना प्रकार की सामग्री बनायी जाती थी। पर अब वह बात नहीं। क्योंकि, स्त्रियाँ प्रायः क्रियाहीन हो गयी हैं और इस विद्याको एक साधारण विद्या समझ इस ओर ध्यान ही नहीं देतीं। स्त्रियो को यह विद्या अवश्य ही सीखनी चाहिये। नहीं तो स्त्री को समय पर भूखों मरना पड़ेगा।

अधिकाश घर ऐसे मिलेंगे जहाँ नौकर चाकर और ठाकुरों के रखने की समाई नहीं; वहाँ खासकर भोजनादि स्त्रियों को ही बनाना पड़ता है। यदि भोजन न बना सकी और बाजार से मोल मँगा कर खाना पड़े, तो एक तो मूल्य अधिक लगेगा, दूसरे तृप्ति नहीं होगी, तीसरे बाजार की चीजें बराबर मँगा कर खाने से बिमारी होने का भय रहता है। यदि स्त्री भोजन बनाना जाने तो उसे बाजार से दाम देकर मोल मँगाने की जरूरत न पड़ेगी और उतने ही दाम में बाजार से ड्योढ़ी और दूनी अच्छी चीजें घर पर तैयार हो जाँयगी।

भोजन स्वच्छ स्वरूप और स्वादिष्ट होना चाहिये। इन बातो के होने से भोजन में रुचि उत्पन्न होती है और इन बातों के न होने से उसी भोजन में अरुचि और ग्लानि पैदा हो जाती है।

भोजन बनाने में स्वच्छता की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। भोजन बनाने वाली स्त्री या पुरुष मिष्ठ भाषी होना चाहिये। दूसरे, उसे किसी प्रकार के खाज, खुजली, और उड़कर लगने वाले रोग न हो। जिन वस्तुओं का भोजन बनाया जाय उन वस्तुओं को पहले फटक और चुनकर साफ कर लेना चाहिये और जिन पात्रो में भोजन बनें वा रक्खे जाँय, वे पात्र भी मजे धुले और स्वच्छ रहें तथा मैले कुचैले न हों। स्थान भी रसोई का स्वच्छ और पवित्र रहे। साथ साथ एक दो स्वच्छ रुमाल हाथ आदि पोछने के लिये-रसोई कर्त्ता के पास रहना आवश्यक है।

भोजन बनानेके समय व भोजनके स्थान में कोई ग्लानि कारक बातें न बोलनी चाहिये और यह स्मरण रखना चाहिये कि एक भोजन दूसरे भोजन से न मिले। एक भोजन के सने हुए पात्र को जब तक धोकर स्वच्छ न कर लिया जाय तबतक दूसरा भोजन उस पात्र में न बनना चाहिये। नमक मसाला भी इसी हिसाब से पड़ना चाहिये ताकि कम व अधिक न हो और भोजन ऐसा भी न बनाना चाहिये जो या तो कच्चा ही रह जाय या विशेष जल जाय। खटाई की वस्तु को सदा पत्थर, काँचा, मिट्टी, कांसी और सिलभर इत्यादि के बासनों में रखना चाहिये। ताम्बे और पीतल के बर्तनों में खटाई के पदार्थ पितला जाते है।

भोजन को सदैव किसी वस्तु से ढँक कर रखना चाहिये ताकि भोजन में मक्खी आदि न लगने पाय। जाड़े के दिनों में भोजन ठण्डा होने का भय है, अतः भोजन को चूल्हे के पास रखना

चाहिये, ताकि ठन्डा न हो। यदि किसी दूसरे स्थान को भोजन भेजना हो तो ढँककर भेजे और स्वच्छ मनुष्य के हाथ भेजे। गन्दे और मैले कुचैले मनुष्य के हाथ भेजने से खाने वाले को अरुचि और ग्लानि पैदा हो जाती है।

भोजन बनाने के दो समय हैं। एक प्रात काल,दूसरा सायंकाल। प्रातःकाल में जो पदार्थ करते हैं, उसको रसोई कहते हैं और सायंकाल में जो करते हैं उसको ब्यालू कहते हैं। प्रातःकाल की रसोई ७-८ बजे से ११-१२ बजे दिन तक करनी उचित है और इसी प्रकार सायंकाल ४ बजे से लेकर रात्रि के नौ बजे तक ब्यालू करने का समय है। इसके उपरान्त भोजन निषेध है।

* * * * *

पाक विधान—प्राचीन काल में इस भारतवर्ष में जैसे ज्योतिष, वैद्यक, न्याय, साख्य और व्याकरण आदि ग्रन्थो की उन्नति थी; इसी प्रकार पाकशास्त्र की भी अत्यंत उन्नति थी और इसके अनेक ग्रन्थ थे, जैसे;—नलपाक, भीमपाक, सीतापाक और भोजपाक आदि। पाक कितने प्रकार के हैं, इसकी संख्या नहीं कही जा सकती। क्योकि; पाक, देश देश में भिन्न भिन्न और उनके बनाने की विधि भी भिन्न भिन्न है। फिर बङ्गाली, गुजराती, मेरठी, मारवाड़ी, कर्नाटकी, पंजाबी और दक्षिणी आदि के पाकों की संख्या लिखनी दूर है, अतएव अनन्त है। इसलिये संक्षेप में थोड़े से पा ों के बनाने की विधि आगे चल कर लिखेंगे। यदि

इस विषय में किसी बहन को विशेष जानकारी प्राप्त करना हो तो उसे उपरोक्त प्राचीन ग्रन्थ मगा कर देखना चाहिये।

*   *   *   *   *

षटरस भोजन—स्वाद को लेकर भोजन के मुख्य ६ रस गिने जाते हैं। जैसे,—

(१) पेय (जो पीकर खाया जाय) जैसे दूध, रायता आदि।

(२) लेह्य (जो चाटा जाय) जैसे चटनी।

(३) चोष्य (जो चूस कर खाया जाय) जैसे आम।

(४) चर्व्य (जो चाब कर खाया जाय) जैसे दाल, सेव आदि।

(५) भक्ष्य (जो निगल कर खाया जाय) जैसे खीर, मोहनभोग आदि।

(६) भोज्य (जो रौंथ रौंथ कर खाया जाय) जैसे रोटी।

*   *   *   *   *

गेहूँ की रोटी—यों तो जव, चना, मक्का और बजरा इत्यादि की भ रोटी बनाई जाती है। परन्तु सब से अच्छी रोटी गेहूँ की ही होती है। रोटी कई प्रकारसे बनती है, जैसे पनफती, चाकले बेलन की, खमीरी डबलरोटी और पावरोटी आदि। आटे को जितना लोचा दिया जायगा, रोटी उतनी ही अच्छी होगी।

पनफती रोटी उसे कहते हैं, जो परोथन लगाये बिना केवल पानी के हाथ से बनायी जाती है। दूसरी को परोथन लगाकर

चकले वेलन से वनाते हैं। वनाने की विधि यह है कि गेहूँ के आटे को लेकर थोड़े पानी से भिगाकर छोड़ दे। एक घण्टे वाद आटे को ऐसा साने जो गूदा के सम्मान हो जाय, फिर [illegible] कर चकले वेलन पर वेल जैसी इच्छा हो मोटी या पतली रोटी वना, तवे पर रख दे। जब रोटी कुछ सिक जावें तब उतारकर दूसरे ढंग से तवे पर डाल दे। इस भाँति सेकने पर जब रोटी का रंग वादामी हो जाय तब उतारकर अंगारों पर चारों ढंग से सेंक ले। और जब सिक जावें तब उठा कपड़े से पोंछ घृत से चुपड़ कर रख दे। मगर रोटी कच्ची न रहने पावे, मधुरी आँच से सेंके तथा इतनी भी न सेके जो जल जाय। गेहूँ की रोटी पुष्ट है, वीर्य को बढ़ाती है तथा मन को प्रसन्न रखती है। विमारी के समय रोटी में घृत लगाना मना है, क्योंकि घृत लगाई हुई रोटी देर से हजम होती है।

भात—चावल, वाजरा, सावाँ, कोदो इत्यादि का भात वनाया जाता है। परन्तु मुख्य भात चावल का ही कहलाता है और यही भात और भातों की अपेक्षा उत्तम है। चावल जितना महीन, लम्बा और पुराना होता है, उतना ही अच्छा भात वनता है। चावल के भी कई व्यञ्जन वनते हैं, जैसे—भात, खिचड़ी, तोहरी और खीर आदि। भात भी कई प्रकार के होते हैं, जैसे—सादा, केसरिया, नमकीन और मीठा इत्यादि।

चावलों को वीन फटक कर फिटकरी के पानी से तीन वार धो डाले। इसके वाद पानी को खूब औटाकर चावल उसमें डाल दे।

पानी को चावलों से ६—७ अँगुल वरन दस अंगुल तक ऊँचा रहने दे अर्थात्, पानी चावलों से तिगुना होना चाहिये। इसमें थोड़ी सी सोंठ व अदरक कूट कर डाल दे। इससे चावलो की वादी निकल जाती है। जब चावलो में एक कनी रहे तब कपड़े से बट-लोहे का मुख बाँध कर उलटा करके माँड को पसा दे और थोड़ा सा घृत डाल कर अंगारो पर रख दे। इसका ध्यान रहे कि पानी पसाकर सब निकाल दिया जाय। अंगारों पर बटलोहे को दो तीन वेर खूब हिला दे और यदि दो तीन बुन्द गुलाब व केवडे के इत्र डाल दे तो वहुत ही अच्छी सुगन्धि हो जायगी। यदि भात नमकीन बनाना चाहे तो थोड़ा सा नमक भी डाल दे।

मीठे चावल—जितने अच्छे, चोखे और धुले चावल ले, उतने ही तौल का घृत, उतने ही तौल की चीनी, उतना ही दूध और उतना ही पानी डालकर एक साथ चूल्हे पर चढ़ा दे और धीमी २ आग से पकावे, चावल एक एक खिल जायगा।

केसरिया भात—(१) चावलो को धोकर अदहन में छोड़ दे। सेर भर मे ६ मासे के हिसाव से केसर पीसकर डाल दे और चीनी भी डाल दे, फिर गर्म मसाले का छौंक देदे, थोडी सी जावित्री और खटाई भी डाल दे।

(२) एक सेर अच्छा चावल लेकर ६ सेर पानी मे तरकीब के साथ बनावे। जब चावल तीन हिस्सा चुर जाय तब उतार के

माँड़-पानी को दूर करे। फिर भात को कपड़े पर छिटकाय दे, ऊपर से केसर, गुजराती इलायची का दाना पीसकर चावलों के ऊपर छिड़के। ये चावल गर्म है, हल्के है, वीर्यकारक हैं और स्वादिष्ट हैं।

अरहर के दाल की खीचड़ी—खिचड़ी मूँग और अरहर के दाल की बहुधा वनती है। यह दो प्रकार से बनायी जाती है एक सादी दूसरी भुनी हुई। खिचड़ी बिना मसाले के अच्छी नही वनती। अरहर के दाल की खिचड़ी बनाने के लिये चावल तीन भाग और अरहर की दाल दो भाग चाहिये। पहिले पानी का अर्द्हन देकर दाल को डाल पकाले। जब दाल अधचुरी हो जाय तब चावल धोकर डाल दे। मधुरी आंच से पकावे। जब खूब गल जाय तब हल्दी, अदरख, धनियाँ, काली या लाल मिर्च तथा हींग का तड़का दे, या पीसकर छोड़ दे। फिर नमक और घृत छोड़े। यह खिचड़ी रुचिकारक हैं, भारी है, स्वादिष्ट है। जो स्त्री या पुरुष जुलाब लेवे उसके लिये यह खिचड़ी गुणकारी है। परन्तु अधिक कमजोर के लिये मूँग की दाल की खिचड़ी ही उचित है।

मूँग की दाल की खिचड़ी—यदि मूँग की दाल की खिचड़ी बनानी हो तो मूँग चावल बराबर लेकर उपरोक्त विधि से खिचडी बनावे। जब खिचड़ी चुर जावे तो हल्दी, मिर्च, अदरख, धनियाँ, मेथी, लौंग, दालचीनी आदि पीसकर छोड़ दे। ऊपर से घृत और नमक छोड़ दे। पीछे उतार ले। यह खिचड़ी खाने मे मीठी है और त्रिदोष के लिये गुणकारी है।

भुनी खिचड़ी—धुली हुई मूँग की दाल और चावल को घृत में भुन ले। पीछे निकालकर गर्म मसाले से छौंक, नमक मसाला डाल, अदहन का पानी एक अँगुल ऊँचा भर दे और ढंक दे। पीछे थोड़ा सा घृत और डाल दे और अंगारों पर रख दे। सब खिल जायगी।

दाल के छिलके छुड़ाने की विधि—मूँग, उरद, अरहर, मटर, चना, मसूर, कुलथी और मोठ इत्यादि की दाल बनती है। दाल छिलके की और धुली हुई दो प्रकार की होती है। एक तो तुरन्त पानी में डालकर भीज जावे और फूल आवे तब उसका छिलका पानी मे धोकर अलग कर लेते हैं। दूसरी विधि यह है कि तेल पानी का हाथ लगाकर रात भर ढँक कर रख देते हैं और सवेरे धूप मे सुखा देते हैं। जब सूखकर छिलका अलग हो जाय तब उसको ओखली मे डालकर मूसल से कूट लेते हैं। तब छिलका बिल्कुल उतर जाता है। यही विधि अच्छी भी है। क्योंकि, इसमें स्वाद भी अच्छा रहता है और पकाने मे सोधापन रहता है।

अरहर की दाल—अरहर की दाल घी में भूँज ले। फिर पानी डाल के पकावे। जब खूब चुर जावे तब हर्दी, मिर्चा, धनियाँ पीसकर डाले। ऊपर से खटाई, नोन, घृत छोड़ हींग और जीरे की छौंक दे उतार ले। यह दाल शीतल है, रुचिकारक है और कफकारक है। घृत संयुक्त यह दाल त्रिदोप को दूर करती है। यदि अरहर की दाल न भी भुनी जाय तो पानी को दाल डालने के प्रथम

गर्म कर लेना आवश्यक है। परन्तु भुँजी हुई दाल विशेष स्वादिष्ट होती है।

मूंग की दाल—मूँग की दाल बनाने की विधि यह है कि मूँग की दाल लेकर बटलोही में थोड़ा घृत डाल भूँज ले, फिर थोड़ा पानी डाल के पकावे। जब दाल गल जाय तब मिर्च, हर्दी, धनिया, लौंग आदि सब मसाला थोड़ा २ डाले। जब दाल पक जाय तब घृत और नमक डाल जीरे और हींग का छौंक दे उतार ले। यह दाल हल्की है, शीतल है, कफ पित्त और वातनाशक है।

चने (बूँट) की दाल—चने की दाल भी प्रायः उपरोक्त विधि से ही बनायी जाती है।

उरद की दाल—उरद की दाल धोई हुई लेकर उपरोक्त तरकीब के मुताबिक बनावे। जब दाल चुर जावे तब लौंग का चूर्ण डाल हींग का तड़का दे नोन घृत डाल के उतार लेवे। यह दाल चिकनी है, वीर्य वाली है, स्वादिष्ट है और धातु को बढ़ाती है। परन्तु गर्म है, कफ पित्त करती है और बीमार पुरुष के लिये हानिकर है।

सब प्रकार की दाल—सब प्रकार की दाल एक में मिलाकर बनाने की उपरोक्त विधि बहुत ही उत्तम है। यह दाल बहुत स्वादिष्ट होती है।

दाल का पानी—मूँग की दाल का पानी रोगी मनुष्य के लिये बनाया जाता है। पहले दाल को पानी में खूब धो डाले,।

दसगुने पानी में पकावे। पकते समय थोड़ा सा नमक डाल दे। जब पक जाय तब उतार ले और कपड़े में पानी को छान ले। यदि स्वाद अच्छा करना चाहे तो जीरे का छौंक दे दे और थोड़ी सी काली मिर्च और बड़ी इलायची पीसकर डाल दे। यह प्रथम उस रोगी को दिया जाता है, जिसको बहुत से लंघन हो चुके हो। जितने लंघन कम हुए हों उतना ही गुना पानी कम लिया जाता है।

दलिया—यों तो यह कई नाज ज्वार, मक्का इत्यादि का भी बनता है, जिसको मेंहरी भी कहते हैं, परन्तु; जो दलिया के नाम से प्रसिद्ध है, वह गेहूँ का ही अच्छा होता है। यह हलका भोजन है। गेहूँ को पानी में धोकर सुखा लेवे और भाँड़ पर एक वालू से भुनवा ले। पीछे उसको दल डाले और थोड़ा सा घृत कड़ाही व बटलोही में डाल के भुन ले। इसके पीछे एक बर्तन मे दूध व पानी आग पर रक्खे और खूब गर्म करके भुना दलिया थोड़ा थोड़ा करके इसमें डाले और कलछी से चलाती जावे, ताकि गुठले न पड़े। जब खूब पक जाय तब नमक व चीनी डाल कर खावे।

बड़ी----बड़ी उरद के दाल की बनती है। बनाने की विधि यह है कि दाल को लेकर पानी में रात को भिगो दे। जब फूलकर भींग जावे, तब उसको धोकर उसका छिलका उतार लेवे। छिलका रहित निगी दाल सिलबट्टे पर पीस लेवे। जब पिट्ठी पिस जावे, तब इसमे महीन कूटा हुआ मसाला डालदे; चाहे तेज या मन्दा, जैसा खाना हो। पिट्ठी को जितनी हाथ से पानी डाल डालकर धोई व फेंटी जायगी; बड़ी उतनी ही हलकी और फोंकी होगी।

जब इस भाति पिट्ठी तैयार हो जाय तब चटाई व.सिरकी पर इसकी बड़ी तोड़ देवे और धूप में सुखा लेवे। जब विलकुल सूख जावे, तव उतारकर रख ले। पिट्ठी को पीसकर एक रात भर रक्खी रहने देते हैं, ताकि वह खट्टी हो जाय। फिर बड़ी तोड़ते है। तीन दिनसे अधिक पिट्ठी को नहीं रखनी चाहिये, सो भी जाड़े मे। गर्मी मे एक दिन में ही उतनी खट्टी हो जाती है। वर्षा ऋतु में पिट्ठी शीघ्र ही खट्टी पड़ जाती हैं। इसलिये इस ऋतु मे बड़ी और मँगोड़ी नहीं बनायी जाती। वर्षा ऋतु में बादलो के कारण सूखने का अवसर नहीं मिलता इसलिये बड़ी सड़ जाती हैं।

मुँगौड़ी व चनौरी--मुँगौड़ी व चनौरी मूँग व बूँट के दालकी बनती है। प्रथम दालको भिगोकर और उसकी पिट्ठी पीस-कर मुँगौड़ी तोड़ ले। राँधने की क्रिया यह है कि इनको लोढ़ी से तोड़कर कुछ महीन कर ले। फिर एक बर्तन में घृत डालकर आग पर रखदे और उसमें वह महीन मुँगौड़ी डाल हौले-हौले भुन डाले। जब भुन जावे और कच्ची न रहे तव पानी डाल के मसाला और नमक डालदे और आग पर ही रहने दे। जब गल जाय, तब जाने कि मुँगौड़ी तैयार होगई।

टटकी मुँगौड़ी--यह मूँग की पिट्ठी की बहुधा बनती है,और यह विशेषकर रोगी के लिये बनायी जाती है। बनाने की विधि यह है कि पिट्ठी को महीन पीस, मसाला इत्यादि मिलाकर, कड़ाही में घृत चढ़ा पूड़ी की भांति तल ले।

तिल मुँगौड़ी—उड़द की दाल की पट्ठी को खूब महीन पीस और पानी डाल खूब गहे। जितनी गहेगी, उतनी ही फोंकी होगी। इसमें थोड़े से धुले हुए सफेद तिल मिला दे और खूब मिलावे। थोड़ा नमक, मिर्च और मसाला भी इसमें डाल दे। फिर मुँगौड़ी तोड़कर सुखा लेवे। खाने की इच्छा होने पर घृतमे तल ले। यदि नमक-मिर्च पहले कम डाला हो तो अब थोड़ा सा और लगा दे।

कढ़ी—यह बहुधा बेसन की बनती है, पर कोई २ मूँग की दाल की पिट्ठी की भी बनाते हैं। इसमें कितनी बहने पकौड़ी व बेसन की टेंटी भी डालती है। यह जितनी पकाई जाती है, उतनी ही अच्छी होती है। पहले पकौड़ी व टेंटी बनाकर तैयार रक्खे। पीछे मट्ठे व दही के पानी मे बेसन या मूँग की पिट्ठी को घोल लेवे। कड़ाही मे घृत डालकर जीरेका छौंक देवे। जब छौंक तैयार हो जाय तब मट्ठे के घोल को इस कड़ाही में डाल देवे। जब मट्ठे में बेसन इत्यादि घोले तब उसमे नमक-मसाला भी पीसकर मिला देना चाहिये। जब कई बार ऊफान आ जाय और खूब पका ली जा यतब उतार ले। पकौड़ी व टेंटी डालनी हो तो कुछ देर उतारने के पहले डाल दे।

झोर--झोर भी एक प्रकार की कढ़ी ही है, परन्तु मथुरा के चौबे उनको झोर कहते हैं। झोर को गुजरातियो में ओसावन, महाराष्ट्रो मे कढ और ओसवालों मे माडिया कहते हैं। यह कढ़ी

से बहुत ही पतला बनाया जाता है। चौबों के प्रत्येक भोज में झोर अवश्य होता है। क्रिया वही कढ़ी की है, परन्तु इसका घोल बहुत ही पतला रक्खा जाता है। इस घोल को निरा पानी सा रक्खे और मिर्च मसाला खूब दे। जब इक्कीस ऊफान आवे, तब उतार ले। कम ऊफान देने से झोर अच्छा नही होता।

शाक और भाजी--शाक तरकारियाँ तो अनेक प्रकार की इस संसार में होती हैं, परन्तु उनमें मुख्य पाँच भेद है, जैसे--कन्द, फल, पत्र, फूल और कली। कन्द उसको कहते हैं, जो धरती के भीतर पैदा होता है और जिसे खोदकर निकालते है, जैसे--जमीकन्द, सकरकन्द, आलू, सलगम, गाजर और मूली इत्यादि। फल उसे कहते हैं, जो पेड़ मे लगते है या बेल में लटकते हैं, जैसे बैंगन, घीया, करेला, भिन्डी और खरबूजा इत्यादि। पत्र उसे कहते हैं, जिसका मूल और फल से कोई प्रयोजन नही, केवल पत्तो से है, जैसे--मेथी, सोआ, पालक, लालरा और चने का शाक इत्यादि। फली उसे कहते हैं, जो बेल से या छोटे २ पौधो से लगती है, जैसे--मटर की फली, सहिजने की, साँगर की, सेम की फली और रामफली इत्यादि। फूल में कचनार और गोभी आदि ही मुख्य हैं।

शाक-शाक बनाने की विधि यह है कि शाक से प्रथम सड़े-गले पत्ते निकाल लेवे तथा तिनका व अन्य वस्तु उसमे न रहे। पीछे पानी से दो तीन बेर खूब धो डाले, जिससे मैल मिट्टी धुलकर सब निकल जावे। पीछे जो बनारने की आवश्यकता हो तो

से बनार ले। इसके बाद विधिवत बनावें। कितनी दही में पकाती हैं, कितनी बेसन के साथ बनाती हैं, कितनी योंही पानी में उबाल-कर और कितनी घृत में तलती हैं।

आलू -आलू एक ऐसी भाजी है कि इसके बराबर दूसरी कोई भाजी संसार में नहीं खपती। यह केवल नमक-मिर्च से भी बन जाती है और घृत मसालों से भी। पृथ्वी के कोने २ में यह भाजी बारहो महीने खायी जाती है।

आलू कई प्रकार से बनते हैं, जैसे-साधारण, रस्सेदार, भर्ता, दम और अन्य के संग जैसे-आलू और मेथी। साधारण आलू बनाने की विधि यह है कि कच्चे आलू को छील कर बनार ले। पीछे धनियाँ, हर्दी और अपने खानेके अनुसार लाल मिर्चा पीसले। पीछे घृत में हींग और लौंग का बघार देकर मसाले को भुन ले। जब हलदाइन जाती रहे तब आलू डालदे और यह मसाला डाले—काला जीरा, बड़ी इलायची, काली मिर्च, अन्दाज का पानी और अन्दाज का नमक डालकर पकने दे। गलने पर उतार ले।

रस्सेदार—उपरोक्त विधि में जो पानी अधिक डाल दे तो रस्सेदार बन जायगा।

भर्ता—यों तो भर्ता भी कई विधि से बनाया जाता है। पर साधारण विधि यह है कि आलू को उबालकर या भाड़ अथवा अंगारो पर भुनकर छिलका उतारकर नमक, मिर्चा, अमचूर और पिसा हुआ धनियाँ मिला दे। फिर घृत और हींग की धूनी दे दे और किसी बर्तन से ढँक दे।

दम—बड़े २ आलू लेकर ऊपर से कच्चे ही छील ले और दस दस पांच पांच छेद कर दे और यह मसाला मल दे—धनियाँ, काली मिर्च, छोटी इलायची, दालचीनी, लौंग, दही और इमली बटले में घृत डालकर थोड़ा सा तेजपत्र डाल दे। जब गर्म हो जाय तब आलुओ को मसाले सहित इसमें डाल दे और खूब भुनकर थोड़ा सा पानी डाल मुख बन्द कर दे। जब आलू गल जाय और पानी सूखने लगे तब उतार ले। आग मन्दी लगनी चाहिये और मसाला अन्दाज से पड़ना चाहिये।

तले हुए आलू—विधि यह है कि आलू की छोटी २ कापी बनाकर घृत में तलले। पीछे गर्म मसाला और नमक मिर्च मिलाकर खाय।

ज़मीकन्द—यह कई प्रकार का बनता है। लोग अपनी २ रीतिको अच्छी और सुगम बताते हैं। परन्तु सुगम वही है, जिसमें खुजली न रहे और घृत कम लगे, क्योंकि इसमें घृत ही मुख्य है। घृत बराबर तक का, वरन सवाया तक लग जाता है। सेर आध सेर तो इसको हर कोई बना लेता है, पर मनों बनाने की क्रिया किसी को मालूम नहीं। वह क्रिया यहाँ बतलाई जाती है। ज़मीकन्द के चेंप में खुजली होती है। यदि किसी प्रकार चेंप को दूर कर दिया जाय तो खुजली न रहेगी।

(१) हाथ में घी व तैल चुपड़कर इसके छिलके को चाकू से छील कर कनले करले। पूड़ी की भाँति कड़ाही में घत चढ़ाकर उतार ले। इसको सुगम रीति कहते हैं।

(२) कपरौटी करके भाड़ में भर्ता करा ले तो बहुत ही अच्छा है। ऊपर का छिलका छील डाले और नमक, मिर्च, धनियाँ गर्म मसाला मिलाकर जितने घृत में चाहे छौंक ले।

(३) हाथों में घी व तैल चुपड़कर चाकू से छील ले और छोटे २ कतले कर के पिसा हुआ नीम* उनमें खूब मिला दे और एक परात में टेढ़ा करके धूप मे रख दे। दो घन्टे तक रक्खा रहने दे। सब चेंप निकल कर परात में तले को आ जावेगा। उसको फेक देवे। अब इनको तनिक धोकर साधारण भाँति से मसाला डालकर छौंक ले। खुजली न रहेगी। यही रीति मनो बनाने की है।

(४) कच्चा जिमीकन्द लेकर ऊपर से छील डाले। उसके टुकड़े कर उसी के बराबर भुने हुए खिलवाँ चनो का आटा मिला, नमक, मिर्च, मसाला गिराकर पीस लेवे। खुजली नाम को भी न रहेगी। यह जमीकन्द की चटनी है।

करेला—(१) करेला को लेकर कतरा बनावे, पीछे नमक लपेट कर धूपमे दो घण्टे रक्खे। फिर हर्दी, मिर्चा, दालचीनी और

नोट—जमीकन्द छिलने वाली, हाथों में घी चुपड़ ले, नहीं चुपड़ने से वहाँ झाक अर्थात् खुजली हो जाती है, जहाँ इसका हाथ लगता है। इसकी खुजली के मिटाने की यह रीति है कि भैंस के गोबर से खूब मलकर धोवे, पीछे पीली मिट्टी से धोकर घृत लगाले। खुजली जाती रहेगी।

धनियाँ कूट के छोड़े। पीछे तैल तथा घृत में तले और माधुरी आंच से चुरावै। फिर अमचूर-और नमक डालकर उतार ले। यह भाजी गर्म है और पित्त को जलाती है।

(२) करेलों को चीरकर, नमक मिलाकर, पानी छोड़कर पकावे। जब पक जाय तब उतारकर पानी दूर करे; फिर घृत तथा तैल में तले। ऊपर से नीमक और अमचूर मिलाकर उतार लेवे।

(३) भरवां करेले वनाने की यह रीति है कि प्रथम करेलो को छील चाकू से फाँक करे। परन्तु फाँक करने के समय यह स्मरण रक्खे कि करेले की फाँक जुदी न हो जाय और उसमें के बीज भी निकाल डाले। फिर उसमें तनिक सा नमक भुरका दे और एक एक करेले को उठा दोनो हाथो से खूब मसले। जब मसल चुके तब उसका पानी फेंक दे और तीन चार पानी से और धोकर किसी पात्र में धर दे। फिर यह मसाला तैयार करे--जीरा सफेद और स्याह, धनियाँ, सोंठ, काली मिर्च, बड़ी इलायची, सफेद अमचूर, नमक और हींग। इन मसालों में थोड़ा सा घृत गर्म कर मिला दे। फिर एक करेला को उठाकर, उसमें थोड़ा सा मसाला भर कच्चा सूत उसपर तीन चार फेरे लपेट किसी पात्र में रक्खे। जहाँ तक करेले हों, वहाँ तक यही रीति करे। जब सब करेले हो चुकें तब वटलोही में घृत डाल कर चूल्हे पर चढ़ा दे और मन्दी २ आँच करे। जब घृत गर्म होजाय तब करेलों को छौंक दे और वटलोही को सन्डसी से पकड़ उछाल दे। उसके वाद वटलोही पर पानी का भरा पात्र भी ढँक दे और थोड़ा सा पानी वटलोही में भी डालदे।

न गले तब तक पाँच सात बेर उछाल दे। इसके बाद बटलोही को अंगारे पर रख दे। जब पानी बिल्कुल खुश्क हो जाय तब किसी पात्र में निकाल ले। इस रीति के करेले बहुत ही स्वादिष्ट होते हैं।

भिण्डी--यह साबित अच्छी बनती है। दही इसमें मुख्य है। जहाँ तक हो सके, सूखी रक्खे, चिपकाहट न रहने दे। इसके दोनो सिरो को काट डालते हैं। चाहे कतले करके बनाले चाहे साबित। जो साबित बनानी होवे तो चाकू से फाँक कर करके इनमें कुटा हुआ मसाला भरदे। घृतमे हींग का वघार देकर इनको डालदे और थोड़ासा पानी डालकर कलछी से उलट पुलट कर भुनले। पीछे थोड़ासा दही डालकर चालादे। ऊपर से पानी का कटोरा भर कर रखदे और मन्दी २ आग से सीझने दे। जब गल जावें तब उतार ले।

बैंगन—एक सेर बैंगन को लेकर एक-एक अंगुल के टुकड़े करले। पाव भर घी को वा अन्दाज मुताबिक घी को बटलोही में चढ़ाकर जीरे का वघार दे और फिर इन पिसे हुए मसालो को इस में भुनले। हर्दी ६ मासे, धनियाँ दो तोले और लाल मिर्च दो तोले ऊपर से पाव भर दही डाल दे। इसके पीछे बैंगन डालकर डेढ़ पाव पानी और ऊपर से डाल दे। आध घण्टे तक पकावे। जब गल जावे तब डेढ़ तोला कतरा हुआ पोदीना और चार मासे पिसा हुआ गर्म मसाला डालकर खूब चलादे और नमक डाल उतार ले।

भर्ता—बड़े बड़े बैंगन मँगवा भाड़ में भुनवा ले। फिर बैंगन छील, किसी पात्र में रख उस बैगन को हाथ की अंगुलियों से

कुचल दे और उसमें नमक, घृत अनुमान से डाल दे। फिर जीरा, लौंग आदि पीसकर घृत डाल चूल्हे पर चढ़ाकर मन्दी मन्दी आँच करे। जब मसाला भुँज जाय तब हींग का वघार दे भर्ते को उसमें डाल कलछी से खूब चला दे। पीछे उतार ले। खूब स्वा-दिष्ट भर्ता तैयार हो जाता है। साधारण भर्ते की सीधी तरकीब यह है कि भाड़ में भुनवाकर छिलके छुड़ा, गूदे को खूब मल, नमक मिर्च, गर्म मसाले मिला हींग और घृत की धूनी दे दे। भर्ता बड़े बैंगन का, जिसको मारू कहते हैं, अच्छा होता है।

परवर—यों तो परवर को बनार बनारकर तरकारी भी बनायी जाती है। इसलिये यह विधि यहाँ लिख दी जाती है। परवल लेक, खड़े चीरे। फिर—हर्दी, धनियाँ और मेथी कूट कूट उनमें भरे और घृत में मधुरी आँच से भूँजे। जब चुर जावे तब काली मिर्चा और नमक एक में पीसकर परवरो में मिलावे। यह भाजी मन को प्रसन्न करती है और खूब स्वादिष्ट है।

बिमारी के लिये परवरों का रस्सा बनाया जाता है। इसमें मुख्य, भोर होता है और जितना भोर अधिक हो उतना ही रस्सा अच्छा होता है। इसकी तरकीब प्रायः सभी बहनें जानती हैं।

चटनी—यो तो नमक, मिर्चा, धनियाँ, जीरा, हींग और अमचूर डाल कर पानी में पीस कर चटनी बना ली जाती है। परन्तु चटनी बहुत अच्छी बनती हैं। उनमें से कुछ यहाँ लिखी जाती हैं।

निम्बू की चटनी—पुदीना, अदरख, धनियाँ और मिर्चा को पीस कर उसी में निम्बू का रस मिलावे। यह चटनी स्वादिष्ट और रुचिकारक है।

करौंदा की चटनी—करौंदा, अदरख, मिर्चा, धनियाँ के पत्ते और नमक को एक में मिला कर पीस लेवे। यह चाटनी स्वादिष्ट है, रुचिकारक है और भोजन को पचाती है। करौंदा की चाटनी छौंक कर भी बनायी जाती है, इसमें थोड़ा मीठा पड़ता है। छौंकने की विधि साधारण है।

मीठी चटनी—एक तोला सूखा अमचुर, नमक, मिर्चा, और हरा पोदीना, सबको सिरके में पीस लेवे। नमक मिर्चा तेज रखनी चाहिये। अब दो तोले किसमिस डालकर दोबारा पीसे। फिर उसमें एक तोला मिश्री, कुछ सिरका और नमक मिर्चा डाल कर पीस लेवे। फिर एक मासा इलायची और ६ मासे गुलाबजल डाले। नमक मिर्चा इतना डाले कि खटाई, मिठाई, नमक और मिर्चा चारों के स्वाद बराबर हो जाँय।

आम की चटनी—आम को छील कर, उसमें अदरख, लाल मिर्च, जीरा, धनियाँ के पत्ते, पुदीना और नमक मिला कर पीस लेवे। यह चटनी गर्म है।

नौरतन चटनी—एक सेर आम को छील कर गूदा उतार ले और यह मसाला डालकर चटनी पीस लेवे—सेंधा और साम्हर नमक छटाँक २ भर, धनियाँ एक तोला, बड़ी इलायची ६ मासे,

लौंग, जायफल, जावित्री और दालचीनी एक २ मासा, पोदीना डेढ़ तोला, अदरख आधी छटाँक, बादाम की मिंगी एक तोला, पिस्ता ६ मासे, किसमिस आध पाव को धो-पोछकर घृत में तनिक भुन ले। आध पाव छुहारे और पिसी हुई चीजें को आध सेर खाँड़ की चाशनी में खूब मिलावे और उतार कर अमृतवान वा चीनी आदि के बर्तन मे भर दे।

× × × ×

राइता—यह दो प्रकार का बनता है। मीठा और नमकीन। मीठा राइता—नुगदी, बुंदिया, बताशे और किशमिश का बनता है। नुगदी आदि का राइता बनाना तो कुछ कठिन नहीं है, बताशों का राइता सुनकर आश्चर्य होसकता है, कि वे दही में क्योंकर साबित रह सकते हैं। क्रिया यह है कि—बताशों को लेकर गर्म घृत मे डाल दे, परन्तु न इतने गर्म में कि वे गल जावें, न इतने कम गर्ममे कि घृत उनमे प्रविष्ट न होसके। घृतको आग पर रखकर खग कर ले। पीछे उतारकर नीचे रख ले। उसमें बताशे डाल दे और पौनी से निकाल ले। इन बताशों को दही मे डाल दे, कभी नहीं गलेगें। दही को मथ और छानकर मीठा मिला लेवे और बताशे डाल दे। राइता हो जाता है।

नमकीन—बथुआ, ककड़ी, कद्दू, बैंगन, लालग, पकौड़ी और सेव आदि का बनता है। नमकीन राइते में भुना जीरा और धुँगार मुख्य है। जीरे को नमक-मिर्च के साथ न पीसे। अलग पीसकर

रक्खे, मगर भूँजकर पीसना चाहिये। जितना चाहे रुचि अनुसार डाल लेवे। हींग और राई का धुँगार इस प्रकार देते हैं कि जिस बर्तन में राइता बनाना चाहे, उसको खूब साफकर ले। पर वह बर्तन छोटे मुख का होना चाहिये। आग के अङ्गार पर थोड़ी सी राई व हींग रखकर थोड़ा सा घृत डाल दे और इस धुले हुए बासन को उसके ऊपर औंधा रख दे। जब जाने कि हींग और राई जल चुकी तब उठा ले और उठाते ही तत्काल मठ्ठा और पानी मे घुला हुआ दही इसमें डालकर मुख ढाँक दे, ताकि धूँआँ न निकलने पावे। पीछे इसमें जिसका राइता बनाना चाहे, मिला दे। नमक मिर्च और भुना जीरा अन्दाज से डाल दे। राइता तैयार हो जायगा।

जिन चीजों का राइता बनाना हो, उन्हें उबालकर, निचोड़ कर तथा अलग बनाने की विधी से बनाकर डालनी चाहिये। जैसे,—कद्दू का राइता बनाना हो तो प्रथम कद्दू को कद्दूकस में कस लेवे और फिर तनिक जोश दे लेवे और निचोड़ डाले। पीछे दही में डालकर राइता बना लेवे।

× × × ×

अचार—अचार तो अनेक प्रकार के होते हैं और उनके बनाने की विधियाँ भी अनेक हैं। परन्तु अचार में जितना अधिक नमक डाला जायगा, उतने ही दिन तक अचार ठहरेगा और जितना ही कम नमक डाला जायगा, उतना ही जल्दी गलेगा। अचार, अनेक

चीजों के बनते हैं, जैसे,—आम, निम्बू, लसोढ़ा, टेंटी, अदरख, कचालू, हड़, छुहारा, किशमिश, भिंडी, सेम, मूली, आलू, गाजर, आँवला, करेला, जमीकन्द और मिर्च इत्यादि का।

यों तो अचार कई प्रकार से बनाये जाते हैं, पर मुख्य विधियाँ पाँच ही हैं, जैसे—(१) पानी का अचार, (२) तेल का अचार, (३) तेल पानी का अचार, (४) केवल नमक का अचार, (५) और सिरके का अचार।

आम का अचार—आम पाँच सेर लेवे और उसके चौफँके करावे। चौफँके कराते समय सावधानी रहनी चाहिये कि टुकड़े आम में से अलग न हो जाँय। और चिरे हुए आमों में से पहले गुठली दो फाँक मे से निकाल लेवे और दो मे रहने दे। फिर पानी से धोकर किसी पात्र मे धर दे और फिर उसके लिये यह मसाला तैयार करे—मेथी के दाने ४ छटाँक राई २ छटाँक, धनियाँ पावभर, लाल मिर्च २ छटाँक, चने चार छटाँक, साँभर नोन एक सेर। इन सब मसालो को तैयार कर, उस मसाले मे इतना कड़ुवा तैल डाले कि जिसमें वह मसाला सन जाय। फिर एक सकड़े मुँह का मिट्टी का पात्र लेकर अपने पास रख ले। फिर उन आमो में वह मसाला जो तैयार किया है, दाब दाब कर भरे और उससे एक एक साबित मिर्च भी रख कर पात्र में रक्खे। पात्र में रखते समय यह ख्याल रहना चाहिये कि आम का मुँह नीचे न हो जाय, नहीं तो सब मसाला निकल पडेगा। फिर उस पात्र को चार पाँच दिन तक और धूप में रख दिया करे। उसके बाद

इतना कड़ुवा तैल डाले कि सब आम डूब जाय। तैल थोड़ा रहने से अचार बिगड़ जाने का भय रहता है।

थोड़े तैल का आचार बनाने की यह क्रिया है कि पहले आम को लेकर उपरोक्त रीति के अनुसार तैयार करे। फिर उन आमों मे मसाला भरकर पात्र में रक्खे। पानी उसमे इतना डाले कि आमों के बराबर आ जाय अर्थात् आम पानी से डूब जाय। फिर उसमे कड़ुआ तैल पात्र के मुँह तक भर दे या सेर तथा सवासेर के अनुमान से डाल दे। यह अचार आठ दिन पीछे तैयार हो जायगा। यह अचार गरीवो के लिये सुलभ है और चित्त प्रसन्न रखता है।

आम की अचारी—बनाने को यह क्रिया है कि ढाई सेर आमी को छीलकर गूदे की फाँके उतार ले और उनमें यह मसाला कूटकर भर दे—सोंठ, पीपर, मिर्च, (छटाँक छटाँक भर) धनियाँ २ छटाँक, ज़ीरा आधी छटाँक, लौंग १ तोला, स्याह जीरा १॥ तोला, भुनी हुई हींग ६ मासे, बड़ी इलायची १ छटाँक, छोटी इलायची ६ मासे, सेंधा नमक १ छटाँक, काला नमक १ छटाँक और साम्हर नमक तीन छटाँक। आठ दस दिन तक धूप मे रखकर खूब हिला दिया करे। तैयार हो जायगी।

निम्बू का अचार—यह कई प्रकार से बनते हैं। इनमें अजवाइन डालना मुख्य है। (१) साबित, (२) मसाला भर कर, (३) चौफाँका, (४) आधे आधे। जितने निम्बू डालने हों, उनमें से आधों का रस निकल ले और आधो की फाँक कर ले। पर निम्बू कार्तिक का अच्छा ठहरता है और श्रावण-भादो का कम।

निम्बू के अचार की साधारण रीति यह है कि प्रथम ५ सेर निम्बू को लेकर किसी नांद में खूब दो तीन पानी से धोकर कपड़े से खूब साफ करे। फिर किसी पात्र में निम्बू की तह बिछाकर सवा सेर सैंधा नमक डाले। इसीप्रकार की तह दे, निम्बू और नमक को डाल वर्तन को उठा रख दे। दस पाँच दिन में अचार तैयार हो जायगा।

मसाले के निम्बू—साबित निम्बू को लेकर चौफाँका कर-ले, पर नीचे से फाँको को जुड़ा रहने दे तथा अलग न होने दे। इनमें या तो आम की अचारी का मसाला कूटकर भर दे या राई, मेथी, लाल मिर्च, मगराइल, सौंफ,ज़ीरा और नमक कूटकर भर दे। ऊपर से निम्बू का निकाला हुआ रस डाल दे। आठ दस दिन तक नित्य हिला दिया करे। पीछे १५-२० दिन के बाद हिला दिया करे।

अँवरा का अचार—बनाने की रीति यह है कि अच्छा अँवरा बिना रेसे का लेकर पानी डाल चूल्हे पर चढ़ाकर उबाल ले। जब अँवरा सींक से छिद जाय तब उतार ले और उसकी गुठली निकाल के राई, जीरा, मेथी, मगराइल, लाल मिर्च ये सब कूटकर, अग्नि पर तवा रख कड़वे तैल मे थोड़ा भलकार ले, फिर उसमे नमक डाल अँवरे में मिलाकर घड़े में डाल दे। एक मास मे तैयार हो जायगा। यह अचार बहुत लाभदायक है, प्रमेह नाशक है और भूख बढ़ाता है।

घिकुवार का अचार—रीति यह है कि घीकुवार का अच्छा और मोटा पट्ठा लेकर छोटा छोटा कतरा बनाकर उसमें

नमक लपेटकर धूप में तीन दिन तक सुखावे। फिर राई, हल्दी, मेथी, मिर्चा, हींग और नमक पीसकर घड़े में डाल दे। ऊपर से कड़वा और तिल्ली का तैल एक में मिलाकर अचार में डाले। तैल इतना डालना चाहिये कि जिसमें अचार डूब जाय। घड़े का मुख बन्द कर रखदे। तीन मास में तैयार हो जायगा।

आलू का अचार—रीति यह है कि आलू को उबालकर छील ले। फिर कतरा करके उसमें नीमक, हर्दी, राई, मेथी और मिर्चा कूटकर कड़वे तैल के साथ मिलाकर घड़े में रख दे। चार दिनों के बाद खाय। परन्तु यह अचार एक मास से अधिक नही टिकता।

मिर्च—बड़ी २ हरी मिर्च लेकर चाकू से पेट चीर दे और खलबलाते हुए पानी में डाल थोड़ी देर तक ढँक दे फिर निकाल तनिक फरफरी कर ले। फिर इनमें मसाला भरकर डोरे से बाँध देव। बोतल में या घड़े में भरकर ऊपर से अर्क़नाना भर दे और नमक डाल दे।

अर्कनाना, सिरके का बनता है। यह बना बनाया गन्धियों के यहाँ से मँगा लेना चाहिये।

अदरक—इसको छीलकर पतले पतले लम्बे लम्बे टुकडे कर ले। उनमें नमक, अजवाइन, और निम्बू का रस डालकर रख दे। दस पाँच दिनों में तैयार हो जायगा।

सिरके का अचार—सिरके में नीमक डालकर, जिसका [illegible] डालना चाहे डाल ले, वही अचार तैयार हो जायगा। सिरके

में सभी चीजो का अचार तैयार हो सकता है। जैसे,—मूली का, सहजने की कच्ची फली का, निम्बू, मिर्च और अदरक आदि का।

पानी का अचार—पानी के अचार में राई ही मुख्य है। इसी से खटाई आती है। गाजर, गट्ठे, आलू और सेम, आदि को छीलकर, उवाल ले। ठण्ढा करके नमक, मिर्च राई और हर्दी को पीसकर बहुत से पानी मे घोल ले। फिर मिट्टी के वासन में भरकर ऊपर से बारह अँगुल मसालो का पानी भर दे। धूप में दो तीन दिन रक्खे, पर जाड़े में चार पाँच दिन तक रक्खे। अचार तैयार हो जायगा अर्थात् खट्टा हो जायगा और नमक भिद जावेगा।

तेल पानी का अचार—टेंटी, लभेरे इत्यादि का वनता है। पानी का अचार डालकर जब तैयार हो जाय तब पानी के ऊपर चार अँगुल कडुवा तैल भर दे। तैयार हो जायगा। खट्टा पड़ जाने पर खाने के काम में लावे।

पापड़—(१) उड़द की दाल धोयी हुई सन्ध्या को भिगो देवे, सवेरे उसका पानी दूरकर शिलपर लोढ़ा से पीस, हल्दी, अदरक, मिर्च, हींग, जीरा और नमक मिलाकर छोटे २ लोवा कर ले। पीछे वेलन से वेल धूप में सुखा लेवे। इच्छानुसार घृत मे तलकर खाय या अंगारों पर भूजकर। मूंग, चना, किराव आदि जिसका भी पापड़ वमाना चाहे इसी हिसाव से वनाले।

(२) सेर भर उड़द के आटे में छटाँक भर लोटका सज्जी पीसकर डाले। छटाँक भर नमक, गर्म मसाला, काली मिर्च और

जीरा डालकर उसन ले और ओखली में मूसल से खूब कूटे। जितनी कुटाई होगी, पापड़ उतना ही खस्ता होगा। पीछे लोई तोड़ कर तेल या घी के हाथ से चकले पर वेलन से बेलकर तनिक धूप में सुखाले। पीछे इच्छानुसार तलकर या भूँजकर खाय। यदि लोटका सज्जी अच्छी न मिले तो सवा तोले सोड़ा डाल दे। मूंग, चना, किराव आदि जिसका पापड़ बनाना चाहे, इसी हिसाब से बनाले।

गँवार की फली (रामफली)—जब तक बीज न पड़े तोड़कर सुखा लेवे। आवश्यकता पर घृत या तैल में तल, नमक मिर्च लगाकर खाय।

जामुन का सिरका बनाने की विधि—खूब पकी हुई जामुन को एक बर्तन मे रख हाथ से मसले, जब चाटनी के समान हो जाय तब मोटे कपडे में रख उसका रस निकाले और उस रसको ४ मास धूप में रक्खे। फिर कपड़े से छानकर शीशी में भर दे। यह सिरका—वायु गोला, यकृत, पिलही, इत्यादि पेटके रोगो के लिये हितकर है।

ऊख का—ऊख का रस लेकर माघ महीने से वैसाख तक घडे मे भर रक्खे। फिर छानकर शीशी मे भर दे। ऊपर से पाचो नमक और पाचों खार थोड़ा २ डालकर छोड़े। जिसके पेटमे दर्द हो, उसको खिलावे, तुरन्त पीड़ा को वन्द करेगा।

नीबू के रस का—पके हुए निम्बुओं का रस निकाल शीशी में भर धूप में रखदे। दो मास पीछे छान लेवे। यह ऐसा तेज होता है

कि तेजाब की तरह जमीन को जलाता है। जब सीप के ऊपर डाले और सींप भस्म हो जाय तब जानना चाहिये कि अच्छा सिरका बना है।

मुरब्बों का वर्णन—मुरब्बा तो अनेक चीजों का बनता है, पर मुख्य १८ प्रकार का है और उनके नाम ये हैं–आम, अनानास, सेब, बिही, नासपाती, संतरे, अदरक, हड़ गाजर, आँवले, निम्बू, पौंढ़े, इमली, करौंदे, बेल, पेठा, चिकनी सुपारी और कसेरू इत्यादि का। इसलिये यहाँ पर दो एक मुरब्बो की रीति बतला देनी आवश्यक है।

आम का—दो सेर अच्छे अच्छे गूदेदार आम ले, जिनमें रेशा वा तूस न हो। छिलका छीलकर सीपी से साफ करले और गुठली के ऊपर से तेज चाकू से गूदे की फाक साबित उतार ले। इसको काटे से गोद दे। फिर थोड़े से मिश्री के पानी में उबाल ले और निचोड़कर फरफरी कर ले। फिर तीन सेर बूरे वा मिश्री की चाशनी करके इन फाकों को उसमें डालदे। ऊपर से कूटकर काली मिर्च, बड़ी व छोटी इलायची बुरक दे। चाशनी की पहिचान यह है कि जब तार उठने लगे तब जान ले कि हो गयी।

अँवरा का मुरब्बा—अच्छा अँवरा पका हुआ एक सौ लेकर उन्हे सूई से टोल, पानी भरे हुए घड़े में डाल चूल्हे पर रख के पकावे। जब पक जाय तब उतार ले और पानी दूर कर पाच सेर बूरा व मिश्री की चाशनी करके उसी में अँवरा डाल देवे। फिर ये सब चीजे डाले–गुलाब का अर्क, केवड़ा का अर्क, अगर,

कस्तूरी, इलायची और दालचीनी। फिर १० दिनके पश्चात खावे।

सेव, अनानास और विही का—रीति यह है कि ऊपर से छीलकर कांटो से खूब गोद उबाल ले। पीछे आम वा आँवलों की भांति डाल ले।

चासनी बनाने की विधि—चासनी बनाने की विधि यह है कि उत्तम चीनी कढ़ाई में चढ़ा उसमें तृतीयांश अर्थात् ३ सेर मे १ सेर जल मिला कड़ी आंच देवे। जब उसमें उबाल उठने लगे तब धीमी आँच करदे और उस जलाव के चारों तरफ दूध में जल मिला बारम्बार गेरते जा। फिर एक पत्र ले, उसपर दो लकड़ी धर एक डलिया धरे और उस डलिया में स्वच्छ धुला हुआ वस्त्र बिछा उसमे उस रस को डोही से भर भरकर डाले। परन्तु डालने के प्रथम कड़ाही पर चढ़े हुए रसको झरने से झार झार मैल निकालते रहना चाहिये। जो चीनी का रस डलिया मेंसे चूकर नीचे के पात्र में गिरेगा, उस रस को वक्सर कहते हैं। फिर इस रस को दूसरे पात्र में भर अग्नि पर चढ़ा दे और मन्द आँच दे। जब कर-छुले से लगकर एक धार गिरे तो उसको इकतर्गी चाशनी कहते हैं। और इससे भी अधिक गाढ़ा रस हो अर्थात् दो तार गिरे तो उसको दुतारी चासनी कहते हैं। तारों की पहिचान अँगुलियों पर भी होती है। अर्थात् अँगुलियों में चासनी लगाकर चिपकावे और देखे कि उसमें कितने तार होते हैं। जितने तार छुटें, उतने ही तार की चासनी कहलाती है। किसी पदार्थ के बनाने के लिये एक तार की, किसीके लिये दो तार की और किसी के लिये तीन तार की चासनी

बनायी जाती है। जिस पाक या मुरब्बे में जैसी चासनी बनानी लिखी हो, वैसी ही बना ले।

खीर—यह चावल और दूध की बनती है। इसमें चावल और दूध उम्दा होना चाहिये। दूध को लेकर मन्दी आग पर औटावे। जब चौथाई दूध जल जाय तब उसमें वे चावल जो पहले से धुले हुए और घृत में भुने हुए तैयार हों, सेर पीछे छटाक के हिसाब से डाल देना चाहिये। कतरा हुआ गरी का गोला, कतरा हुआ बदाम और घुली हुई किशमिश भी डाल देनी चाहिये। सेर पीछे पाव भर मीठा डाल देना चाहिये। कोई २ इसमें घृत भी डालती हैं। गर्म खीर अच्छी नहीं लगती, ठण्डी स्वादिष्ट होती है। ठण्डी होने पर गुलाब वा केवड़े का जल डाल दे तो और भी अच्छी हो जाती है। इसी प्रकार फूलमखानों की भी खीर बनती है।

सेंवई—सेंवई को पूरी की भांति घी में उतार ले। खाँड़ व बूरे की चाशनी करके पाग ले व पीछे पानी में उबाल ले और बूरा डाल कर खावे। कभी कच्ची न रहेगी और न गरिष्ठ होगी। सेंवई की खीर बनाने की विधि यह है कि पहले घृत मे भूनले, फिर खीर की विधि के अनुसार बनावे।

नारियल की खीर—नारियल को लेकर बारीक कतरं। फिर एक पाव चावल, एक पाव घी, एक पाव दूध, चार सेर बूरा एक सेर में (लौंग, मिर्च, किसमिस, बदाम, पिस्ता) इन सबको छोड़ के विधि प्रमाण बनावे। जब पक जावे तब उतार रक्खे। यह खीर शीतल, भारी और मधुर है।

फलाहार वा शाकाहार—फलाहार, जिसको शाकाहार भी कहते हैं; उसका अर्थ यह है कि फल का वा शाक का भोजन। परन्तु इसमें कई प्रकार के भोजन हैं, जो फलाहार में गिने जाते हैं,—जैसे—दूध के सब भोजन, कूटू, सिंघाड़ा, सामाँ और कँगनी इत्यादि के। फलाहार में केवल सेंधा नमक, काली मिर्च और सफेद जीरा है, दूसरा मसाला नहीं है। परन्तु कितनी बहनें दूसरे मसालों को भी फलाहार में गिनती हैं।

दूध के अनेक प्रकार के भोजन बन सकते हैं, जैसे—दूध, दही, रवड़ी, खोआ, शिखरन, राइता, पेड़ा, बर्फी, खीर और खुर्चन इत्यादि।

कूटू के भोजन—पूरी, फुलौरी और हलुवा इत्यादि।

सिंघाड़े के भोजन—उबले हुए सिंघाड़े, शाक हलुवा और पूरी इत्यादि हैं।

फलहार भी अनेक प्रकार के और अनेक विधियो से बनाये जाते है। इसलिये यहाँ पर मुख्य विषयों पर लिख देना ही ठीक होगा।

दूध—बराबर का दूध और बराबर का पानी मिलाकर मन्दी आग पर सवेरे से साँझ तक मिट्टी की हाँड़ी में ओटावे, चलाती रहे जिसमें मलाई न पड़ने पावे। चिरौंजी, गरी, बदाम, किशमिश, और मिश्री उसमें डाल दे। जब पानी सब जल जाय और दूध भी आधा रह जाय तब उतार ले। थोड़ा गुलाब व केवड़ाजल डाल दे। इस दूध की प्रथा मथुरा के तरफ विशेष है।

दूध की शिखरण—एक सेर दूध में एक सेर चीनी मिलाय के, बदाम, इलायची और काली मिर्च डाल पीवे।

दही का शिखरण—अच्छा दही लेकर पानी में खब मथे। चीनी, इलायची दाना, और काली मिर्च को मिलावे। यह शिखरण हल्की और शीतल है।

रवड़ी—इसमें लच्छे जितने अधिक पड़ेंगे, उतनी ही अच्छी बनेगी। लच्छे अधिक डालने की रीति यह है कि जब दूध औटे और उसमें उफान आवे तब उस उफान को कोचे से कड़ाही के किनारे पर चिपकाती जावे। इन्हीं के लच्छे हो जावेंगे और जब सब दूध निपट चुके केवल आठवाँ हिस्सा शेष रह जाय तब उतार ले। उसमें लौंग और बड़ी इलायची पीसकर गर्म ही में डाल दे। फिर खूब चलाकर ठण्ढी कर ले। इच्छा हो तो ऊपर से पिस्ता बदाम आदि भी डाल दे।

पेड़ा—पेड़ा का खोवा गौ वा भैंस के दूध का होना चाहिये। खोवा जितना कड़ा भूना जायगा, पेड़े उतने ही अच्छे बनेंगे। यदि भूनते समय खोवे में घी डाल दिया जाय तो पेड़े और भी अच्छे बनेंगे। खोवा भूनते समय उसमें लौंग, इलायची पीसकर और बादाम कतरकर डाल देना चाहिये। यदि कन्द मिलाना हो तो बूरा मिलाते समय कन्द भी पीसकर मिला देना चाहिये।

बर्फी—इसमें जितना अधिक खोवा डाला जायगा, उतनी ही अच्छी बर्फी होगी। इसमें चाशनी की पहिचान भी है। इसलिये

बहुत ही चातुराई के साथ बनानी चाहिये। इसके बनाने की भी कई एक विधियाँ हैं।

सिंघाड़े का हलुवा—सिंघाड़े को लेकर कूट और कपड़ छान करके घी में भूँजे। फिर दूध और पानी डालकर मधुरी आँच से पकावे। जब पक जाय तब गरी, बदाम, छोहारा, पिस्ता, और मिर्च डालकर उतार लेवे।

दूध के घेवर—दूध का खोवा कर उसमें मिश्री मिला, उसमें से आठ आठ तोले लेकर बरेके समान कर घृतमें सेके। फिर इनको चासनी में तल के निकाल लेवे। यह दूध का घेवर कहलाता है।

कच्चे सिंघाड़े की पूरियाँ—सिंघाड़ों को छीलकर और तराश कर धूप में सुखा दे। जब कुछ खुश्क हो जाय तब उनको पीस लेवे और कपड़े में रखकर खूब निचोड़ लेवे, ताकि सब पानी निकल जाय। उसको फिर धूप में सुखावे। जब कुछ और खुश्क हो जाय। तब फिर सिल-बट्टे से पीस थोड़ा सा सिंघाड़े का खुश्क आटा मिलाकर अथवा बुरक कर घृत में पूरियाँ उतार ले। ये पूरियाँ बहुत स्वादिष्ट होती हैं।

सत्तु बनाने की विधि—जव या चना जिसका सत्तू बनाना हो लेकर पानी मे एक दिन पहले भिगो देवे। पीछे भाड़ में भुँजवा उखली में कूट छिलका दूरकर सूप से पछोरे। तत् पश्चात् चक्की में पीस बूरा या नमक मिलाकर खाय।

गर्म मसाला बनाने की विधि—लौंग, मिर्च, तेजपत्र,

मसलकर कई पानी से धो डाले। जब धुल जावें तब सुखा लेवे। फिर चक्की से पीस इसके चून में आधा गेहूँ का चून मिलाकर घृत में भुन ले और बूरा डालकर लड्डू बाँध ले।

बेसन का—बेसन के बराबर घृत लेकर कड़ाही में चढ़ा दे और धीमी२ आग से भूने। जब भुनजाय और कच्चा न रहे तब उसको उतार ठण्डा कर ले। सवाया व ड्योढ़ा बूरा मिलावे, पर कहीं गर्म में न मिला दे। बूरे और बेसन को एक रसकर मेवा डाल लड्डू बाँध ले। (बेसन भुनने की पहिचान यह है कि भुनजाने पर उसमे से सुगन्धि आने लगेगी)। इन लड्डुओं के लिये बेसन दानेदार होना चाहिये।

मोतीचूर के लड्डू—बेसन को पानी में घोल घृत में छोटी २ बूँदी उतार लेवे। पीछे बूँदियों को चाशनी में डाल उसीमें बादाम, पिस्ता, नारियल की गिरी मिलाकर लड्डू बाँध लेवे। इन लड्डुओं के लिये चासनी कड़ी और ढोली बनाई जाती है। यदि खूब मुलायम बनाने हों तो एक तारी चाशनी करले और कड़े बनाने हों तो दुतारी चाशनी कर ले।

हलुवा वा मोहनभोग—हलुवा अनेक चीजों का बनता है, जैसे—सूजी, मैदा, आटा, बेसन, आलू, गाजर और आम इत्यादि का। इसके बनाने की विधियाँ भी अनेक हैं। सूजी, मैदा और आटा के हलुवा में, बराबर से थोड़ा कम घृत डालनेसे अच्छा बन जाता है; परन्तु यथाशक्ति वा रुचि का भी डालकर बनाते हैं;

पर अच्छा वही है, जो खाने में तालू में चिपके नहीं।

सूजी का—सूजी के बराबर घृत डालकर कड़ाही में भुन ले। जब भुनजाय तब खौलता हुआ गर्म पानी वा दूध सूजी से तिगुना उसमें डाल दे और सूजी से ड्योढ़ा बूरा डालकर चला दे। ऊपर से कतरा हुआ मेवा डाल दे।

बादाम की बर्फी—बादामो को फोड़कर और उनकी मींगी को गर्म पानी में भिगोकर छील डाले। नारियल की भी इसी तरह बनती है। भेद केवल इतना ही है कि बादाम की पिठ्ठी पहले घी में भुनती है, पीछे खोवे के संग भुनी जाती है और पीछे आधी छटाँक घी डालकर चाशनी में मिलाकर जमादेते हैं। इसका अन्दाज यों है कि, बादाम की गिरी १ सेर, खोवा आधसेर, घी डेढ़ छटाँक,चाशनी आधसेर और छोटी इलायची का चूरा ३माशे।

कचौरी—यह एक प्रकार की पूरी ही है, परन्तु इसके भीतर पिठ्ठी इत्यादि कुछ भरी जाती है। इसीलिये इसका नाम कचौरी हो गया है। इसमे अनेक प्रकार की पिठ्ठियाँ भरी जाती हैं, जैसे—उड़द, आलू, वेसन और भुनी पिठ्ठी आदि की। कचौरी दो प्रकार की मुख्यत बनती है। (१) खस्ता, (२) सादी। परन्तु पिठ्ठी अच्छी तभी होती है, जब दाल खूब धुली हुई हो और खूब महीन पीसी हुई हो और साथ साथ मसाला भी खूब महीन पीसा हुआ हो। मसाले मे धनियाँ, मिर्च, नमक और गर्ममसाला मुख्य है। जब पिठ्ठी को लोई मे भरे तब हींग के पानी के हाथ से भरे—

कचौरी बहुत फूलेगी। हींग का पानी बनाने की क्रिया यह है,—

एक मासा हींग पावभर पानी में घोलकर मिट्टी के बासन में रख ले। पहले इस पानी में हाथ बोर ले तब पिट्ठी को तोड़े और लोई में भर दे।

आलू की पिट्ठी—बनाने की क्रिया यह है कि आलुओं को उबालकर छील ले और खूब महीन पीस ले। इसमें पिसे हुए मसाले के साथ साथ थोड़ा अमचूर मगर पिसा हुआ और डाल दे तो स्वाद और अच्छा हो जाता है।

वेसन की मीठी पिट्ठी—वेसन में इतना मीठा डालकर उसन ले कि बहुत पतला न हो जाय और मीठा भी कम ज्यादे न हो जाय।

भुनी पिट्ठी—यों बनाते हैं कि उड़द की पिट्ठी को घत में डालकर कड़ाही में भुन ले। फिर मसाला मिला लोई में भर दे।

कचौरी का आटा, पूरी के आटे से तनिक ढीला रहना चाहिये। सादी कचौरी में तो कुछ कठिनता नहीं है, परन्तु खस्ता कचौरी में कुछ कठिनता है। इसलिये खस्ता कचौरी की विधि यहाँ लिख दी जाती है।

पाँच सेर मैदा में सेर भर घृत, दो सेर गुनगुना पानी, पौनपाव पिसा हुआ नमक डालकर तीनो को उसन ले। पर हाथ में घृतलगा कर लोई तोड़े। उड़द की पिट्ठी सवासेर महीन पीसकर उसमें सब गर्म मसाला डाले। पहले पिट्ठी को कड़ाहीमें घृत डालकर भुनले।

पीछे हींग के पानी के हाथ से पिट्ठी भरती जावे और हाथ से चपटी कर कर के कड़ाही में छोड़ती जावे। जब खूब मन्दी आग से सिककर लाल हो जाय तब पौनी से उतार ले। कम खस्ता बनानी हो तो मैदा में घृत कम डाले।

पकौड़ी—इसमें फैन को जितना अधिक मथा जायगा, पकौड़ी उतनी ही फूलेगी और जितना पतला फैन होगा घृत उतना ही अधिक लगेगा और स्वाद अच्छा होगा। बनाने की क्रिया यह है कि बेसन अच्छा और महीन लेकर; नमक, मिर्च और अजवाइन डालकर पतला फैनकर ले, पीछे कराही में घृत वा तैल चढ़ा दे। जब घृत का कड़कड़ाना बन्द होजाय तब पकौड़ियाँ तोड़ तोड़कर उतार ले। यदि इस फैन में पोदीना, मेथी, पान और मूली के पत्ते आदि लेकर दोनो ओर से बेसन में खूब लपेटकर घृत में उतार ले तो वह पकौड़ी इनचीजों की पकौड़ी कहलाती है। कितनी बहनें इसी प्रकार बैंगन की लम्बी २ फांकियाँ उतारकर बनाती हैं, जिसे बैंगनी कहते हैं।

बड़े—उड़द की वा मूँग की पिट्ठी में-मिर्च, हींग, अदरख और नमक मिलाकर बड़े बना ले। फिर घृत तथा तैल में उतारती जाय। परन्तु घृत वा तैल जब कड़ाही में खूब गर्म होजाय तब बड़े डालने चाहिये। नहीं तो झाग उठाने का भय रहता है और उफनकर तैल वा घृत आग में निकल आता है।

अन्य पाक—पाक अगणित हैं और इनके बनाने की क्रिया

भी भिन्न भिन्न है, स्वाद भी अलग अलग हैं जितने मुख और जितने हाथ हैं, यदि उतने ही मिष्टान्न वा पाक कहे जाँय तो कोई अत्युक्ति नहीं। इसलिये इस विषय में विशेष न लिखकर भोजन वा पाक क्रिया को यहीं पर समाप्त करदेना उचित है।

चतुर्थ भाग

गृह--शिल्प

प्रायः यह बात कितनी स्त्री और पुरुष विना विचारे कह दिया करते हैं कि गांवो में अब भी कितने ही भारतीयो का जीवन पहले की तरह ही विना किसी फेरफार के ज्यो का त्यो वना हुआ है। पर वास्तव मे, सच वात कुछ औरही है। पहले जो लोग खुशहाल, परिश्रमी और सन्तोषी थे, जो अपने अपने घरेलू धन्धों में वरावर लगे रहते थे, जिनमें कला और हाथ की कारीगरी का अद्भुत चमत्कार था,वे ही लोग मानो किसी प्रवल और भयानक शाप से धीरे धीरे दरिद्रता से पिसी हुई जाति वन गये। उन्हे साल में कई महीनों तक कोई घरेलू धन्धा न मिलने से जबर्दस्ती वेकार रहना पड़ता है और नित की वढ़ती दरिद्रता और ऋण के वोझ से पुनः उठना उनके लिये असम्भव सा हो गया है। यह फेरफार ऐसा व्यापक और इतना खटकता है कि यद्यपि हमारा आजकल का गाँव

ऊपर से निश्चल और शान्त दीखता है तौभी पहले की सी स्वाव-लम्बी, खुशहाल, पुरानी और अनोखी बस्ती का कहीं पताभी नहीं है। जिन गाँववालों ने कभी घने और व्यापक वाणिज्य के मीठे फल चखे थे, वे ही अब अपने बाप-दादों के पुराने धन्धे खो बैठे हैं और लाचारी गुलामी की रोटी तोड़ रहे हैं। अब तो गाँववालों का और शहरवालो का यही व्यापार शेष रह गया है कि कच्चा माल उपजावें तथा खरीदें और विदेश भेजदे। अब उनके घरों में पहले वाले उद्योग धन्धे नहीं रहे। इसी कारण लक्ष्मी भी भारत से रुष्ठ हो सात समुद्र पार इङ्गलैण्ड, फ्रांस, इटली और अमेरिका इत्यादि दूरदेशों को चली गयी और यह देश दरिद्रता के हस्तगत हो गया, हरा भरा खिला हुआ चमन उजड़कर वीरान होगया! मन्द भाग्य !!

इस देश में १४ विद्या और ६४ कला प्रसिद्ध हैं। चौदह विद्या चतुराई की बातें और चौंसठ कला हस्तक्रिया अर्थात् शिल्प से सम्बन्ध रखती हैं। अब इनका जानना तो दूर रहा, इनके नाम भी कोई नहीं जानता कि ये हैं कौन कौन सी? अब तो इस विद्या की ऐसी अवनति हुई है कि बहुधा लोग इनके अर्थ को भी नहीं जानते कोई चार वेद को चार उपदेश और ६ वेदाङ्ग को चौदह विद्या कहते हैं, पर कोई इस प्रकार से न मान इस प्रकार मानते हैं।—

राग, रसायन, निरपगति, नरविद्या, वैद्यंग।
तुरंग चढ़न, व्याकृति पढ़न, जानन ज्योतिष अंग॥
धनुपबाण, रथहाँकिवो, चोरी ब्रम्हज्ञान।
जल तैरन, धीरजधरन, चौदह विद्य निधान॥

इसी प्रकार ६४ कला भी हैं. जिनमें भी अलग अलग मतभेद हैं। हाथ की वनी हुए वस्तुएँ चौंसठ कलाओं मे मुख्य गिनी जाती हैं, जैसे—चित्रकारी, वस्त्रादि सीना और रँगना, पिरोना और बिनना, नाना प्रकार के भोजनादि बनाना, तथा इनके अतिरिक्त चौंसठ कलाओं में काव्य रचना, पिङ्गल ज्ञान, और सङ्गीत—ज्ञान इत्यादि कलायें भी गिनी जाती हैं। परन्तु; इतना तो जरूर कहा जा सकता है कि जिस समय हमारे यहां १४ विद्या और ६४ कलायें वर्तमान रही होंगी, उस समय हमारा भारत कैसा हरा भरा चमन रहा होगा। इतना पतन होने पर भी इस देशकी शिल्पविद्या अभी वहुतो से अच्छी है। आधुनिक मशीनरी आविष्कारों के कारण यद्यपि हमारी कलायें इस समय फीकी दिखाई पड़ रही हैं, परन्तु वह समय भी दूर नहीं है जो हमारी कलाओं के कारण फिर हमारा भारत एकवार चमक उठेगा। खैर "बीती ताहि विसार दे, आगे की सुधि लेइ" के अनुसार यदि यहाँ घरेलू धन्धे और शिल्पविद्या की ओर पुनः एकवार ध्यान दिया जाय तो हमारा उजड़ा हुआ भारत फिर हराभरा चमन हो उठे।

हमारे घरेलू उद्योग धन्धों मे हमारी मातायें और वहनों का विशेष हाथ रहना चाहिये। उनकी सहायता विना हमारी कलायें उन्नति नहीं कर सकतीं। क्योंकि; प्रायः देखा जाता है कि घरेलू उद्योग धन्धो मे कितने काम ऐसे हैं जो प्रायः स्त्रियों को ही करने पड़ते हैं,—जैसे, भोजनादि बनाना, सीना-पिरोना, वेलवूटे का काम इत्यादि निकालना तथा वस्त्रादि रँगना इत्यादि। चर्खा चलाने का

काम भी पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ आसानी से करेंगी, क्योंकि इन्हें भोजनादि बनाने के पश्चात् कुछ न कुछ समय मिल ही जाता है। इन कलाओं के अतिरिक्त यदि हमारी मातायें और बहनें और और घरेलू उद्योग धन्धों की ओर ध्यान दें तो और भी अच्छी बात है। प्रत्येक बहन को कम से कम कोई ऐसी कला या विद्या अवश्य ही सीख रखनी चाहिये, जिससे कुसमय आ पड़ने पर जठर-ज्वाला शान्त की जा सके। घरेलू कलायें सीखने में कोई लज्जा और शर्म की बात नहीं है। कुछ न कुछ कलायें जानते रहने पर उस बहन का सब ठौर आदर होता है और कितनी बहनें उसकी खुशामद किया करती हैं।

* * * * *

कताई और चर्खा—कताई और बुनाई का इतिहास अत्यन्त पुराना है। इतना प्राचीन है कि आरम्भसे सिलसिलेवार वर्णन करना कठिन है। कताई और बुनाई तो इतने प्राचीन हैं, जितने हमारे वेद। हिन्दू आत्मा ने जैसे पहले पहल ब्रह्मसूत्रों के गुनने वालों को बनाया, वैसे ही कार्पास-सूत्रों के बुननेवालों को भी पैदा किया जैसे,एक अत्यन्त बारीक और पूर्ण ब्रह्मसिद्धान्त निकले वैसे ही दूसरे से अत्यन्त बारीक और [illegible] कपड़े बने। [illegible] समय मिश्र देश ने अपने [illegible] और बाबु[illegible] [illegible] हम्मुरबि ने अपना बड़ा [illegible] भारतवर्ष [illegible] छिम को

ढकने के लिये (वेदान्ती) "तन्तुवाय" ने जीवात्मा को ज्ञान की चादर उढ़ाई, उसी तरह हमारे बुनने वाले (तन्तुवाय) ने मनुष्य के नंगे शरीर को कपड़ो से ढँक दिया। भारत की अमर सभ्यता और सतयुग की कथा का सार इन्हीं दोनों की जीवनी में मिलेगा। वेदान्ती की, जो तत्त्व का गुननेवाला था और कोष्ठी की, जो तन्तु का बुननेवालाथा। एक सत्य का द्रष्टा था तो दूसरा सच्ची कला का स्रष्टा था। तन्तुवाय की ही उपजाऊ बुद्धि की दृढ़ नींव पर भारत की कला और व्यापार का मन्दिर बना था।

यह बहुत सम्भव है कि बुनाई का काम कताई के पहले ही शुरू होगया हो और शायद पहली बुनाई कपडे की न रही हो। हम जब बुनाई के विकाश पर विचार करते हैं तो निश्चय है कि मनुष्य ने जभी यह कला निकाली तभी उसे आखिरी हद तक पहुँचा दिया। ताना तनने, भरनी करने और ताने के एक एक सूतको छोड़कर उठाने की जो अजब हिकमत निकली तो ऐसी कि हजारों वर्ष बीत गये, फिर भी कोई इससे बढ़कर हिकमत न निकाल सका।।

उस समय सर्वसाधारण में कताई बुनाई का व्यापक प्रचार था। यह बात अथर्ववेद की इस चर्चा से सिद्ध होती है कि, विवाह के पहले दिन नव-वर अपनी वधू के हाथ का कता बुना कपड़ा पहनता है। बड़े कुतूहल की बात है कि उड़ीसा के संभलपुर जिले मे और आसाम में भी कइ जगह आज भी यही चाल है और इन जगहो में नयी नयी बहुओं को पहले साल तो कातने के सिवा और कोई काम ही नहीं मिलता। घरके लिये सूत कातने से जीवन की पहली

अवश्यकता पूरी होती थी और बड़े छोटे, स्त्री पुरुष सबको इस कला का अभ्यास करना पड़ता था।

कताई का काम तो देश में अत्यन्त साधारण काम था। इसलिये सभी जानते थे कि जब कोईकाम और तरह का न मिले तो ईमानदारी के साथ किसी न किसी तरह चर्खा कातकर गुजर बसर हो सकता है। दीन दुखियों और दरिद्रों के लिये चर्खा रोजी थी, डूबतो के लिये सहारा था। जातक की एक कहानी में अपने मरते हुए पतिको स्त्री तसल्ली देती है "मैं चर्खा कातलेती हूँ, किसी तरह बच्चों को पाल-पोस कर बड़ाकर लूँगी, आप चिन्ता न कीजिये।" यह कितनी जबर्दस्त मिसाल है। चर्खे से दरिद्रता बहुत कुछ घटायी जा सकती है। अर्थ-शास्त्र में लिखा है कि सूत्राध्यक्ष का काम था कि एकदम दुर्बल दरिद्र, अपङ्ग और लुंजो को तथा घर से बाहर न निकलने वाली दरिद्र नारियो को पेट पालने के लिये, काम खोजनेवाली दरिद्र कन्याओ को और इसीतरह के मुहताजों को कताई का काम दे। इसतरह चर्खा एक तरहका दीनबन्धु था। जो दरिद्र स्त्रियाँ बाहर निकल कर मजूरी नहीं करसकती थीं और विशेषतः जो विधवाये थीं, उनकेलिये मनु के मत से चर्खा ही एकमात्र धन्धा था।

पाँच आदमियो के कुटुम्ब में अगर एक चर्खा भी कुछ घण्टों चलता रहे तो घरको कपड़े के बारे मे स्वावलम्बी करने मे कितनी मदद हो सकती है। एक उदाहरण लेलीजिये तो कुछ लाभ समझ आ जायगा।

(क) एक घराने में पाँच प्राणी हैं; जिनके खर्च के लिये गज-भर पहनने का सालमें ८० गज कपड़ा चाहिये, या महीने में ६।। गज से कुछ ऊपर कपड़ा चाहिये।

(ख) ६।। गज कपड़े के लिये चौदह छटाँक सूत की जरूरत पड़ेगी।

(ग) एक चर्खा दो घण्टे रोज बराबर चले तो १५ नम्बर का १४ छटाँक सूत महीने भर मे तैयार हो सकता है।

इस तरह परिवारों के लिये और अकेले प्राणी के लिये यह आसान है। केवल इतना संकल्प कर लेने की आवश्यकता है कि अपनी ही मेहनत से अपने लिये खद्दर तैयार करा ले। हाथ के कते हुए सूत को बिनवाना ही यदि उद्देश्य समझा जाय और उसको जिलाना और पालना मंजूर हो तोभी हर आदमी, पुरुष हो वा स्त्री चर्खा काते। इस बात पर जोर देने की जरूरत है। जो बात अपने आप बैठकर कातने के बारे में कही गयी है, वही इकट्ठे होकर कातने में भी लागू है। इस रूप में कातनेवाली मण्डलियाँ बन जाँय तो हाथ की कताई के प्रचार में अच्छी मदद मिले। ऐसी ही कताई के फैलाने से इस व्यवसाय की वही उत्तम प्राचीन-दशा आ सकती है, जिस समय खद्दर का बनाने वाला और पहनने वाला एक ही था। न कोई बीच का व्यापारी था और न कपड़े की तैयारी के लिये कोई पूँजी इकट्ठी करने की जरूरत पड़ती थी। घर की कताई मे जो किफायत है, वह एकबार जहाँ समझ मे आगयी और मनमे बसगयी तो फिर उसकी तरफ शौक

हो जाती है और वह बराबर जारी रहती है। कातने की कला तो लोगों की सुस्ती से खो गयी। पर अब ऐसा न होनेपावे कि घरकी कताई को लोगो की वही सुस्ती फिर अपनी आड़ में छिपा ले।

उपदेश—"बहनें इसबात का विचार क्यो नहीं करतीं कि विदेशी कपड़ा पहिनने में कितना पाप है? महीन कपड़े बिना यदि काम नहीं चलता हो तो उन्हें महीन सूत कातना चाहिये। धर्मकी रक्षा का अंश तो स्त्रियों में ही अधिक होता है। भावी सन्तान को हमें यह कहने का मौका तो हर्गिज नहीं देना चाहिये कि स्त्रियो के बनाव शृङ्गार के बदौलत भारत को स्वराज्य मिलते मिलते रुक गया।"—श्री कस्तूरीबाई गाँधी।

वर्तमान हीनपरिस्थिती का कारण।

कितनी माताएँ और बहनें पूछ सकती हैं कि इस कलाकी अवनति होने का क्या कारण? तो इसका उत्तर यह दिया जा सकता है कि जैसे पहले के हिन्दू राजाओं ने कताई और बुनाई की कला पर ध्यान दिया था, वैसेही मुसलमान सम्राटो ने भी अपने समय में इन कलाओ की रक्षा की, इसके उदाहरण भी बहुत हैं। एक उदाहरण यह है कि ढाके की मलमल का व्यापार प्रायः कुल हिन्दू कातनेवालो और बुनकारो के हाथ में था। इसीकारण ढाके के नवाब और दिल्ली के सम्राट् इन्हें खूब मानते थे। उस समय देशी कलाओ को बढ़ाने और सम्मान देने में आपस मे बड़ी लागडाट थी। हिन्दू कारीगरों के बढ़ते हुए सम्मान को देख, शनैः शनैः मु-

सलमान भी कताई और बुनाई की कलाकी ओर ध्यानदेने लगे। फल यह हुआ कि उत्तर भारत के कुछलोगो में बुनाई की कला इसी समय के लगभग हिन्दुओं के हाथो से निकलकर मुसलमानों के हाथों में गयी। संयुक्त प्रान्त, पञ्जाब और बिहार में आज भी बुनकारों और धुनियों में अधिक अबादी मुसलमान जुलाहों की है। जैसे और और व्यापारों को इस समय हिन्दुओ के साथसाथ मुसलमानों ने अपनाया था, उसी तरह बहुत से मुसलमानो ने बुनकारी का पेशा उठा लिया। बुनकारी के काम का उस समय निश्चय ही बड़ा आदर समझा जाता था।

इसके पश्चात् विक्रम की पन्द्रहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पूरब के देशोमें और विशेपकर भारतीय बाजारोंमे व्यपारको हथियानेके लिये युरोप की शक्तियों में आपस का रगड़ झगड़ चला। सोनेके लालच से वे भारतमें और पूरब के अन्य देशोंमें खिचआये। इन आनेवालो में मुख्य पुर्तगीज, ओलन्देजी, फिरंगी और अंग्रेज थे। उनका असली मतलब था व्यापार और वे तुरन्त ही भारतीय बुनकारों और दूसरे कारीगरो का माल बहुत नफेके साथ देशावर भेजने लगे। जगह जगह अंग्रेजों की इस्ट-इण्डिया-कम्पनी ने अपनी कोठियाँ बनायीं, जहाँ खासकर बुनकारों की बस्तियाँ थी। मुगल कर्मचारी उस समय अपने असली कर्तव्य को भूल रहे थे। येनकेन प्रकारेण पैसा जमा करना ही उनका काम हो चला था। वे इस गम्भीर बात को सोचने के लिये तैयार न थे कि इन विदेशी सौदागरों के आगमन से आगे चलकर इस देशपर कैसा असर पड़ेगा और

क्या परिणाम निकलेगा। भारत चाहे गारत हो जाय, देश के व्यापारी रसातल में चले जांय और देशी कारीगरी का नामोनिशान भी न रहे, इन बातों की उन्हें किञ्चित भी परवाह न थी। यही कारण था कि देशी व्यापारियों के हित अनहित का कुछ भी ख्याल न कर रुपयों की मार से विदेशी सौदागरों को व्यापार में सुभीता पहुँचता गया।

अंग्रेज जाति स्वभाव से ही चतुर थी। शनैःशनैः उसने हिन्दुस्तानियों से सम्पर्क बढ़ाना आरम्भ किया। जिसके कारण डच, पोर्टगीज आदि जातियों को अपना बोरिया बँधना बाँध वापस जाना पड़ा। इससमय भारत से वाहर जाने वाले कपड़ों में हिन्दुस्तान की बनी छीटें, खीनखांप, पशमीना और ढाकाई मलमल तथा रेशमी गर्दादि के कपड़े मुख्य थे। धीरे धीरे अंग्रेजों ने अपनी दुरंगी नीति से भारत के सम्राटो में फूट पैदा कर दी और भारतीय व्यापार को चौपट करने के उद्देश्य से भारतवर्ष की कारीगरी पर हाथ फेरा जाने लगा। और उधर इङ्गलैण्ड मे कल-कारखाने और उद्योग धन्धे शुरू कर दिये गये। जो माल भारत में तैयार होता था, वह प्रायः इङ्गलैण्ड में तैयार किया जाने लगा। इतना ही नहीं इङ्गलैण्ड में भारत के बने हुए कपड़ो पर टैक्स लगा दिये गये, जिसमें भारत का कपड़ा इंगलैण्ड से मँहगा पड़े। इधर भारतवर्ष के कारीगरो की कारीगरी किसप्रकार नष्ट की गयी, इसका इतिहास बड़ा ही हृदय विदारक है। कितने जुलाहों ने तो लाचार होकर अपने अँगूठे तक काट दिये थे। यह भारत की इस शिल्प कला के

नाश होने का समय था। यही कारण है कि शासनके साथ साथ कपड़े की विश्व विख्यात प्राचीन भारतीय कला अंग्रेजो के हाथ चली गयी। अब इस कला में इतनी उन्नति की गयी है कि विदेशो में सारे कपड़े मैशीन से ही बनते हैं। फलस्वरूप भारत से अरबो रुपये इसी कपड़े के कारण विदेश जाने लगे। देश मे हाहाकार मच गया, लोग भूखों मरने लगे। परन्तु जब भारत मे असहयोग आन्दोलन ने जोर पकड़ा और महात्मा गांधीजीने विलायती माल के वहिष्कार और देशी के प्रचार पर, खास कर खद्दड़ के प्रचार पर जोर लगाया तो देशकी हवा एकदम वदल गयी। शनैः शनैः लोगों के हृदय से विलायती कपड़ो के प्रति घृणा पैदा होने लगी और भारत मे देशी कपड़े की अनेक मीलें स्थापित हो गयीं। फिर भी कपड़े का व्यापार हमारे यहाँ इस समय दो भागों में विभक्त है। एक भाग देशी कहलाता है और दूसरा विलायती। जो माल हिन्दुस्तान मे तैयार किया जाता है, चाहे वह मिलों द्वारा तैयार हुआ हो वा हाथो से, उस माल को हम लोग देशी कहकर सम्वोधन करते हैं और जो माल विदेश से आता है उसे विलायती कहते हैं।

अवतो विलायती माल की आयात वहुत कम पड़ गयी है। परन्तु पहले भारत से अरबों रुपये इसी माल के कारण विदेश चले जाते थे। यदि भारत फिर अपनी प्राचीन कला को ओर ध्यान देना चाहे तो सर्वप्रथम उसे अपने अपने घरोंमे कताई का काम आरम्भ करना होगा। प्रत्येक स्त्री वा पुरुष को यह कर्त्तव्य कर्म निश्चित करना पड़ेगा कि मेरे तन ढँकने के लिये जितने वस्त्रकी आवश्यकता

पड़ेगी उतने ही वस्त्र का सूत, मैं स्वयं चर्खा चलाकर कात लूँगा। स्त्रियो को कताई की कला की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। कारण ? इनका अधिकांश समय योंही बैठे बिठाये व्यर्थ में ही नष्ट हो जाया करता है इसलिये यदि ये समय का सदुपयोगकर कताई की कला की ओर ध्यान दें तो समाज और देशका बड़ा भारी हित हो सकता है।

सिलाई की जरूरी चीजें—सिलाई की विद्या बहुत प्राचीन कालसे चली आती है। जबसे मनुष्य ने अपना तन ढँकना और कपड़े बनाना सीखा, तभी से सीने की विद्या का प्रचार है। कटे कपड़े वा कपड़ों के कई टुकड़ा को आपस में सूई तागे द्वारा जोड़ देने का नाम 'सीना' है। सिलाई में जिन जिन चीजों की आवश्यकता पड़ती है, पहले हम उन्ही का वर्णन करते हैं। सूई, तागा, कैंची, अंगुश्ताना और गज सबसे ज्यादा जरूरी चीजें हैं। इन सब चीजों को एक बुक़्ची में सम्हालकर एक जगह रखना चाहिये ताकि जिस समय जिस चीज की जरूरत पड़े वह तुरन्त मिल जाय।

सूई—सूइयाँ बड़ी से बड़ी नं० १ से छोटी से छोटी नं० २५ तक की होती हैं। इनमें नं० ५ से नं० १२ तक की सूइयाँ प्रायः कपड़े सीने के काममे आती हैं। जो सूई साफ, चमकदार और जरा कड़ी हो अर्थात् जो ज़ोर लगाने पर नहीं टूटे वही सूई उत्तम गिनी जाती है तथा जो सूई सीधी होती है उसकी सिलाई ठीक आती है और टेढ़ी सूई की सिलाई टेढ़ी मेढ़ी हो जाती है।

कैंची—कम से कम दो प्रकार की कैंचियाँ अवश्य रखनी चाहिये। एक तो छोटी जिसमें दोनो फल नोकीले और पतले हो और दूसरी बड़ी जिसका एक फल नोकीला और दूसरा फल चौड़ा हो।

अँगुश्ताना—यह लोहेका ही उत्तम होता है। यह हाथकी बिचली उँगली के सिर पर पहना जाता है, जिससे कड़े, मोटे वा संगीन कपड़ों मे बलपूर्वक सूई डालने से सूईकी नोक उँगली मे न चुभे और सूई के पिछले सिरे को अँगुश्तानी से अड़ाकर सूईको दूसरी ओर डालदेने में सुभीता हो।

तागा—तागा वा सूत की पेचकें आती हैं। वे कई रंग और किस्मकी होती हैं। इनके टिकट भी कई भांति के होते हैं और उन-पर तागोंके किस्मके नम्बर दिये होते हैं। महीन, मोटे, कमबटे व ज्यादाबटे तागोंके अनुसार व्यवहार भी अलग अलग कामोंके लिये किया जाता है।

गज़—कपड़ा नापने के लिये यह एकप्रकारका नाप है। यह फीता लोहे या काठका बनाया जाता है और दरजीलोग फीतेके गज रखते हैं। सीने के काम के लिये फीते का गज रखने में सुभोता होता है।

नाप गज का	हिन्दुस्तानी गज
१२ इञ्च = १ फुट	१६ गिरह = १ गज
३६ इञ्च = ३ फुट वा एकगज अथा दोहाथ	१ गज = ३६ इञ्च

सीने को मैशीन—स्त्रियाँ अब भी केवल सूईतागे के सहारे हाथसे कपड़ा सीती हैं। परन्तु कितनी बहनें अब सीने की मेशीन को भी दर्जियों की तरह सीने के काममें लाने लगी हैं। ये मशीनें

भाड़ेपर भी मिलती हैं और किश्तपर भी खरीदी जा सकती हैं।

सीने का अभ्यास—माता पिता को चाहिये कि अपनी पुत्रियों को गुड़िया खिलाते समय ही से इस उत्तम कामको सिखलावें। जब इसभाँति हाथ सधजाय तो पुराने कपड़े काट काटकर सीना सिखलावें। इसके पीछे पुराने कपड़ों की टोपियाँ, कुर्त्ते, थैले इत्यादि सीना सिखलावे। जब सीना आ जाय तब तुरपना बतावें। जब तुरपने में हाथ जमजाय, तब नये कपड़े सीनेको दें।

सिलाई के काममें काट-छाँट और सिलाई दोनों ही उत्तम होनी चाहिये। जिसप्रकार बढ़ियाँ गवैयेके लिये ताल और सुर दोनों एक समान होने आवश्यक हैं—उसीप्रकार सिलाई के काममें भी आवश्यकता है। यदि किसी कपड़े की काँट-छाँट अच्छी हो और उसकी सिलाई एकदम खराब तरीकेसे की गयीहो तो क्या वह कपड़ा सुन्दर जँचेगा? कभी नहीं। कपड़े की अच्छी काँटछाँट के साथ ही उसके उत्तम सिलाईकी भी जरूरत है। इसलिये इसकाम में दक्षता प्राप्त करने के लिये काँटछाँट और सिलाई ठीकरूप से सीखनी आवश्यक है।

ट्रायल वा कच्चा पहनाना—कपड़े को काटकर और कच्चा सीकर शरीर पर पहनाने की क्रियाको ट्रायल वा कच्चा पहनाना कहते हैं। इस समय सारी सिलाई कच्ची रखनी चाहिये। पहनाने के बाद जहाँकहीं दोष हो उसे अच्छी तरह देखलेना चाहिये ', उसका कारण ढूँढ़कर, उसी ठीक करने की जगह पर एक निशान

बना देना चाहिये । इसके बाद रद्दो-बदल कर दोष निकाल देना चाहिये ।

माप-शिक्षा–कपड़ा सीनेकी कला सीखनेके समय,पहले जिस विषयके ऊपर ध्यान देना चाहिये वहनाप ले । नापलेने के ऊपर ही कपड़े का अच्छा और खराब होना निर्भर है । अतएव नाप लेते समय बहुत सावधान रहना आवश्यक है ।

स्त्रियों की छाती के माप के अनुसार और दुसरें माप ।

छाती	२४	२६	२८	३०	३२	३४	३६	३८	४०	४२	४४
कमर	२३	२४	२४½	२५	२५½	२६	२६¾	२७	२९	३०	३१
मोहरा	५¾	६¼	६¾	७	७¼	७½	७¾	८	८¼	८½	८¾
पुट	४½	४¾	५	५¼	५½	५¾	६	६¼	६½	६¾	७

स्त्रियों की मुख्य पोशाकें—स्त्रियों के लिये ब्लाउज, जाकेट, सेमिज्ञ, साया या लँहगा, फ्राक, पेंनी, चोली, सुजनी और बच्चों की टोपियाँ इत्यादि सीनेकी कला का जानलेना अत्यावश्यक है। मुख्यतः स्त्रियों को इन्हीं सब पोशाको के सीनेकी अधिकतर जरूरत पड़ती है। इनमें भी जो जो पोशाकें मुख्य हैं,उन्हींके काटने और तैयारी करने की रीति हम यहाँ पर लिखेंगे। उन रीतियो के जान लेने से स्त्रियाँ प्रायः सभी पोशाकें सी लेंगीं। कोई विशेष दिक्कत न उठानी पड़ेगी।

ब्लाउज—पहले उसका नापलेना होगा। नापः—लम्बाई—१६, छाती-३६, पुट-६॥, पुटहाथ-२८, कमर-३२, गला-१४, शेस्त-१५।

इस कपड़े की लम्बाई में चौड़ाई का डबल करके भाँज लो। कपड़ा हमेशा लम्बाई मे भाँजदिया जायगा।

ब्लाउज की आस्तीन तीन चौथाई होती है। कभी २ केहुनी तक आधी आस्तीन भी होती है। आस्तीन तथा गलेपर लेस लगाई जाती है। ब्लाउज का मोहरा साधारण मोहरा से १॥ इञ्च कम होता है। यदि छातीका नाप ३६ इञ्च हो तो साधारण मोहरा ९ इञ्च होगा। पर इससे १॥ इञ्च निकालकर ७॥ इञ्च ब्लाउजका मोहरा होगा।

सामने का भाग—क च लम्बाई का रेखा १६ "इञ्च। क से ३" इञ्च नीचे ख, ख से २ इञ्च नीचे ग एवं क से ७॥ इञ्च नीचे और क से १५" इञ्च नीचे ड विन्दु लो। इनसब विन्दुओं से

क च रेखा के ऊपर लम्ब खींचो (पृष्ठ १५२ चित्र नं० १ देखो)। घ के लम्ब से छाती की एक चौथाई से १॥ इञ्च अधिक अर्थात् १०॥ इञ्च की दूरीपर छ लो। पीछे छ से छाती के बारहवें भाग अर्थात् ३ इञ्च दूरी पर ज विन्दु लो। तथा छ से नीचे लम्बाई तक एक लम्ब खींचो। ज से ज झ, लम्ब खींचो पीछे झ से छाती के बारहवे भाग अर्थात् ३ "इञ्च दूर ञ विन्दु लो। झ के १॥ इञ्च नीचे ञ ट रेखा लो। झ से ञ छाती के बारहवें भागकी दूरीपर है। ञ ट पीठका पुट घ म भाग से ⅛" इञ्च कम है। घ से छ छाती की एक चौथाई से १॥ इञ्च अधिक है। ड से कमरकी चौथाई में १॥ "इंच जोड़कर अर्थात् ६॥ इंच के बराबर ड ठ लो। पीछे च से ड ठ के आधे के बराबर लेकर च ड लो फिर इसीप्रकार घ ठ ड को मिला दो। ड और च के १॥ इंच नीचे ठ और ट लो। इस कपड़े में एक अलग कपड़ा जोड़ना होगा। पीछे ञ घ को मिलाओ। ञ घ ही (v) शेप गलाहुआ, क्योंकि यह अंग्रेजी (v) ही के समान होता है यह सामने का भाग हुआ, इसको काटते समय घ ठ ड की बगल में १" इंच अधिक कपड़ा रखकर काटना होगा। ञ घ को काट लो। प्रायः ब्लाउज में पीठ की ओर बटन लगते हैं। जब पीठ में बटन हों तब सामने का कपड़ा सम्पूर्ण सलग होगा। इसकी भाँज पंजाबी के समान होती है और काट बेष्टके समान होगी। चित्र देखो नं० १ पृष्ठ १५२

× × × ×

चित्र नं० १
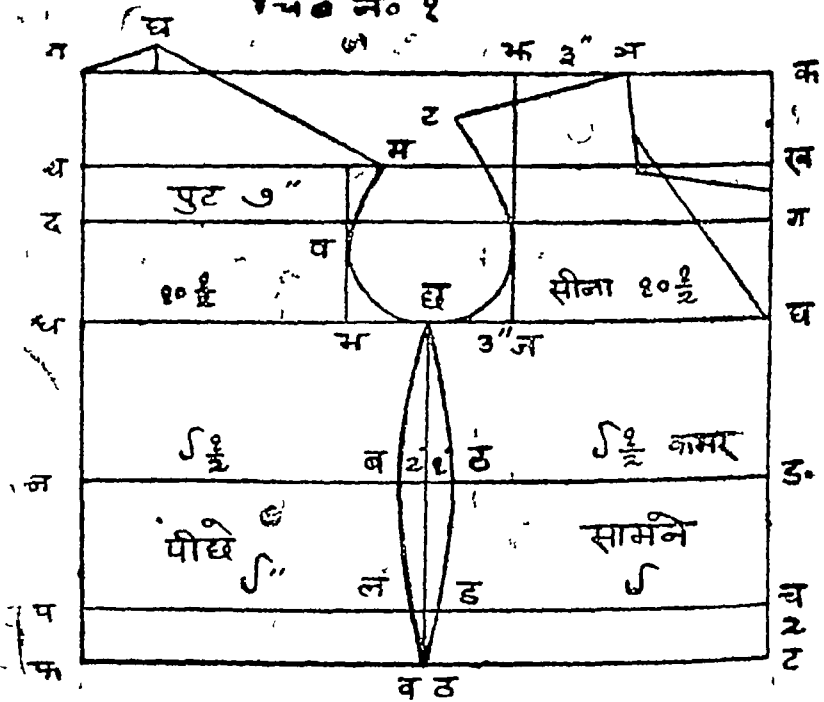
संक्षिप्त विवरण:—क से च = लम्बाई १६ इञ्च ।

क से ख = ३, इञ्च ।

ख से ग = २ इञ्च ।

क से घ = मोहरा ७॥ इञ्च ।

क से ङ = शेस्त १४ इञ्च ।

ध से छ = छाती के एक चौथाई भाग से १॥ इंञ्च अधिक ।

छ से ज = छाती का बारहवाँ भाग = ३ इञ्च ।

झ से ञ = छाती का बारहवाँ भाग = ३ इञ्च ।

ङ से ठ = कमर की चौथाई से १॥ इञ्च अधिक = ६॥ इञ्च

च से ङ=९ इञ्च से १॥ इञ्च अधिक।

ङ च रेखा से ठ ट रेखा १ इञ्च नीचे।

सामने का हिस्सा हो गया। अब पीठ काटी जायगी। त से प लम्बाई १९ इञ्च है। त से ९ इञ्च नीचे थ तथा थ से २ इञ्च नीचे द है। त से ७॥ इञ्च नीचे मोहड़ा ध और १५ इञ्च नीचे म और दूसरे विन्दुओं को लो (चित्र नं० १ देखो) पीछे इन सब विन्दुओं से त प के ऊपर लम्ब खींचो। ध से छ सामने के अंश घ छ के बराबर। न, व, सामने के ङ ठ के बराबर है। प ल सामने के च ङ के समान। ध त, य म, छ को वेस्ट के समान अंकित करो, पीछे प और ल से १॥ इञ्च नीचे फ और व अलग कपडे की सिलाई करनी होगी। अब ठीक सामने के समान इसको भी काट लो। यह भाग भी वेस्ट कोट की पीठ के समान काटा जा सकता है।

संक्षिप्त विवरण--त से प=लम्बाई १९ इंच।

त से ध=मोहरा=७॥ इञ्च।

त से म=शेस्त १४ इञ्च।

द से व=पुट ६॥ इञ्च।

त से य=छाती के बारहवें भाग से आधा इञ्च कम।

थ म=द व से आधा इञ्च कम अधिक।

ध से छ=छाती के एक चौथाई भाग से १॥ इंच अधिक।

म से व=कमर के एक चौथाई भाग से आधा इंच अधिक।

प से ल=म घ से आधा इंच अधिक।

प फ = १॥ इंञ्च। ल से ब १॥ इञ्च नीचे।

इसकी आस्तीन ठीक पंजाबी के समान मोहरा की चौथाई के बराबर काटनी होगी। इसकी मोहरी १०॥ इंच होता है। इसकी मोहरी पर टेनिस कफ के समान एक कफ भी होता है, (चित्र नं० २ देखो) और कभी सामने कालर भी होती है। कालर काटना कुछ कठिन नहीं है। जिस प्रकार गला हो उसी प्रकार की कालर काटकर गले पर लगा दो। ब्लाउज सिलाई करने के लिये और कोई नयी बात नहीं बतलानी पड़ेगी। इसको जोड़ते समय ल ब छ के साथ ड ठ छ और य म, ञ ट के साथ आस्तीन जोड़ कर लगानी होगी। नं० १ चित्र और ब्लाउज का चित्र देखो। आज कल ब्लाउज कई तरह के फैशन के होते हैं। पर प्रायः सब की काट एक प्रकार की होती है, केवल इधर उधर कुछ हेर फेर कर फैन बनाया जाता है।

जाकेट--जाकेट ब्लाउज के समान ढीली नहीं होती। ब्लाउज में तो लेस न होने पर भी काम चलता है, पर जाकेट में तो लेस का ही व्यवहार अधिक होता है। गला के सामने छाती के ऊपर सुन्दर और बढ़ियाँ लेस रहती है। बहुत जाकेटो के हाथ में तीन चौथाई भाग तक लेस लगती है। छाती के ऊपर कमर तक १ इञ्च चौड़ी कपड़े की प्लेट होगी। गरम जाकेट का पूरा हाथ रहता है और ठीक कोट के समान होता है। पर मोहरी टेनिस शार्ट के समान चुस्त होती है। जब पूरा हाथ रहे तब उसे कोट के ।न काटनी होगी। इसका माप भी ब्लाउज की तरह होता है।

माप:—लम्बाई, शेस्त, छाती, पुट, पुट हाथ, गला।

समीज—समीज तो घर की स्त्रियाँ बात की बात में काट लेती हैं। समीज की सुन्दरता उसकी काँट-छाँट पर निर्भर करती है। जब छाती तथा आस्तीन में लेस का सुन्दर काम किया जाय तो वह और अधिक सुन्दर देख पड़ेगा।

समीज काटने का माप:—

लम्बाई—४८, छाती—३६, कमर—३२, पुट—७॥, शेस्त—१५॥ इंच।

फ्राक—आजकल बहुत प्रकार के फ्राक देखने में आते है। अनेक प्रकार की फैशन होने पर भी काटने का नियम एक ही है।

चित्र नं०२
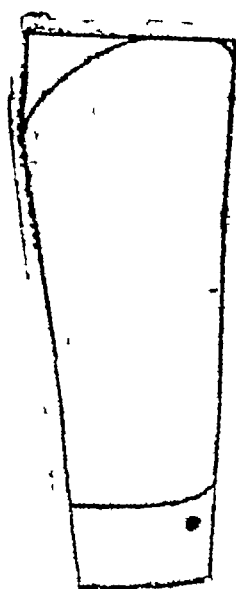
फ्राक के घेर का कपड़ा भी मोहरा तक दो भागो में काटा जाता है। पीछे दोनो को जोड़ दिया जाता है फ्राकके घेर का नाप छाती का दूना लिया जाता है। फ्राक की कमर तथा नीचे का घेर प्रायः बराबर होता है।

चित्र नं० ३
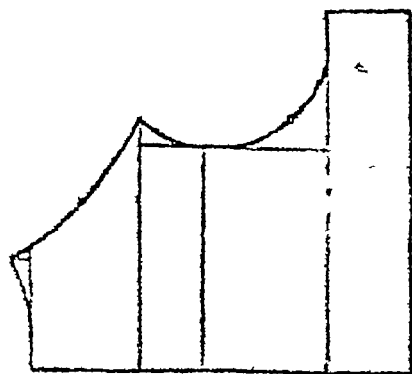
चित्र नं० ४
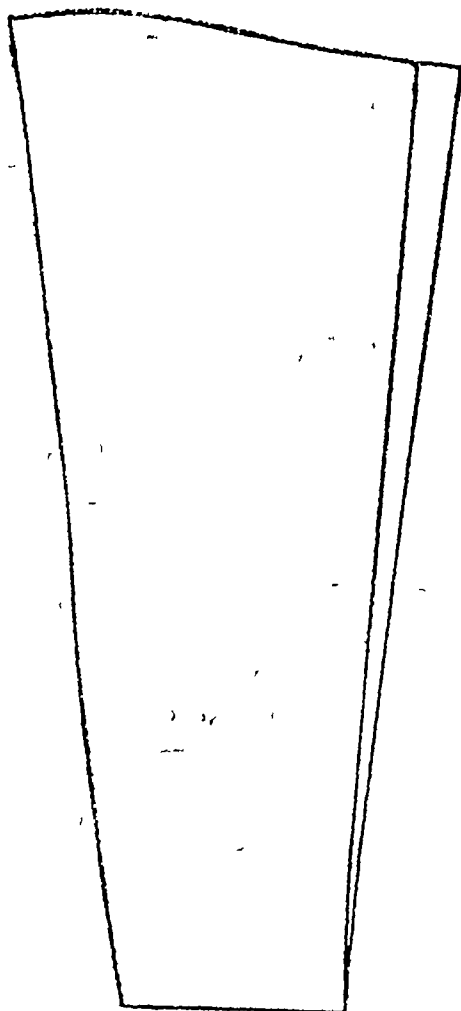
लहंगा (साया)

लहंगा तैयार करने में कोई विशेषता नहीं है। ठीक समीज की तरह नीचे के घेर और कमर में २ इंच अधिक कपड़ा रखना चाहिये। इस अधिक कपड़े को प्लेट की तरह मोड़कर कमर के बराबर करदो। ऊपर रस्सी लगाने की जगह रखनी होगी। कपड़े का हिसाब और भांज करने का नियम ठीक समीज की तरह है। इसमें एक ओरको नीचे मगजी लगती है और संजाफ टँकती है। ऊपर की ओर चीन डालकर नेफा लगा देते हैं और नार या रस्सी को भी नेफा के संग ही उसमें भीतर को करते हुए सीते हैं, जिससे संगका संग टकवा जाता है। नहीं तो पीछे [illegible] मे पड़ने में आता है।

चोली—इसके कई नाम हैं, जैसे—अँगिया, कंचुकी, केंचुली आदि। यह प्रत्येकदेश और जाति में अलग अलग प्रकारकी बनती है। चोली का अच्छा बुरा होना उसकी सिलाई और अंग मे ठीक बेठीक होनेपर निर्भर करता है। इसलिये पहले यह देखना चाहिये कि बाँह और वह स्थान जिसमें स्तन रहते हैं, अंगमे ठीक हैं अर्थात् बाँह कन्धे से चार चार अँगुल आगे तक रहनी चाहिये। पीठमें पीछे जहाँ तनी बँधती है, वहाँ चारो तनियों के बीचमें पान की सी शकल बनजानी चाहिये। ऊपरकी तनी आपस में और नीचे की भी आपस में बँधने पर मिलजानी चाहिये।

सुजनी—मे बखिया करनी होती है। वह तीन तरहकी होती है (१) एक तो बेभरतकी, जिसमें रुई भरीहुई होता है या दो तह केवल कपड़े की ही होती है। रुई नहीं रहती, उसीमें बखिया द्वारा फूलपत्ते निकाल लेते हैं। (२) दूसरी भरती की अर्थात् जिसमें काला या दूसरे रंगका फलीता भरकर फूलपत्ते व बेल बूटे काटते हैं। (३) तीसरी यह है कि एकहरे कपड़े पर बखिया काँटेदार करदेते हैं।

फूलपत्ते व बेलबूटे काटने की विधि यह है कि जैसा फूल व पत्ती डालनी चाहे वैसी ही छापले या पेन्सिल से काढ़ले, फिर उस पर दुहरी बखिया कर दे।

कई भांति की सिलाई—सिलाई कई भाँति की होती है। जब कपड़े के दो टुकड़ों के घोर मिलाकर सीते हैं, तो उसे सिंगूज़ कहते हैं। जब इन्हीको गोल करके भीतरकी ओर उलटकर सीते हैं,

तब उसे उलटना वा तुरपना कहते हैं। यह दो प्रकारका है। एक तो गोल, जो पिसूज की सिलाई के बराबर ही तुरपी जाती है और दूसरी चौड़ी, जिसे अमलपत्ती कहते हैं, जो पिसूज से थोड़ी सी दूर पर जाकर तुरपी जाती है। वह भी दो भाँति की है। एकतो जिसमें दोनों सिरे एक ही ओर को उलटजाते हैं, दूसरी जिसमें पिसूज की दोनो ओर को एक एक छोर उल्टा जाता है।

तीसरी सिलाई बखिया की होती है। जो इसप्रकार की जाती है कि जहाँसे सूई चुभोकर निकाली, वहाँसे फिर पिछाड़ी को लेजाकर आधी दूरपर चुभोई और पहिलेकी बराबर दूरपर जानिकाली। फिर पीछेको लाकर जहाँसे पहिली सुई निकाली थी, उसी छेद में पिरोकर उतनी ही दूरपर जानिकाली। इसभाँति करते रहने से ऊपरकी सिलाई एक दूसरी के बराबर चली जायगी और नीचेकी ओर दुहरी होती जावेगी। बखिया भी दो प्रकार का होता है। एक साधारण जैसा अभी बताया, दूसरा काँटेदार।

साधारण सीनेमें तो पिसूज और तुरप ही का काम पड़ता है, पर मगजी वा गोट टाँकने में बखिया का। जहाँ फ़लीता लगाना होता है, वहाँ भी बखिया ही लगाते हैं।

पिरोना—पिरोने से यह अभिप्राय है कि जिससे डोरे को पिरोकर कोई कामकरे, जैसे मोजे व दास्ताने बुनना, फीता, बेल, कमरबन्द, बटुवे की डोरी गूँथना और बटुवेकी भाँति भूषण पिरो लेना। इसकला का अभ्यास भी बचपनही से करना चाहिये।

सादा पहनावा—पहिनावा, भिन्न भिन्न देश वा भिन्न भिन्न

जातियों का पृथक पृथक है। आजकल के वातावरण में कितने पुराने पहिनावे उठगये हैं और उनकी जगह दूसरे पहिनावे होगये हैं। तौ भी पहिनावे में जितनी सादगी और स्वच्छता का ध्यान रक्खा जाय, उतना ही अच्छा है। व्यर्थ का गोटा, रेशम, कालावत्तू आदि का आडम्बर बढ़ाकर विशेष खर्च करने में कोई लाभ नहीं। एक पैसा अधिक लगता है और ऐसे वेश की आजकल सिवाय निन्दा करने के कोई भी प्रशंसा नहीं करता। इसलिये जितना सादगी पूर्णवस्त्रोंका व्यवहार किया जाय उतना ही अच्छा है।

तम न होयगो दूर, बिन इक खादी रवि उगे।
सुगम, नीक, भरपूर, लज्जा ढाँकन के निमित ॥

कपड़े की रँगाई

रंग बनाने का विधि—इस छोटे से लेख में यह कदापि सम्भव नहीं कि उनसभी प्राकृतिक रंगों का वर्णन कियाजाय जो भारतवर्ष में उत्पन्न होते हैं। इसलिये इस लेख मेंतो हम थोड़े से रंगोंका ही वर्णन करेंगे। जोलोग महात्माजी के आन्दोलन से घर में खादी तैयार करते हैं, तथा जो बहिनें अपने वस्त्रादि घरमें ही रंग लेती हैं, उनके लिये हमारा यह लेख उपयोगी सिद्ध होगा।

रंग लगभग १५५ प्रकार के होते हैं, जिनमें लाल, पीला, काला और आसमानी ही मुख्य है। शेष, इन्हीं चारों रंगों के फेटमॉट से तथा न्यूनाधिक मिलाने से बनजाते हैं। पर ये भी कई भाँति से बनाये जाते हैं, अर्थात् जैसा प्रयोजन देखाजाता है, वैसा बनाना

होता है । अस्तु—

पीला, लाल, हरा, नीला, काला, खाकी और बैंगनी सभी प्रकार के रंग प्राकृतिक साधनोंसे बनते हैं । रंगोंमें जो गुण चाहिये, वे भारतवर्ष के रंगों में मिलते हैं । लाल और नील के रंगों की तो इस देशमें खूब प्रधानता है । इसके अलावा खैरका रंग भी उपयुक्त परिमाण में प्राप्त होता है ।

पीला रंग—हर्दी, हरसिंगार की डंडी, केसर, टेसू के फूल, पीली मिट्टी इत्यादि से बनता है ।

काला रंग—माजू, कसीस इत्यादि से बनता है ।

लाल रंग—कसूम, आल, सिंगरफ, लाख, हिरमिच, गेरु, मेंहदी, खैर, मँजीठ और महावर इत्यादि से बनता है ।

इनके सिवाय इतनी वस्तु रँगने के काममें और भी आती हैं—आमला, बबूल की फली, हर्रा, काकड़ासींगी और अनारका छिलका इत्यादि । परन्तु बनाने की विधि भिन्न भिन्न हैं । कितने रँगो मे आइरनसाल्ट (IRONSALT) भी डाला जाता है ।

चूना और सज्जी रंग काटने में और अमचूर, खट्टा नींबू, फिटकिरी, सुहागा इत्यादि रंग को गहरा करनेमें प्रयोजनसे वर्ते जाते है ।

कपड़े चार प्रकार के होते हैं । सूती, ऊनी, सनी और रेशमी । ऊनी और रेशमी कपड़ों का रँगना सहज नहीं है, कठिन और बड़ी सावधानी का काम है । जब कपड़े को रँगे तो पहले यह देखले कि कपड़ा अच्छी भाँति धुला हुआ है या नहीं, दाग वा धब्बा तो नहीं लगा हुआ है अथवा मैला तो नहीं है । कपड़ा जितना अच्छा धुला

होगा, उतना ही रंग चोखा चढ़ेगा। रँगने से पहले कपड़ेपर
चढ़ाना होता है। सूती कपड़े पर हर्रा, माजूफल, अनारकी छाल
कसीसका कस चढ़ाया जाता है। ऊनी कपड़ेपर शंखद्राव वा नें
दर का और रेशमी कपड़ेपर फिटकिरी, कत्था वा अनार की
का चढ़ाया जाता है। रंगको गहरा करने के लिये खटाई व
फिटकिरीका वोर देते हैं। पर रंग वदलने के लिये लोहेका
लगाते हैं, जो इस प्रकार से बनता है।

लोहेके दो सेर चूर्ण में पन्द्रह सेर पानी डालकर मिट्टीके व
मे भर दियाजाय। दसपन्दह दिनमें पानीका रंग कालासा होजा
और यही कट कहलाता है। ऊपर जो जो वस्तु रँगकी वता
उनका रंग इसप्रकार बनाया जाता है।—

(१) सिंगरफ, हिरमिच, केसर, गेरू, हर्दी, तूतिया इत्
को पीसकर रंग वनायाजाता है।

(२) कसुम, आल, पतंग इत्यादिका रेनी बनाने वा टप
से बनता है।

(३) हरसिंघारकी डंडी, बबूर वा वेरका वकल का रंग औ
से वनता है।

(४) मेंहदी, टेसूके फूल, लाख, महावर, खैर, आमला, व
फली इत्यादि को पानी में भिगोने से बनता है।

(५) लील का रंग खमीर उठाने से बनता है।

रेनी बनाने की विधि—जिसकी रेनी बनानी हो उस
कूटकर महीन करले, पर कसूम को अधिक कूटनेकी आवश्य

नहीं। आल; पतंग ही अधिकतर कूटेजाते हैं। चार पावों की एक टिखटी लो। उसमें एक कपड़ा चारों कोनो से ऐसा बाँधो जो नीचे को हाथभर वरन अधिक लटका रहे, ताकि झोली बनजाय। इसके नीचे एकनाँद रखदो, वा कोईदूसरा बासन, जिसमें रेनी टपकानी हो। इस झोली में उस वस्तु को जिसकी रेनी काटनी चाहो भरदो और ऊपर से पानी डालते जाओ। फिर थोड़ी सज्जी (सेरभर रंगमें आधीछटाँक) डाल दो। पानी रंगदार हो होकर टपकता रहेगा। जब पानी बेरंग का आनेलगे तबजानलो कि रेनी कटचुकी और अब टपकाने की आवश्यकता नहीं।

लील का खमीर उठाने की विधि—सेरभर पवाँर के बीज, भाड़में भुनवाकर दालसी दलडालो। इसीके बराबर इसमें लील डालदो, जो गट्टी बनीहुई बिकती है। इनदोनों को किसी मिट्टी के बासन में भरदो और इसमें इतना पानी डालदो कि लीलसे एक उँगल ऊपरतक हो जावे। एक सप्ताह वा दस दिनतक धरा रहनेदो, पर दिनमें चार पाँच बेर लकड़ीसे खूब चलादिया करो। यही खमीर कहलाता है। इसकी पहिचान यह है कि जब बीज और लील आपसमें घुलमिल कर एक हो जावें और अत्यन्त दुर्गन्धि देनेलगें, तब जानलो कि खमीर उठगया। इसकी और भी क्रियायें हैं। लेख बढ़जाने के ख्याल से यहाँ लिखने की आवश्यकता नहीं।

वस्त्र रँगने की विधि—यदि किसी कपड़े से रंग काटना होवे तो पानी किसी धातुके बासन मे औटावे और कपड़ेको इसमें डाले, परन्तु पानी कपड़े से ऊपर रहना चाहिये। इसमें थोड़ीसी

पिसी फिटकरी और डालदे और औटाती रहे। रंग कट कटकर पानी में आ जावेगा। कपड़ेका रंग काटनेसे कपड़ा और ही रंगका होजाता है, पर केवल कच्चाही रंग कट सकता है, पक्केरंग नहीं कट सकते।

जब कपड़ा रँगे तो उसमें पानीका हिसाब अच्छीभाँति देखलेवे। प्रथम जितना रंग कपड़े में देनाचाहे, उतना रंग पानीमें मिलाले। हल्का रँगनाचाहे तो थोड़ा और गहरा रँगना चाहेतो पूरा, पर पानी भी इतना होना चाहिये कि जिसमे कपड़ा भलीभाँति डूबजावे, वरन कपड़े से चारअँगुल पानी ऊपर रहजाय।

कपड़े को भी पानीमे इसप्रकार डाले कि समूचे कपड़े पर एकसा रंग हो जावे, धब्बे न पडने पावें वा कहीं थोड़ा और कहीं बहुत रंग न चढ़जावे और कहीं कोराभी न रहजाय। महीन कपड़ेमे थोड़ा रंग और पानी लगता है। गाढ़े कपड़े में रंग अधिक लगता है। जब कपड़ा रँगचुके तब सबसे पिछले डोबमें या तो पिसी फिटकरी या अमचूर का भीजाहुआ पानी या निम्बू के खट्टेरस को पानीमें मिलाकर एकडोब उसवस्त्र का और दे दे ताकि रंग खिलउठे और पक्काभी होजावे। यदि कलप देनाचाहे तो थोड़ासा कलप भी पिछले डोबके पानीमें खूब घोलकर कपड़ेको डोबदे और निचोड़ डाले।

जो रंग कच्चे हैं, उनमें रँगकर कपड़ेको छायामें और जो पक्के रंग हैं, उनमें रंगकर धूपमें कपड़ों को सुखाना चाहिये। परन्तु कच्चे रंगको धूपमें न सुखाना चाहिये। ऐसा करनेसे रंग उड़जाता है और रंग फीका पड़जाता है।

कलप बनाने की विधि—चावल पीसकर वा गेहूँके चून को सोलहगुने पानीमें घोलकर गाढ़ेकपड़े में छानले। पीछे आगपर लेईसी पकाले, बहुत गाढ़ी न होने दे, पतली ही रक्खे।

कपड़े को जब पानीमें रंगनेके लिये डोबे तो खोलकर डोवे। पर रँगमें डोबने से पहले एकबार खाली निरेपानी में डोबकर निचोड़ डाले। फिर रंगमें डोबे, इससे धब्बे नहीं पड़ते। किसी किसी रंगमें तो एकही रंगसे रँगना होता है, पर बहुत से रंग ऐसे हैं, जो कईरंग से मिलकर रंगेजाते हैं। इसलिये कपड़े को ओसरे ओसरे से कई-रंग में डोबना होता है। इसकी रीति यों हैं कि— पहले एकरंग के पानीमें डोबकर निचोड़डाले औरसुखाले, फिर दूसरे में डुबावे और निचोड़कर सुखाले। इसीप्रकार अन्ततक करे। यह न करे कि एक रंगमें रंगलिया और गीलाही दूसरे रंगके पानीमें डोबदिया। गीला डोबने से रंग अच्छा नहीं चढ़ता। भिन्न २ रँगोंके रँगने की विधि भी प्रायः भिन्न भिन्न है। इसकेलिये मुख्य मुख्य रंगोंके रँगने की विधि यहाँपर लिख दी जाती है।

केसरिया—मजीठ को पानीमें औटाकर रंग निकाल ले। अनारके छिलके और हरसिंघार की डंडीको संग संग औटाकर छानले। कपड़े को पहले फिटकरी के पानीमें डोवले। पीछे इन दोनों रँगों के पानीको एकसंग मिलाकर कपड़े रँगले।

पीला—हर्दीको पीसकर उसमें थोड़ीसी सज्जी मिलादे। पीछे [illegible] को उसमे रंगले। फिर पानी डाल डालकर कईवेर मल मल-

कर धोले। जब हर्दीकी गन्ध जातीरहे तब फिटकरी के पानीमें डोब देकर सुखाले।

कपूरी—हरसिंघार के फूलोंके रंगमें कपड़ेको रंगकर खटाईके पानीमें धोडाले तो कपूरी रंग हो जावेगा।

शर्बती—तीनभाग हरसिंघार के फूलोंका रंग, एकभाग कसुम का रंग (जो रेनी बनाने के पीछे निकाला जाता है) मिलाकर रंगले।

बदामी—पावभर तुन के चावलों को सेरभर पानीमें औटा लेवे। पहले गेरूमें कपडे को रंगले। पीछे तुन के आधसेर पानीमें डोबदे। यदि रुचिके अनुसार न होवे तो बाकी पानी डालकर और डोब दे लेवे।

गुलाबी—कसुम की थोड़ीसी गाद को पानीमे मिलाकर कपड़े को रंग ले।

लाल—इसमें कसुमकी गाद गुलाबी से चौगुनी छःगुनी देकर रँगना चाहिये। पीछे खटाई के पानीमें डोबदेकर सुखालेवे।

गुलेनार—पहले कपड़े को कसुमके फूलोंके दूसरे रंगमें डोबलेवे। पीछे गादके पानीके रंगमें रँगे। पीछे इसी गादके पानी में थोड़ीसी हर्दी पीसकर मिलादे और कपड़े को उसमे रँगे। पीछे खटाई के पानीमे डोबकर सुखाले।

फीरोज़ई—पहले कपड़े में चूनेका हल्का अस्तर देलेवे। फिर तूतियाके पानीमें रंगकर सुखाली जावे। जब तूतियाको पानीमें डोब

दे तभी निचोड़कर सुखालिया करे। पाँच या छः वेरमें फीरोजई हो जायगा।

नीला—पक्कीलील को पानीमें घोलकर कपड़ेको रँगले। थोड़ी लील डालने से कम और अधिक डालने से गहरा रंग आवेगा। इसके पीछे दूध वा मेंहदीके पत्तोके रंग में रंगदे तो लीलकी दुर्गन्धि जाती रहेगी। लीलके खमीरमें रगने से भी रंग अच्छा होता है।

नारंगी—हरसिंघार के फूलोंको पानीमें औटाले। इसमें कपड़े को रँगे, पीछे कसुमके दूसरे पानीमें रंगकर खटाईके पानीमें डोबकर सुखा ले।

अंगूरी—टेसूके औटाये हुए पानीमें कपड़ा रँगे। फिर बहुतही हल्का लीलका रंगदे। पीछे खटाई के पानीमें डोवकर सुखाले।

उन्नाबी—पहले कपडे को हर्रेके पानीमें रँगे। फिर दोतोले कत्थेके पानीमें रँगे। फिर छँटाकभर पतंगके औटाते हुए पानीमें डोव दे। फिर दोतोले फिटकरी के पानीमें डोबकर सुखाले।

चूँदरी, लहरिया और धनुक और पोम्चा इत्यादि रंग, कपड़ो को डोरे से बाँध बाँधकर रँगते है और जिनके रँगने की विधियाँ भी अनेक हैं। ये काम रंगरेजो के यहाँ भिजवाकर करवालेना चाहिये। इनके अतिरिक्त भाँति भाँति के रंग बाजारों में विकते हैं। आवश्यकता पड़नेपर मगाकर घरमें लिखित रीतिके अनुसार रँगाई का काम कर लिया जासकता है। घरमें ही रंग बनाकर रँगने से पैसेकी बचत होती है और रँगने की कलाभी आजाती है।

कपड़ों के धब्बे छुड़ाना।

(१) लोहू का धब्बा—नमक के पानी में धो डालने से जाता रहता है।

(२) फलों के रसका दाग़—पानीमें कबूतर की बींट औटाकर धोनेसे छूट जाता है।

(३) मेंहदी के रङ्ग का दाग़—पानीमें कबूतर की बींट औटाकर धोनेसे छूटजाता।

(४) स्याही का दाग़—पुराने सिरके को पानी मे गर्मकर धोनेसे छटजाता है।

(५) चिकनाई का दाग़—नमक और चूना पीसकर पहले मले फिर इसीको पानीमे घोलकर धो डाले, दाग छुटजायगा। इसके अतिरिक्त घृतकी चिकनाई पर तेल लगाकर रखदे और तेलकी चिकनाई पर घृत लगाकर रख दे, पीछे पानीमे इस कपड़े को डालकर औटालेवे तो दाग छूट जायगा।

(६) पशमीनेकी चिकनाई—जौ की भूसीको पानीमें औटाकर धोवे। फिर गन्धक का धूआँ देवे दाग साफ हो जावेगा।

(७) रेशमी कपड़े की चिकनाई—सूखा चूना और नमक पीसकर उसपर डाले। पीछे अलसी पीसकर उसपर डाले और इतनी देर रहने दे कि वह सब चिकनाई को सोख ले।

(८) पान का दाग़—नमक और निम्बू की खटाई लगाकर मले, दाग़ छूटजायगा।

(६) सब भाँति के दाग़—ऊँट के मेंगन को पीसकर पानी में घोले और उसमें कपड़े को भिगो दे। एक दिनरात पड़ा रहने दे। दूसरे दिन धो डाले, परन्तु हींग और साबुन के पानी से धोना चाहिये। सब भाँतिके दाग़ छूटजावेंगे।

रोशनाई बनाने की विधि

(१) काली रोशनाई—माजू फल को पानीमें औटाकर उसमें कसीस मिलाने से उसका रँग-काला हो जाता है और फिटकरी मिलाने से और भी उत्तम होगा। माजू फल को औटाते समय किञ्चित मात्र लौंग डाल देने से स्याही बिगड़ती नहीं है। इस क्रिया में माजू फल १ पाव, जल १॥ सेर (परन्तु आधा जल जल जाय) कसीस १ तोला, फिटकरी ६ मासे और लौंग ६ मासे होनी चाहिये।

(२) ब्ल्यू ब्लैक रोशनाई—पहले माजू फल को पीसकर छः गुना पानी मे भिगो रक्खे। फिर आग पर चढ़ावे। जब गर्म हो जाय तब माजूफल से आधा कसीस और कसीस का सोलहवाँ हिस्सा कत्था डाल दे। जब देखे कि रंग खूब काला हो गया तब उतार के छान ले और आठ दस दिन उसी तरह रहने दे। फिर दूसरी दफे छान के नाम मात्र का नीला रंग और पीला रंग मिला दे। पीला रंग नीले रंग से आधा मिलना चाहिये।

(३) लाल रोशनाई—ढाँक अथवा पीपल की लाख को जरा सा लोध्र और बेर की पत्ती डालकर चार गुना जल मे पकावे। चौथाई जल रह जाय ६ मासे फिटकरी डाल दे।

फुटकर

(१) ताँबे व पीतल के बासन साफ करने की विधि—थोड़ा सा सोडे का तिजाब किसी वस्तु से बर्तन पर मलकर पानी से धो डाले, पर तिजाब हाथ में न लगने पावे, नहीं तो घाव हो जायगा ।

(२) ताँबे के वर्तन पर कलई करना—जिस वर्तन पर कलई करनी हो उसे पक्की ईंट के रवादार चूर्ण से और इमली या आम की खटाई से खूब माँजे ताकि जरा भी मैल न रहे और वर्तन चमकने लगे । फिर उसे अग्नि पर रख खूब गर्म करे (ऐसा गर्म करे कि उसमें राँगा डालने से गल जाय और फैलाने से फैल जाय)। फिर उस गर्म वर्तन में राँगा डालकर और उसमे पिसा हुआ नौसादर डालकर जहाँ तक कलई करनी चाहे, कपड़े से खूब रगड़ दे, पीछे उतार ले ।

(३) नथ वा बाली के मोती उजालना—मोतियों को चावलों के पानी में दो चार घन्टे पड़े रहने दे । पीछे उन्हीं चावलों से मोतियो को धो डाले, साफ उज्वल हो जावेंगे ।

(४) पुटीन बनाना—आलमारी, बक्स, किवाड़ तथा चूते हुए छिद्र युक्त वर्तन आदि के लिये पुटीन तैयार की जाती है । विधि यह है कि थोड़ा सा तीसी का तेल अग्नि पर खूब पका ले, बाद उसे अग्नि पर से उतार शीतल कर ले, फिर उसमें अन्दाज माफिक लिखने की खरी (राइटिंग क्ले) कूटकर मिला दे । फिर एक

काष्ट पर रखकर एक लोहे की हथौड़ी से खूब पीटे। पीटते पीटते अति कोमल हो जाय, तब काम में लावे।

(५) अद्भुत-पदार्थ—खाने का चूना बुझा हुआ और नौसादर दोनों सम भाग ले एकत्रकर किसी काग़दार शीशी में बन्द करले। यदि कोई आदमी किसी कारण से बेहोश हो गया हो या शीत से दांत बैठ गये हो, या जिस स्त्री को भूत-प्रेत और चुड़ैल लगी हो और बड़े बड़े झाड़ फूँक वालो से न कबूलती हो तो इसके सुँघा देने से फौरन लाभ होगा, चुड़ैल की चढ़ाई जिस स्त्री पर हुई है वह फौरन तोबा करने लगेगी और कहेगी मैं फलनिया हूँ, अब जाती हूँ, बस भूत-प्रेत सब भाग जायेंगे।

(६) सुगन्धित तैल—यों तो सुगन्धित तैल बनाने के कितने ही तरीके हैं। परन्तु सबसे सहज और सुलभ तरीका यह है कि शुद्ध नारियल या तिल के तैल में लेमोन ओयल, लवेन्डर ओयल और किञ्चित मात्र नीरौली डाल देने से तैल खूब सुगन्धित हो जाता है। ये तीनों चीजें पैटेन्ट बनी हुई तैल इत्र वालो के यहाँ मिलेगी। आवश्यकतानुसार कम भी मँगाई जा सकती है। कितने जेसमीन और रोज आयल डालकर भी सुगन्धित तैल बनाते हैं।

संगीत-विद्या
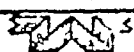
आज स्त्रियोंमें सङ्गीतविद्या प्रायः लोपसी हो गयी है, परन्तु अब भी किसी किसी प्रान्तमें और किसी किसी जाति में इसका खासा प्रचार है। जिनप्रान्तों में और जिन जातियों में इसविद्या प्रचार स्त्रियोंमें नहीं, वहाँ की स्त्रियाँ इसविद्याको घृणाकी दृष्टिसे

देखती हैं। वे समझती हैं कि यह विद्यातो वेश्याओंके लिये है। अगर किसी बहनने साहसकर कुछ गाने का तथा बजाने का अभ्यास करना आरम्भ किया तो अन्य बहनें यह कहने लगेंगी कि देखो वेश्याकी तरह गाती है। अह! कैसा वीभत्स विचार है? पवित्रगुणकी कैसी अवहेलना है?

यदि ध्यानपूर्वक विचार कियाजाय तो वास्तविक आनन्द सङ्गीत-लहरी में ही मिलेगा। कौवों की तरह कांव कांव कर गानेसे क्या लाभ? इससे तो मूक होकर बैठ रहना ही अच्छा है। परन्तु ऐसा नही होता। जहाँ कहीं दो चार बहनें बैठीं कि इसप्रकार गायन करती हैं कि न तो उस गायन में कोई सुरही होता है और न कोई ताल; न कहीं सिरका पता है और न कहीं पैरका। गायन भी प्रायः भद्दे और नीरस होते हैं।

अगर सच पूछाजाय तो संगीतविद्या का प्रथम आरम्भ माता सरस्वती की वीणा विनिन्दित कण्ठ-ध्वनि से ही हुआ है। वीणासे ही सारे गायन वाद्योंका अविष्कार हुआ है। फिर जिसविद्या की एक स्त्री ही जन्मदाता हो, उसविद्या की स्त्रियोंमे ऐसी अवहेलना क्यों? यह तो आजकल की देवियोंका केवल अन्धविचार ही समझा जायगा।

प्राचीन देवियाँ इसविद्या मे खासी निपुण हुआ करती थीं। विराटकी पुत्री उत्तरा ने स्त्रीवेशधारी अर्जुन से नृत्य और संगीत विद्या सीखी थी, इसबात को प्रायः सभी जानते हैं। मीराबाई के भजन आज भी घरघर मेंगाये जाते हैं। बादशाह अकबर के दर्बार का नामी गवैया तानसेन, दीपकराग का जलाहुआ, जन फद्दशीकुस

में पड़ा छटपटा रहाथा, तब महाराष्ट्र प्रान्त की दो स्त्रियों ने मलार राग गाकर उसे चंगा किया था। तानसेन उनके पाद-पद्मोंपर लोटगया था। उन्हीं दोनों रमणियों की स्मृति में तानसेन ने एक राग "तराना ईमन" गढ़ा था।

मैं तो यहाँ तक जोरदेकर कहता हूँ कि जिसघर में कोई देवी कोकिलकण्ठध्वनिसे मधुर सङ्गीत गाकर ईश्वरकी प्रार्थना करती है, वहाँ लक्ष्मीका सदैव बास रहता है और वह घर तथा वह परिवार धन्य है।

यह अद्वितीय सङ्गीत आनन्द आजभी यातो बंगालियो के यहाँ मिलेगा या महाराष्ट्र प्रान्तियों के यहाँ, जहाँ बचपन से ही देवियों को इस विद्याका अभ्यास कराया जाता है। आजकल तो कितनीही कन्या पाठशालाओं में संगीतविद्या की शिक्षा भी आरम्भ करदी गयी है । यदि हमारी बहनें इसओर कुछ भी ध्यान देंगी तो वे संगीतविद्या में मूर्ख न रहेंगीं और फिर कैसाही गायन क्यों न हो हमारी बहनें उसे ताल और सुरके साथ गालेंगी और उस स्वर लहरी से हमारा प्रकाशहीन घर फिर एकबार जगमगा उठेगा ।

हारमोनियम बोध—(१) पहले पहल सीखने के लिये हैण्ड हारमोनियम ही ठीक है। यह बाजा एकहाथ से बजाया जाता है। बाएँ हाथसे धौकनी दबाई जाती है और दाहिने हाथसे बजाते हैं। यह दो प्रकारका होता है, एक सिंगलरीड और दूसरा डबलरीड। सिंगल हारमोनियम से इकहरी आवाज तथा डबल से दुगनी आवाज निकलती है। यह बाजा सुन्दर होता है और इसकी आवाज मधुर

होती है। इनबाजों का मूल्य कमसे कम बीसरुपये अधिकसे अधिक ढाई-तीन सौ रुपया होता है। कमदाम का बाजा खरीदने से अधिक दिन नहीं टिकता । डब्बल रीडका ही बाजा ठीक होता है, क्योंकि इसमें गाने में कठिनाई नहीं पड़ती।

(२) बाजेको सन्दूकसे निकालकर अपने सामने रखना चाहिये और चाभियोंको जो ठीक बाजेके बाहर सामने की तरफ लगीरहती हैं अपनी तरफ खींचना चाहिये। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि वह चाभियाँ जोरसे न खींचीजाय, किन्तु धीरेसे अपनी तरफ खींचना चाहिये और जब अपने आप रुकजावे तब उसको वैसेही छोड़देना चाहिये।

(३) ऊपर लिखे अनुसार जब चाभियों को खोलचुके तब धौंकनी जिसके द्वारा हवा बाजेके अन्दर पहुँचाई जाती है ऊपर लगे हुए कीलसे अलगकर दे जिसमे वह अटकी रहती है।

(४) इसके पश्चात् दाहिना हाथ पर्दोंपर चलाने के लिये तैयार करलेना चाहिये पर उँगली पर्देपर रखकर फिर बायेंहाथ से धौंकनी चलानी चाहिये।

(५) सबसे पहिले प्रथम सप्तक के प्रथम सफेद पर्देपर से वह पीतल की कमानी (स्प्रिंग) हटावें जो इस पर्देको दबाये रहती है। अब वहपर्दा बिना उँगली रक्खे केवल धौंकनी चलानेसे ही आवाज देने लगेगा। ऐसा करने से कदाचित् भूलकर पर्देपर उँगली न रख-कर धौंकनी धौंकदी जाय भी तो बाजा बिगड़ने का भय नहीं रहता। क्योंकि पर्दा खुला है और भीतरकी हवा सहजमें ऊपर आसकती है।

(६) धौंकनी सदैव धीरे धीरे और एक चाल से चलानी उत्तम है।

(७) पहले पर्दों पर उँगुलियाँ धीरे धीरे चलानी चाहिये, फिर बाद में तेज़ चाल से।

(८) एक पर्दे पर एक ही उँगुली रखनी चाहिये, दो नहीं। एकाद पर्दे का अन्तरा देना भी उत्तम है।

(९) एक के बाद दूसरी उँगुली चलानी चाहिये और पर्दे पर उँगुलियों का टप्पा नहीं देना चाहिये। इससे बाजे की बोल शीघ्र नष्ट होने का भय है।

(१०) हारमोनियम बजाते समय आगे की ओर झुकना ठीक नहीं, सीधे बैठकर बाजा बजाना चाहिये।

(११) हारमोनियम बजाने से पहले बाजेको एक सफेद कपड़े से साफकर लेना चाहिये उसके बाद अपनी उँगुलियों को भी साफ करना जरूरी है ताकि पसीना या मैल पर्दे में न लगे।

(१२) बाजा सीखने के लिये उँगुलियो का तैयार करना आवश्यक है। इसलिये सीखनेवाली को पहले ही से उँगुलियो को दुरुस्त करने का परिश्रम करते रहना उचित है।

(१३) जब बाजा बन्द करने की इच्छा हो तो, बजाते हुए एकदम धौंकनी को हाथसे छोड़ देनी चाहिये और पर्दों पर पाँचों उँगुली रख देनी चाहिये। ऐसा करने से भीतर हवा नहीं रहेगी और बाजे में कोई खराबी उत्पन्न नहीं होगी।

(१४) जब धौंकनी बन्द हो जाय उस समय जितनी चाभियाँ

खुली रहैं (जो आगे की तरफ निकली हुई रहती हैं) उनको पीछे की ओर सरका देनी चाहिये । मगर उसपर बल आजमाने की जरूरत नहीं । यह काम बड़े आहिस्ते से करना चाहिये ।

हारमोनियम के पर्दे पर किसप्रकार से उँगुली चलानी चाहिये ।

प्रथमतः सीखने वाली को अपनी उँगुलियाँ क्रम से चलाने का अभ्यास करना चाहिये । जब पूर्ण रीति से अभ्यास हो जाय तब जिस प्रकार से सुभीता हो वह उँगुलियो को पर्दे पर रख सकती है । इसका पूरा २ वर्णन चित्र सहित नीचे दिया जाता है । सीखने वाली बहन इसे समझ कर अभ्यास आरम्भ कर दे ।

(चित्र नं० १)
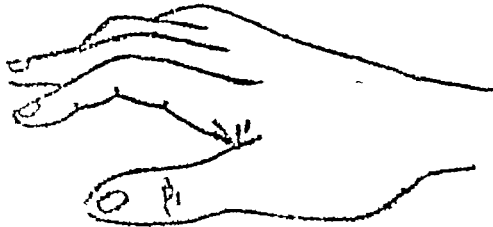
(चित्र नं० २)

प्रथम सप्तक

(सा)—नम्बर १ पर अँगूठा

(रे)—नम्बर २ पर तर्जनी अर्थात् अँगूठे के बादकी पहली उँगली।

(ग)—नम्बर ३ पर मध्यमा अर्थात् बीचकी उँगली।

(म)—नम्बर ४ पर कनिष्ठा अर्थात् बीचकी उँगली के बादवाली।

इसी प्रकार नम्बर ५ पर अँगूठा, नम्बर ६ पर तर्जनी, नम्बर ७ पर मध्यमा, नम्बर ८ पर कनिष्ठा।

उंगलियों का वृतान्त

सीखनेवाली नीचे लिखेहुए नियमों को अच्छीतरह समझले ताकि हारमोनियम बजाते समय पर्देपर उँगली रखने में भूल न हो।

(१) अँगूठा सदैव सा और प पर रखना चाहिये जैसा चित्र नं० २ में बताया गया है।

(२) अँगूठा कदापि काले पर्देपर नहीं रखना चाहिये।

(३) यदि सीखनेवाली शुरूसे ही चित्र नं० २ में बतायी रीति के अनुसार अभ्यास करे तो बहुत जल्द उसकी उँगुलियाँ पक जाँयँगी और बाजा खोलते ही फुर्ती के साथ पर्दों पर चलने लगेंगी अन्यथा उँगलियों का पर्देपर चलना कठिन है।

(४) काले पर्दे पर अँगूठे को छोड़कर चित्र नं० २ में बताई रीति के अनुसार उँगुलियाँ रखनी चाहिये।

---

* नोट—उपरोक्त चित्रमें यह समझा दिया गया है कि कौनसी उँगली किस पर्दे पर रखनी चाहिये।

(५) कभी २ सीखनेवाली को यह मुश्किल हो जाता है कि जब वह धौंकनी चलाती है तब उसकी उँगुलियाँ पर्दे पर नहीं चलती और जब उँगुली चलने लगती है तब धोकनी रुकजाती है। सीखने वाली इसबात के लिये न घबरावे और हिम्मत हारकर न बैठे किन्तु प्रयत्न करे। घण्टे दो घण्टे परिश्रम करनेसे यह कष्ट दूर होजायगा और दोनो हाथ एकही समय चलने लगेंगे।
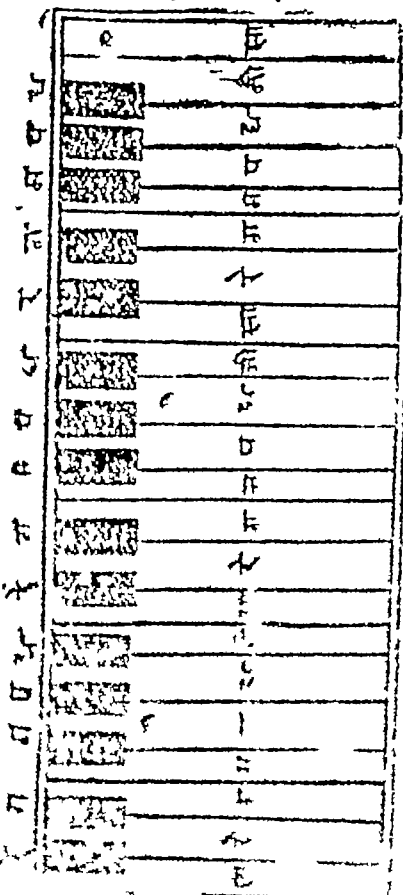
चित्र नं० ३ (स्वर का पर्दा)

नं० १ नं० २ नं० ३

(१) बाजेमें प्रथम सप्तक के सा को स्वरमाना परन्तु यह कोई खासबात नहीं है कि अमुक पर्देको ही स्वर मानकर बजाया जाय। यहाँ केवल सीखनेवाली के सुभीतेके लिये सा को स्वर मानागया है। गानेवाली अपने रुचिके अनुसार स्वर स्थिर करले।

(२) हारमोनियम में तीन सप्तक होते हैं। इसमें से जहाँ नं० १ है मान्द्रसप्तक (प्रथम सप्तक) जहाँ नं० २ मध्यम सप्तक और जहाँ नं० ३ है तार सप्तक (तीसरा सप्तक) कहते हैं।

(३) हारमोनियम में २२ सफेद और १५ काले पर्दे होते हैं। इनमें से हरएक सप्तक १२, १२ पर्दोंमें विभाजित हैं। ७ सफेद और ५ काले।

(४) सा, रे, ग, म, प, ध, नी—यह सफेदपर्दे तीव्र हैं।

(५) रे, ग, म, प, ध—यह कालेपर्दे कोमल हैं।

[स्वर]

(१) प्रथम सप्तक की आवाज मोटी होती है। इस सप्तक के स्वरोसे आवाज़ मिलाने के लिये अपनी अतड़ियोंपर जोर डालना पड़ता है।

(२) मध्यम सप्तक की आवाज़ पहले सप्तकसे दूनी होती है। इसके स्वरो का साथ देनेमें कलेजेपर ज़ोर पड़ता है।

(३) तार सप्तक (तीसरा सप्तक) की आवाज बारीक और ऊँची होती है। इसके स्वरोंमें गानेसे नेत्रोंपर जोर पड़ता है और कभी २ आँखोंसे पानीभी निकलने लगता है।

[आरोह]

एक तरफ से चढ़ते हुए को आरोह कहते हैं, जैसे—सा, रे, ग, म, प, ध, नी, सा।

(अवरोह)

दूसरी तरफसे उतरते हुएको अवरोह कहते हैं, जैसे—सा, नी, ध, प, म, ग, रे, सा।

(आरोह और अवरोह नं० १)

अवनीचे सरगम लिखेजाते हैं। इन्हे ध्यानपूर्वक बजाना चाहिये।

आरोह—सा रे ग म प ध नी सा।

अवरोह—सा नी ध प म ग रे सा।

आरोह—सा सा, रे रे, ग ग, म म, प प, ध ध, नी नी, सा सा

अवरोह—सा सा, नी नी, ध ध, प प, म म, ग ग, रे रे, सा सा,

आरोह—सा रे ग, रे ग म, ग म प, म प ध, प ध नी, ध नी सा,

अवरोह—सा नी ध, नी ध प, ध प म, प म ग, म ग रे, ग रे सा,

आरोह—सा रे ग ग, रे ग म म, ग म प प, म प ध ध, प ध-नी नी, ध नी सा सा,।

अवरोह—सा सा नी ध, नी नी ध प, ध ध प म, प प म ग, म म ग रे, ग ग रे सा।

आरोह—सा रे ग म, रे ग म प, ग म प ध, म प ध नी, प ध-नी सा।

अवरोह—सा नी ध प, नी ध प म, ध प म ग, प म ग रे, म ग रे सा।

(आरोह और अवरोह नं० २ (सीधा और उलटा)

नीचे दियेहुए सरगम को एकदम टाहमें बजाना चाहिये और निशान दिये हुए स्वरोंको उसीके माफिक बजावें, जैसे—सा × २ इसके मानेहुआ कि दो मर्तबा सा बजाओगे। इसीप्रकार ३ हो तो तीन मर्तबा और ४ हो तो ४ मर्तबा इत्यादि।

(१) सा—रे—ग—म—प—ध—नी—सा।
सा—नी—ध—प—म—ग—रे—सा।
(२) सा, रे×२, ग×२, म×२, प×२, ध×२, नी×२, सा×२।
सा, नी×२, ध×२, प×२, म×२, ग×२, रे×२, सा×२
(३) सा—रे×३, ग×३, म×३, प×३, ध×३, नी×३, सा+३
सा—नी×३, ध×३, प×३, म+३, ग+३, रे+३, सा+३,
(४) सा—रे×४–ग×४—प×४—ध+४—नी+४–सा+४,
सा–नी+४–ध+४–प+४–म+४–ग+४–रे+४–सा+४
(५) सा—रे—ग+२—रे—ग—म+२—ग—म—प+२
म—प—ध+२—प—ध—नी+२–ध—नी—सा+२।
सा—नी—ध+२—नी—ध—प+२—ध—म+२–
प—म—ग+२—म—ग—रे+२—ग—रे–सा+२।
(६) सा—रे—ग+३—रे—ग—म+३—ग—म–प+३–
म—प—ध+३—प—ध—नी+३—ध–नी–सा+३।।
सा—नी—ध+३—नी—ध—प+३—ध–प–म+३–
म—ग—रे+३—ग—रे—सा+३।

(आरोह और अवरोह दोनों एक में, नं० ३)

अब आगे आरोह और अवरोह [उलटे पल्टे और सीधे पल्टे] दोनों लिखेजाते हैं। सीखनेवाली को चाहिये कि उनको फुर्ती के साथ बाजेपर बजावे और साथही साथ मुँहसे भी कहतीजाय। ऐसा करने से सरगम कण्ठाग्र हो जायगा और अभ्यास भी बनजायगा।

(१) सा रे ग म प ध नी सा, सा नी ध प म ग रे सा।

(२) सा सा—रे रे–ग ग–म म—प प–ध ध–नी नी–सा सा
सा सा—नी नी–ध ध–प प–म म–ग ग–रे रे–सा सा ।

(३) सा रे ग–रे ग म–ग म प–म प ध–प ध नी–ध नी सा
सा नी ध–नी ध प–ध प म–प म ग–म ग रे–ग रे सा ।

(४) सा रे ग ग—रे ग म म—ग म प प—म प ध ध—प ध
नि नि—ध नि सा सा ।

(५) सा रे गम–रे ग म प–ग म प ध–म प ध नी–प ध नी सा
सा नी ध प–नी ध प म–ध प म ग–प म गरे–म गरे सा ।

(६) सा रे ग म+२—रे ग म प+२—ग म प ध+२—म प
ध नी+२—प ध नी सा+२ ।

(प्रथम सप्तक)

ग म प ध नी ध प म प ग म प ।
म ग रे सा नी सा ग रे म ग रे ।
सा ग रे सा सा नी धा ।
सा रे रे ग प म ध प म ।

(प्रथम सप्तक)

ग ग प प ध नि नि सा ध नि सा रे ग रे सा ।
ग रे सा सा नि सा ध नि प ध म प ॥
सा ग म प ध ध प म प ग रे सा ।
ग म ग म प ग म ग म रे ॥
सा ग रे ग म प नी ध ग म रे सा ।

प प म ग रे म ग रे प ध नी।
नी ध प म सा ग म ग रे सा।

अभ्यास के नियम

(१) सब सरगमो का अच्छी तरहसे अभ्यास करले और जब उँगुलियाँ भलीप्रकार तैयार होजायं तब गतोंको बजावे। यदि भली-प्रकार अभ्यास होजायगा तो रागोंको बजाने में कठिनाई नहीं पड़ेगी।

(२) हारमोनियम बजाने में केवल उँगुलियों को साधना कठिन है, परन्तु परिश्रम करने से यह भी सफल हो जायगा। जब उँगुलियाँ पर्दों पर फुर्ती के साथ चल निकलेंगी, फिर क्या है, बोल निकालने मे जरा भी विलम्ब न होगा।

(३) सीखने वाली को चाहिये कि बजाने के साथ ही साथ गले से गाये भी। यह काम प्रातः काल कहीं अच्छा होगा।

(४) जब सरगम हाथ से ठीक निकलने लगे तब बोल निकालने का प्रयत्न करे।

(५) बजाने के साथ गाने से एक लाभ यह होगा कि स्वर का ज्ञान हो जायगा, कि कौन स्वर कहाँ से निकलता है।

राग रागनियों का वर्णन

सब रागिनियों का इस छोटे से लेख में वर्णन करना असम्भव है। इसलिये संक्षेप में कुछ राग रागिनियो का वर्णन यहाँ पर कर दिया जाता है।

राग ६ हैं। इनकी उत्पत्ति महादेव और पार्वती से हुई है।

पाँच राग शिवजी के मुख से और एक राग पार्वती के मुख से उत्पन्न हुआ है। इन रागो के नाम ये हैं,—(१) भैरव राग, (२) मालकोश राग, (३) हिंडोल राग, (४) दीपक राग, (५) श्री राग, (६) मेघ राग ।

१—भैरव राग

भैरव राग मे सप्त स्वर लगते हैं। स ग प नी शुद्ध (तीव्र) रे म ध कोमल स्वर हैं। इसको ग्रीष्म तथा रात्रि के ३ बजे से प्रातः काल सूर्योदय तक गाते हैं। भैरवी, मधुमाध, वैराटी, सिन्धवी बंगला इसकी रागिनियाँ हैं।

इस राग को सुनने से हृदय प्रसन्न होता है और आलस्य दूर होकर शरीर फुर्तीला बनता है। यदि कोई स्त्री या पुरुष प्रतिदिन नियमित समय पर गाये तो कभी बीमार नहीं हो सकता।

सरगम—सा रे ग म प ध नी।

स्वर—रे मा धा कोमल पर्दे हैं और

सा ग प नी शुद्ध (तीव्र) पर्दे हैं।

नक्शा हारमोनियम

चित्र नं० ४

प प म ग रे म ग रे प ध नी ।
नी ध प म सा ग म ग रे सा ।

अभ्यास के नियम

(१) सब सरगमो का अच्छी तरहसे अभ्यास करले और जब उँगुलियाँ भलीप्रकार तैयार होजायं तब गतोको बजावे । यदि भली-प्रकार अभ्यास होजायगा तो रागोंको बजाने में कठिनाई नही पड़ेगी।

(२) हारमोनियम बजाने में केवल उँगुलियो को साधना कठिन है, परन्तु परिश्रम करने से यह भी सफल हो जायगा। जब उँगुलियाँ पर्दों पर फुर्ती के साथ चल निकलेंगी, फिर क्या है, बोल निकालने में जरा भी विलम्ब न होगा ।

(३) सीखने वाली को चाहिये कि बजाने के साथ ही साथ गले से गाये भी । यह काम प्रातः काल कहीं अच्छा होगा ।

(४) जब सरगम हाथ से ठीक निकलने लगे तब बोल निकालने का प्रयत्न करे ।

(५) बजाने के साथ गाने से एक लाभ यह होगा कि स्वर का ज्ञान हो जायगा, कि कौन स्वर कहाँ से निकलता है ।

राग रागनियों का वर्णन

सब रागिनियों का इस छोटे से लेख में वर्णन करना असम्भव है । इसलिये संक्षेप में कुछ राग रागिनियो का वर्णन यहाँ पर कर दिया जाता है ।

राग ६ हैं । इनकी उत्पत्ति महादेव और पार्वती से हुई है ।

पाँच राग शिवजी के मुख से और एक राग पार्वती के मुख से उत्पन्न हुआ है। इन रागों के नाम ये हैं,—(१) भैरव राग, (२) मालकोश राग, (३) हिंडोल राग, (४) दीपक राग, (५) श्री राग, (६) मेघ राग।

१—भैरव राग

भैरव राग में सप्त स्वर लगते हैं। स ग प नी शुद्ध (तीव्र) रे म ध कोमल स्वर हैं। इसको ग्रीष्म तथा रात्रि के ३ बजे से प्रातः काल सूर्योदय तक गाते हैं। भैरवी, मधुमाध, वैराटी, सिन्धवी बंगला इसकी रागिनियाँ हैं।

इस राग को सुनने से हृदय प्रसन्न होता है और आलस्य दूर होकर शरीर फुर्तीला बनता है। यदि कोई स्त्री या पुरुष प्रतिदिन नियमित समय पर गाये तो कभी बीमार नहीं हो सकता।

सरगम—सा रे ग म प ध नी।

स्वर—रे मा धा कोमल पर्दे हैं और

सा ग प नी शुद्ध (तीव्र) पर्दे हैं।

नक्शा हारमोनिम

चित्र नं० ४

२—मालकोश राग

इस राग को सुनने से मनुष्य मस्त हो जाता है और नशे की भांति झूमने लगता है। यह शरद ऋतु तथा दो तीन बजे रात को गाया जाता है। टोडी, गंकले, खंबावती, कलकभ, गौरी इसकी रागिनियाँ हैं।

सरगम—सा गा मा धा नी।

स्वर—गा धा नी कोमल पर्दे हैं।

सा मा शुद्ध (तिव्र) पर्दे हैं।

नक्शा हारमोनिम

चित्र नं० ५
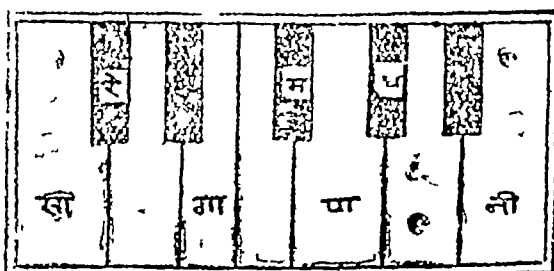
३—हिंडोल राग

समय—सायंकाल। इस राग को सुनने से मनुष्य का हृदय प्रसन्न और मस्त हो जाता है।

सरगम—सा रे गा मा धा नी

स्वर—रे मा कोमल पर्दे हैं

सा ग म ध नी शुद्ध (तिव्र) पर्दे हैं।

४—दीपक राग

समय—दिन का दो प्रहर।

सरगम—सा ग ग म प ध ध नी।

स्वर—ग म ध कोमल पर्दे हैं।

सा ग म प ध नी शुद्ध (तीव्र) पर्दे हैं।

५ श्री राग

समय—दिन के दो बजे से चार बजे तक।

सरगम—सा रे गा म प ध नी।

स्वर—रे म ध कोमल पर्दे हैं।

सा ग म प नी शुद्ध (तीव्र) पर्दे हैं।

६ मेघराग

समय—दिन का अन्त।

सरगम—सा रे म प ध नी।

स्वर—सा रे म प ध नी सब शुद्ध (तीव्र) पर्दे हैं।

१ भैरवी रागिनी।

समय—प्रातः काल।

सरगम—सा रे ग म प ध नी।

स्वर—रे ग म ध नी कोमल पर्दे हैं।

सा म प शुद्ध (तीव्र) पर्दे हैं।

फुटकर औषधियाँ।

[अनुभूतयोग चूर्ण-पाचक]

(१) हाजमाके लिये—अर्कपुष्पकी लौंग, पीपल, लाहौरी-

नमक सब सामान बराबर २ लेकर चने प्रमाण गोली बनाले। एक गोली भोजनोपरान्त खानेसे हाजमा बहुत ठीक रहता है।

(२) क्षुधासागर चूर्ण—सनायकी पत्ती ३ तोले, सोंठि १ तोला, जंगी हरड़ १ तोला, जवाखार १ तोला, इनसबको कूट कपड़छान कर सायंकाल और प्रातःकाल गर्म पानीके साथ खावे। दो दस्त साफ होंगे, भूख बढ़ेगी और कब्जियत दूर होगी।

(३) बड़वानली गोली—जावित्रीका खार दो मासे, दाल-चीनी २ मासे, खार कबाबचीनी २ मासे, जवाखार २ मासे, छोटी इलायचीके दाने १६ मासे, सब दवा लेकर १६ प्रहर कागजी निम्बूके रसमें खरल करे। इसके पश्चात् एकरत्ती प्रमाण गोली बनाले। एक गोली खानेके बाद खावे। भूख खूब लगेगी, वायुगोला दूर होगा।

(४) क्षुधासागर गोली—सोंठ १ तोला, कालीमिर्च ६ मासे, अकरकरा ६ मासे, पीपल १ तोला, गन्धकआमल सार (शुद्ध किया-हुआ) ६ मासे, निम्बूके रसमें जंगलीबेर प्रमाण गोली बनावे। एक गोली रोज खानेसे निश्चय भूख बढ़ेगी।

अपाचन-योग।

मिश्रीका शर्बत बनाकर, दो निम्बू निचोड़कर पीवे, शर्बत मिट्टी या काँचके बर्तनमें बनाना चाहिये। गर्मीके दिनोंमें यह शर्बत बहुत लाभदायक है।

अतिसार-योग।

(१) दस्त बन्द करनेकी दवाई—इमली बीज १ तोला, खाँड़ १ तोला, बीजको बारीक पीसकर खाँड़ मिलाकर घृतमें जामुनके

प्रमाण गोलियाँ बनाले। दिनमें दो गोली खानेसे दस्त बन्द होगा।

(२) अफीमचीके दस्त बन्दकरनेकी दवाई—लाजवन्ती पत्र ६ मासे एकछँटाक छाछमें पिसकर मिलावे। तीन चारवेर पिलाने से आराम होगा।

(३) बालकोंके दस्त बन्द करनेकी दवाई—छोहारा, अनारकी-कली, मुर्दाशंख, सुपारी, समभाग पीसकर बालकको खिलावे, दस्त वन्दहोगें।

(४) आमातिसार व रक्तातिसार—सोठ, सौंफ, जंगीहरड़ इन तीनो पदार्थों को समभाग ले एकभाग भुनडाले और दूसरा कच्चा रहने दे। कूट कपड़छानकर उतनीही कच्चीखाँड मिला आधातोला के अन्दाज मात्रा बना शीतलजलके साथ भोजनके आदिमें या अन्तमें खालेतो आँव गिरना या आँवसे खूनका गिरना अवश्य बन्द हो जायगा।

(५) पुराना रक्तातिसार—जामुन, आम, आँवला इनतीनो वृक्षोंकी पत्तियोंका रस२ तोला ४ मासे शहदमें मिलाकर दोनो समय पीनेसे बहुत दिनोंका आँवलोहूका पड़ना शीघ्र आराम होगा।

खाँसी और स्वांस योग।

(१) सवप्रकारकी खाँसी—वनवेर की गिरी १ मासा पीसकर १ तोला मधुके संग चाटनेसे सवप्रकारकी खांसी दूर होती है।

(२) सवप्रकारकी खांसी—मुलेठी काकड़ासिंगी, खसखस प्रत्येक दो दो तोले, श्वेत इलायची दाना, वदामका गोंद प्रत्येक एक

एक तोला, अफीम ४ रत्ती, अदरकरसमें दोदिन खरल करके चनेप्रमाण गोलियाँ बनाले। खांसी आने पर चूसे, निश्चय लाभ होगा।

(३) श्वास खाँसी—मुलेठी १ तोला, फूल मदार २ तोले, कालीमिर्च १ तोला, शुद्धअफीम ६ मासे, शुद्धगन्धक १ तोला, सैंधा नमक १ तोला, यहसब कूट कपड़छान करके अदीके रस में चनेप्रमाण गोली बनाले। सांझ सबेरे एक एक गोली खावे तो श्वाँस, खाँसी और कफ तीनों दूर होगा, इसमें संशय नहीं।

(४) बालकोंकी खाँसीके लिये—अतीस, नागरमोथा, मुलेठी, इन तीनोको बराबर बराबर कूटकर खूब महीन चूर्णकरले। मात्रा आधरत्तीसे ५ रत्तीतक है। बालको की अवस्था माफिक मधुके साथ दिनमें चार बेर चटावे। यदि बालक न चाटे तो दवाई शहदमें मिला माताके दूध में घोलकर पिलादे। निश्चय लाभहोगा।

नजला जूकाम योग।

(१) गाय के दूध में अफीम और जायफल घिसकर नाक और माथेपर लगाने से जूकाम आराम होगा।

(२) केसर को घृतमें घिसकर नास देने से जूकाम और अधकपारी आराम होता है।

(३) आदी को कुचलकर रस निकाल, दो तोले रस में तीन मासे शहद मिला पीने से नाकका पानी बहना आराम होता है।

(४) गायका दूध गर्म करके उसमें १० कालीमिर्च और मिश्री डालकर रातको सोते समय पीने से जूकाम आराम होता है।

शिरदर्द और अधकपारी योग।

(१) बकरी का मक्खन सिरपर मलने से खुश्की और सर्दी का शिरदर्द आराम होता है।

(२) वच और पीपल को पीसकर उसकी पोटली बना सूँघने से सूर्य्यावर्त और अधकपारी का दर्द मिटता है।

(३) पीपल और सेंधानोन पानी मे घिसकर उसकी दो तीन बूंद नाक में डालने से शिरदर्द आराम होता है।

(४) केवड़े के अर्क में चन्दन घिसकर मिलादो। फिर शीशी में रखकर सूँघने से गर्मीका दर्द दूर होगा।

(५) मूर्दा शंख को स्त्री के दूध में पीसकर सिर में जिस ओर पीड़ा हो उसीओर के कान में भर दो। तुरन्त अर्द्धावभेदक शिरः शूल दूर होगा इसमें संशय नहीं।

आंख पर अनुभूत।

(१) आँख दुखने का लेप—छोटी हर्रें, सैंधा नमक, गेरू और रसवत, इन चारों को समभाग लेकर पानी में महीन पीस थोड़ा गुनगुनाकर सोती समय या जब इच्छा हो पलकों पर लेप करे, स्वास्थ्य प्राप्ती होगी।

(२) शोथ व सूजन पर—विनौला (बंगौला) वीज को गो-मूत्र में पीस कर लेप करे। शोथ व सूजन दूर होगी। बच्चों की आँखें प्रायः लाल लाल होकर फूल जाया करती हैं।

(३) जाला फोला पर—गुलाब की जड़ को या बारहसिंहा

को पुत्रवाली स्त्री के दुग्ध में घिसकर फोले पर लगावे, फोला दूर होगा।

(४) नेत्र दुखना—फिटकरी और अफीम का लेप करने से आराम होता है।

(५) रतौंधी पर—मरी मक्खी १ नग, काली मिर्च १ नग, दोनो को स्त्री के दूध में ताम्र पत्र में खरल करे और सोते समय नेत्रो में लगावे। निश्चय रतौंधी दूर होगी।

(६) नेत्रो की पुरानी लाली—नीम की पत्ती का रस आँख में दिन में दो तीन बेर देने से लाभ होगा।

(७) सर्व रोग—त्रिफले के चूर्ण में घृत और शहद मिला रात के समय चाटने से सर्व नेत्र रोग दूर होते हैं।

(८) दृष्टि बर्द्धक योग—नरमा रूई दो पैसा भर लेकर अर्क दुग्ध में २१ दिन तक रोज भिगोवे। फिर गाय के घृत में जलाकर काजल उपाड़ ले और नेत्रों में लगावे। निश्चय दृष्टि बढ़ेगी।

पंचम भाग

"प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः, सन्तानार्थंच मानवम्।"

(मनु०)

भविष्य-निर्माण

गर्भधारण करने के लिये स्त्रियाँ और गर्भाधान करने के लिये पुरुषोंकी रचना हुई है।

यदि बन्दर के हाथ में नारंगी दे दी जाय तो वह उसे छिलके सहित खा जायगा, परन्तु मनुष्य उसको छीलकर फांके निकाल एक एक करके स्वादके साथ खायगा। यही भेद मनुष्य और पशु में है। तथा मूर्ख और विद्वान में है मूर्ख स्त्री या पुरुष प्रत्येक कार्यको अँधाधुन्ध करते हैं और बुद्धिमान चतुराई के साथ। सभ्यता इसीका नाम

उन्मादिनी की भाँति वह मल्लसिंह के शव से लिपट गई। उनका सर अपनी गोद में लेकर निनिमेष नेत्रों से उसको निहारने लगी।

है कि प्रत्येक कार्य प्राकृतिक नियमानुकूल किया जाय। खाना, पीना, सोना ये छोटी बातें हैं, परन्तु विद्वानों ने इनके भी नियम बना दिये हैं, जिन्हें न करने से बराबर ही रोगी होनेकी सम्भावना रहती है। फिर क्या कारण, गर्भाधान सम्बन्धी महत्व पूर्ण विषयोंपर लोगों का ध्यान नहीं जाता? अतः इसके भी विद्वानों ने कितने ही उचित और ध्येयपूर्ण नियम बनाये हैं, जिनका पालन करना प्रत्येक नर-नारीका प्रमुख कर्त्तव्य है।

गाना सुनकर सबका चित्त प्रसन्न होता है, किन्तु ताल सुर रहित गानाभी कानोको अप्रिय लगता है। बोली गँवारभी बोल सकता है, परन्तु एक पढ़ेलिखे मनुष्यकी बातचीत कैसी मधुर और हृदयग्राही होती है। वस्त्र यदि योंही लपेट लियाजाय तो भी शरीर ढँक जाता है, किन्तु उसको एक सुन्दर ढंग से पहनना या ओढ़ना ही सभ्यता है। अनाव-शनाव से पेट भरलेना सब रोगोंका मूल है, परन्तु वैद्यक नियमानुकूल भोजन करना स्वास्थ्यके लिये हितकर है। इसीप्रकार एक तो यों ही प्रतिदिन विषय कर सृष्टिक्रम चालू करलिया जाय और एक नियमानुकूल गर्भाधान करना तथा गर्भ-धारण करना दूसरी बात है।

इन बातोपर गम्भीर विचारकर प्रत्येक नर-नारी यह निश्चयकर सकता है कि नियमानुकूल गर्भाधान संस्कार करने से कैसी सन्तान होगी और नियमोंकी अवहेलना करने से कैसी? जबसे पुरुष समाज ने इन नियमों की अवहेलना करने के लिये स्त्री समाज को बाध्य कर दिया, तभी से हमारे यहाँ कायर नपुंसक और अपाहिजों की

वृद्धि होने लगी। जब हमारे यहाँ इन नियमोंका पालन होताथा तो हमारी माताएँ नीतिनिपुण, विज्ञानविशारद, तत्वदर्शी, राम, कृष्ण, भीम और अर्जुन जैसे योद्धा तथा दमयन्ती, सुलोचना, सतीसीता, और सावित्री जैसी देवियो को जन्म देती थीं।

हम सब बातों में कितनी ही मीन-मेख निकालते हैं, परन्तु एक अत्यन्त आवश्यक विषयमें कितने अचेत हैं कि बच्चो के मां-बाप तो बनगये परन्तु बसन्त की खबर ही नहीं, समूची रामायण पढ़गये और सीता किसके योग ? क्या इससे ज्यादा आवश्यक और कोई विभाग है ? यदि हम खाना पीना नियम विरुद्ध करें तो उसका दण्ड हमें तत्काल मिलता है, परन्तु जो भूल हम इस विषयमें करेंगे, उसको जन्मभर भोगना पड़ेगा और हमारी सन्तान को भी उससे जन्मभर हानि उठानी पड़ेगी। इसीपर हमारी आयुष्य के सुख दुःख निर्भर हैं और इसीमें भावी सन्तान की सुआशा और सौभाग्य छिपा है। अतः यदि हमने अपनी सन्तानों के प्रति न्याय किया तो निश्चयही सन्तान भी हमारा मान रक्खेगी; अन्यथा यदि हमने उनके प्रति अन्याय किया तो फिर उनसे सुआशा किस बात की ?

"रोपे पेड़ बबूर का, आम कहाँ ते होय।

किसान नियमित ऋतु मे खेत जोतता है, उसमें क्यारियाँ बना कर उत्तम बीज बोता है, फिर सिंचाई और निराई आदि की देख-भाल करता है, तब कुछ काल पश्चात् उसको उत्तम फसल प्राप्त होती है। शोककी बात है कि हम मिट्टी के खेत में तो इतनी छानबीन करें और शरीर रूपी खेतकी सुधभी न लें। कुत्ता वा घोड़ा भी उत्तम

जातिका ढूँढ़कर रक्खें, परन्तु आदर्श सन्तान उत्पत्ति के विषय में स्त्री पुरुष दोनों अचेत रहें।

इन्हीं सब बातोंका ध्यान रखकर बड़ी सावधानी के साथ अपने विवाहित भाई बहन और कुलबन्धुओं की भलाई के लिये कुछ गर्भाधान सम्बन्धी और आवश्यक बाते लिख रहा हूँ। इन विषयों की जानकारी उन बहनों के लिये प्राप्त करनी तो विशेष ही उपयोगी है, जिनका विश्वास यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र और टोने टामनों में रहा करता है। क्योंकि कितनी अशिक्षित स्त्रियाँ, धातृ-शिक्षा, गर्भरक्षा, बालपोषण, स्त्री पुरुष व्यवहार आदि जानकारी से तो अनभिज्ञ हैं और जिनका विश्वास केवल पीर-पैगम्बरों, पाखण्डियो और झाड़ फूँक करने वालों में तथा तीर्थ व्रत में ही है। कितनी बहनें तो ऐसी मिलती हैं जो पुत्र प्राप्तिके लिये कहाँ कहाँ की धूल छान डालती हैं और कितनी तो चौराहोंपर नंग-धड़ंग होकर टोने टामन करनेमें बाज नहीं आतीं तथा यदि बच्चा बीमार पड़े तो या तो डाइनका नाम लें या झाड़ फूँक करवावें या ऐसी उभझड़ औषधि करें जो उस बच्चे से ही हाथ धो लेना पड़े। इनसब भ्रमोंको दूर करने के लिये इन विषयोंकी जानकारी अत्यावश्यक है। विषय खूब सोच विचारकर और अनुसन्धान कर लिख रहा हूँ। संक्षेप में प्रायः सभी विषयोंपर प्रकाश डालनेकी चेष्टाकी है। आशा है, जो बहनें इन विषयों को ध्यान देकर पढ़ेंगी, वे अवश्यमेव कुछ न कुछ लाभ उठावेंगी ही।

रजोदर्शन—प्रत्येक स्त्री के अंग से प्रतिमास जो रक्त निकला करता है उसको रज कहते हैं, यह सन्तानोत्पत्ति की योग्यता का

मुख्य लक्षण है । ठंढे देशोंमें स्त्रियाँ अधिक अवस्थामें रजस्वला होती हैं और गर्म देशोमें इनकी उत्पत्ति का समय लगभग १२ वर्ष से है। भोगवृत्तिवाली लड़कियाँ जल्दी रजस्वला होती हैं, परन्तु जो सीधी, गँवैली और साधारण जीवन बिताती हैं, वे अधिक अवस्था में रजस्वला होती हैं।

रजकी अवधि तीन चार या पाँच दिनकी होती है, इससे अधिक वा न्यून रोग का लक्षण है। प्रत्येक मास में लगभग ५ छँटाक रक्त निकलता है । रक्त जितना कमती निकले उतना ही श्रेष्ठ समझना चाहिये । जो स्त्री निरोग होती है, वह ठीक २७ या २८ दिन में रजस्वला होजाती है । परन्तु कितनी स्त्रियाँ २१ दिन में होजाती हैं, जो विशेषकर कमजोरीका लक्षण है ।

कितनी मूर्ख स्त्रियाँ रज को रुधिर समझती हैं, परन्तु वास्तव में यह रुधिर नहीं है, यद्यपि उसके सदृश रूप रंग में है । इसीसे तो इसको रज कहते हैं । इसका दाग़ जो कपड़े पर लगता है, वह धोने से छुट जाता है । खरगोश के लोहू के रङ्ग का रज अच्छा होता है । जिस रज का रंग फीका वा पीला और थोड़ा वा बहुत हो तो अच्छा नहीं; क्योंकि ऐसी दशामें गर्भ नहीं रहने पाता । जब रज में कुछ विकार होता है, तो महीने महीने उसका रंग बदलता रहता है । कभी काला, कभी लाल और कभी पीलाई लिये होता है जल्दी जल्दी रजस्वला होना या मुद्दत तक बन्द रहना या चलित रहना रोग समझा जाता है; जिसकी चिकित्सा तत्क्षण करनी चाहिये ।

रज समाप्ति—(१) रजोदर्शन जब से आरम्भ होता है, उससे लगभग ३० वर्ष तक होता रहता है। यों भी कहते हैं कि उससे जन्मी हुई पहली सन्तान जब सत्ताइस वर्ष की हो जाती है तो फिर मासिक धर्म नहीं होता। जब रज समाप्त होने को होता है, तब स्त्री कुछ मोटी होने लगती है, मांस में हाड़ छिप जाते हैं, ठोड़ी मोटी होजाती है, मेद, मक्खन सा शरीर में छा जाता है और रज अधिक होता है, मानो गर्भस्राव हो गया है। यह समय स्त्री को कुछ दुखदायक है। इस रज की समाप्ति में बहुत से रोगों के उत्पन्न होने का भय रहता है, इसलिये सावधानी रखनी चाहिये।

(२) गर्भ रहने से भी रज बन्द हो जाता है। समाप्ति में तो ऊपर के बताये हुए लक्षण होते हैं, परन्तु गर्भ में इसके विरुद्ध अर्थात देह पतली होती जाती है, केवल पेट ही बढ़ता जाता है और नाक ठोढ़ी सिकुड़ती जाती है तथा मुख सूखता जाता है।

(३) परन्तु रज का बन्द हो जाना सदैव गर्भ रहने का निश्चय प्रमाण नहीं, बहुधा रोग से भी ऐसा हो जाया करता है और कभी ऐसा होता है कि गर्भ हो और रज चलित रहे, परन्तु कमती-किन्तु ऐसा होना ठीक नहीं। इसकी उचित औषधि करवानी चाहिये। कुछ लड़कियाँ ऐसी भी देखने में आयी है कि जिनको रजोदर्शन् भी नहीं हुआ और गर्भ रह गया और कभी संयोग से किसी किसी बूढी स्त्री को भी रजोदर्शन् हो जाता है। कोई कोई स्त्री ऐसी भी होती है, जिसे जन्मभर न स्त्री-धर्म होता है और न संतान ही होती है। ऐसी स्त्री बांझ वा पुष्पवन्ध्या कहलाती है।

रजवती के लक्षण—रज के दिनों में स्त्री के ये लक्षण रहते हैं,—शरीर का रंग थोड़ा बदला हुआ, प्रसन्न जान पड़े, छाती, कमर, जांघ, पिंडली और हाथ इत्यादि स्थानों का फड़कना। किसी किसी स्त्री को उन दिनों में मस्तक पीड़ा भी होती है।

रज के दिनों में सावधानी—रज के दिनो में तनिक सी बात स्त्री पर बड़ा प्रभाव करती है। जैसे विचार, काम और सुख वा दुःख से स्त्री रहेगी, वैसे ही गुण उसके बाल-बच्चों में आकर पड़ेंगे। इसका लेखा तस्वीर खींचने वाले कांच का सा है, अर्थात् फोटो का सा है। जैसी परछांही उस पर पड़ती है, वैसी ही तस्वीर खिंच जाती है। बालक का स्वभाव, सूरत, देह, अंग—इन्हीं तीन चार दिनों की सावधानी के अनुसार विशेषकर होते हैं। इन दिनों में पुरुष से विशेष कर अलग रहना चाहिये। इन दिनो में कुश की चटाई पर सोवे, मिट्टी के वासन में दाल, मूँग, चावल या खीर खावे यदि हो सके तो खीर का भोजन जरूर करे। रोना, काजल लगाना नाखून काटना, तैल लगाना, दिनमें सोना, ये सब काम छोड़ दे। इधर उधर फिरना, हसी करना, अधिक वायु में बैठना, अधिक शब्द सुनना इन दिनो में निषेध है।

क्योंकि, रोने से बच्चे के नेत्र खराब हो जाते हैं, नख काटने से बच्चे के नख खराब, तैल लगाने से बच्चा कोढ़ी, काजल लगाने से बच्चा काना, दिन मे सोने से बच्चा अधिक सोने वाला और कड़ी वाणी सुनने से बच्चा बहरा पैदा होता है। अधिक हँसने से बच्चेके दांत काले और अधिक परिश्रमसे बच्चा पागल पैदा होता है।

इसीलिये रजस्वला स्त्री को घर का काम करना मना है। आजकल इन नियमों का पालन नहीं होता, न जाने इसी कारण से चेचक व रक्त रोगादि की बढ़ती होती जाती है।

रजस्वला स्त्री का कर्त्तव्य---वह ठण्ढे से बचे, स्नान न करे, जाड़े के दिनो में गर्म कपड़े पहिने, आजकल कि स्त्रियो की नाईं न करे कि एक कम्बल में ही जाड़ा काट दे। मासिकधर्म से शुद्ध होकर स्त्री जिस रूप रङ्ग के पुरुष या स्त्री को देखेगी तादृश रूप पुत्र अथवा कन्या को उत्पन्न करेगी। इसीकारण अपने स्वामी को ही देखना उचित है। हमारें शास्त्रकारों ने कहा भी है:—

पूर्वं पश्ये दृतु स्नाता यादृशं नरमङ्गना।
तादृशं जनयेत् पुत्रं भर्त्तारं दर्शयेदतः॥

यह बात बहुत सत्य और परीक्षित है कि रजस्वला स्त्री अपनी इच्छानुसार गौर या श्याम, सुन्दररूप डौलयुत शोभायमान सन्तान उत्पन्न कर सकती है। यह कोई कल्पना वा रूपक नहीं है, किन्तु पूर्ण सत्य और यथार्थ है कि उत्तम सन्तान उत्पन्न करने का मुख्य हेतु यथोक्त बधू-बर के अचार तथा आहार पर निर्भर है। भाग्य के भरोसे जो घोर अज्ञान-निद्रा में पड़े हैं वे तो अवश्य ही इसे मिथ्या कल्पित कहानियाँ जानेंगे। जो जो विद्यायें मनुष्यकी आत्मा और मनसे सम्बन्ध रखती हैं, यद्यपि उनका अंकुर यह भारतवर्ष है, परन्तु आज यूरोप, अमेरिका आदि अन्य देशो के विद्वान और तत्वदर्शियो के विचार इन्हीं विद्याओं के कारण शिरमौर होरहे हैं। तथा वे भी इसबात को मानते हैं कि सन्तान का स्वरूपवान, बल-

वान, बुद्धिमान और तेजवान होना माता के आधीन है। प्रायः देखाभी गया है कि माता पिता गौराङ्ग औरस्वरूप हैं, परन्तु लड़के बदशक्ल और काले हुए हैं। इसका एकमात्र कारण माताकी असावधानी है क्योंकि पहले लिखाजा चुका है कि इसका लेखा तस्वीर खींचनेवाले कांच कासा है, जैसी परछाँही उसपर पड़ती है, वैसीही तस्वीर खिचजाती है।

इस विषय में एकबात और स्मरण रखनेकी है कि सोनेवाले कमरे में कोई भद्दी वा गन्दी तस्वीर न रखनी चाहिये तथा गर्भाधान के समय वर और वधूका ध्यान किसी कुरूप अथवा व्यभिचारी और दुष्ट प्रकृतिवाले पुरुष या स्त्री की ओर अथवा खराब चित्र की ओर न जाना चाहिये। कारण ? इसका भी भावी सन्तान पर बुरा असर पड़ता देखा गया है और माता पिता के गोराङ्ग और सुरूप होनेपर भी संतान कुरूप होती देखीगयी है। इन्हीं सब कारणों से सन्तान प्रायः काली, बदशक्ल और अवगुणी पैदा होती है।

वीर्य उत्पत्ति और वीर्यपर वैज्ञानिक दृष्टि।

"अन्नाद्रेतः रेतसः पुरुषः।" (तैत्तिरीयोपनिषत्)

अन्न से वीर्य और वीर्य से पुरुष उत्पन्न होता है।

मनुष्य जोकुछ भोजन करता है, उसके पचनेपर रस, रससे रक्त, रक्त से मास, मास से मेद, मेद से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से वीर्य उत्पन्न होता है। इससे यह प्रकट होता है कि सप्तम् धातु,वीर्य है। कुछलोगो का मत है कि ४० कवर अहार से १ विन्दु रक्त और ४० विन्दु रक्त से १ विन्दु वीर्य उत्पन्न होता है। जैसे

दूधमें घी और ईखमें रस गुप्तरूप से रहता है, उसीप्रकार प्राणियों के शरीर भरमें वीर्य रहता है । वीर्य जीवन-शक्ति का बढ़ानेवाला, श्वेत वर्ण,चिकनाई और बल तथा पुष्टिकारक होता है । यह गर्भका बीज, शरीरका साररूप तथा जीवका प्रधान आश्रय होता है । सभी चिकित्सकोंका मत है कि एक मास के पश्चात् अर्थात् ३० दिन के उपरान्त और ४० दिन के पूर्व अन्तिम धातु-वीर्यका बनना सर्व सम्मत है ।

अब यह प्रश्न होता है कि यदि एकमास तक वीर्य नहीं बनता, तो इससे पहले सम्भोग करने से बाहर क्यो निकलता है ? इसका उत्तर यह है कि वीर्यका तो कभी शरीर में अभाव नही रहता । जिसदिन अभाव हो जाय, उसीदिन मनुष्य जी नहीं सकता । प्रत्येक मनुष्य सदा भोजन करता है, जोकुछ आहार कियाजाता है, उससे सदैव रसादि सातो धातुयें क्रम से बनती रहती हैं । इस नियम से वीर्यभी सदा बनता रहता है । तो फिर यहमत मिथ्या है कि ३० दिन के उपरान्त वीर्य बनता है ? नहीं ! उसका अभिप्राय यह है कि निरन्तर बननेवाली धातु परिपक्व नही होती । जो धातु अविराम काम करती रहती है, वह एकमास के पश्चात् भलीभाँति पकजाती है एकमास के पश्चात् मनुष्यका वीर्य सर्वाङ्गों को पुष्ट करता हुआ, उचित अवस्था को पहुँच जाता है ।

इसी कारण एकमास से पहले मैथुनका निषेध है । वह इसलिये कि इससे पहले वीर्य के बाहर निकलने से सब धातुओं में क्षीणता आजाती है । धातुओं मे क्षीणता आजाने से शरीर के सब अवयव

निर्बल होजाते हैं और रोगोंकी उत्पत्ति होती है । हमारे विचार से एकमास के पश्चात वीर्यका पकना अत्यन्त स्वभाविक है । इसका प्रमाण यह है कि स्त्रियोंका ऋतुकाल (रजोदर्शन) भी एकमास के लगभगही आता है और जिसके बाद वह रजोदर्शन की चार या पाँच रात्रियाँ छोड़कर शेष ११ या १२ रात्रियों तक गर्भधारण कर सकती है। यदि यह बात प्राकृतिक न होती तो ऐसा क्यो होता ? इसलिये मानना पड़ेगा कि वीर्य ३० दिनों के उपरान्त ही बनता है ।

चित्र नं० १

पुरुष का वीर्य विन्दु

चित्र नं० २
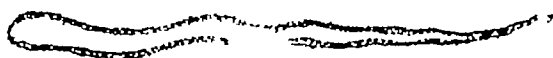
वीर्य-जन्तु

एक विन्दु वीर्य में हजारों जीवाणु होते हैं। इन्हें शुक्रकीट कहते हैं। इनको बड़ासा अण्डाकार सिर और लम्बी सी पूँछ होती है। इसकी $\frac{1}{1000}$ इञ्च से लेकर $\frac{1}{500}$ इञ्च तक और सिर की मोटाई $\frac{1}{5000}$ इञ्च के करीब होती है । पुरुष के वीर्य मे इनकी संख्या सदा एकसमान नहीं रहती। बड़े बड़े वैज्ञानिकों ने यहबात सिद्ध की है कि मानव शरीर में असंख्य जीव हैं। वीर्य रक्त और मल में भी अगणित जीवाणु होते हैं । वीर्यपात से शरीर के जीवाणुओं का नाश होता है,—जिससे मनुष्य शीघ्र मरता है। हमारे यहाँ कहाभी

गया है कि "मरणं विन्दु—पातेन, जीवनं विन्दु धारणात्"—वीर्य से ही जीवन है और उसके अभाव से मृत्यु । इसलिये ब्रह्मचर्य से वीर्यकी रक्षा करनी चाहिये और इसी कारण ऋतुकाल में ही स्त्री-प्रसंग करना ब्रह्मचर्य के बराबर माना गया है—"ऋतुकालाभिगमनं, ब्रह्मचर्यमियोच्यते ।" इसका अभिप्राय यह है कि रजोदर्शन् के पश्चात् स्त्रियाँ गर्भधारण करसकती हैं, अन्य समय में केवल वीर्य नाश होता है। धर्माचार्य मनुकी भी यह आज्ञा है:—"ब्रह्मचार्येव भवति, यत्रतत्राश्रमे वसन्" अर्थात्, ऋतु कालकी वर्जित रात्रियोंको छोड़कर स्त्री सहवास करनेवाला पुरुष किसी आश्रम में हो, ब्रह्मचारी ही है।

स्त्री समागम के पश्चात् गर्भ के लक्षणोंका ज्ञान हो जानेपर, सन्तानोत्पत्ति के तीनवर्ष पश्चात् पुनः गर्भाधान करनेकी शास्त्रआज्ञा देता है। फिर भी अयोग्य पुरुष और अयोग्य स्त्री को तो मैथुनकी आज्ञा ही नहीं है। शास्त्रों में कहे गये नियमों के अनुकूल गृहस्थाश्रम में ब्रह्मचर्य के पालन से मनुष्यकी शारीरिक तथा मानसिक किसी प्रकार की हानि नहीं होती और न कायर, गलित अपाहिज सन्तानों की उत्पत्ति हो होती है, वल्कि शास्त्रानुकूल गर्भाधान करने से वलवान, वुद्धिवान, सद्गुणी, सुन्दर और सुयोग्य सन्तान की उत्पत्ति ही होती है। यह निर्विवाद सत्य है। मैथुनका उद्देश्य केवल एकमात्र सन्तान उत्पन्न करने के लिये है,—"सन्तानार्थेत्र मैथुनम्।"

परन्तु आजकी अवस्था शास्त्रों के विपरीत है । दिन पर दिन ब्रह्मचर्य का लोप होता जारहा है। अपनी स्त्री के साथ प्रतिदिन

व्यभिचार कर वीर्य नाश करना तो एक साधारण बात होगयी है। विलासिता और व्यभिचार के कारण मनुष्यजाति अपने ईश्वर-दत्त दीर्घ जीवन-रूप अधिकारों को खोती जारही है और वह इतनी पतित होगयी है कि अपना आयुर्बल रहतेहुए भी अकाल मृत्यु के मुखमें पड़रही है अतः हम बलपूर्वक इस बातको कहते हैं कि यदि मानव जाति पुनः अपना उत्थान चाहती है, तो उपरोक्त नियमानुकूल गर्भाधान कर वीर्य और आदर्श सन्तानों की उत्पत्ति करे। उस पुत्र के होने से क्या लाभ जो कि न विद्वान है और न धार्मिक ही,—"कऽर्थः पुत्रेण जातेन, यो न विद्वान धार्मिकः।" एक दर्जन भेड़सी सन्तानोकी अपेक्षा तो सिंह ऐसा एक ही सुपूत श्रेष्ठ है। सिंहनीको ही देखिये, वह एकही सिंह पैदाकर निर्भय होकर सोती है परन्तु दस दस बारह बारह गीदड़ों को जन्म देनेपर भी उनकी माताको बराबर भय बना रहता है।

स्त्री वीर्य अथवा डिम्ब

कुछ लोग स्त्री रजको ही स्त्री वीर्य समझते हैं और कुछ लोग स्त्री पुरुष संयोग के समय स्त्रियों की जननेन्द्रियो से जो द्रव निकलता है और जिसके निकलने में पुरुष के वीर्य पानके समान उन्हे आनन्दकी प्राप्ति होती है, उसे बहुत लोग अबतक स्त्री का वीर्य समझते हैं। परन्तु वास्तव मे न तो रज ही स्त्री का वीर्य है और न यह द्रव पदार्थ ही। यह द्रव पदार्थ तो जननेन्द्रिय को मुलायम रखने के लिये बराबर निकला करता है और संयोग के समय अधिक निकलता है; परन्तु यह गर्भ रचना में कोई काम नहीं करता। बड़े

बड़े वैज्ञानिको के मतानुसार डिम्ब ही स्त्रियों का बीज है और उसीके साथ वीर्यकीट का मिलन होने से गर्भ सञ्चार होता है।

पुरुष के शुक्रकीट से स्त्री का डिम्ब अथवा वीज प्रायः तिगुना

चित्र नं० ३

स्त्री के डिम्ब किम्वा वीज का चित्र

चित्र नं० ४
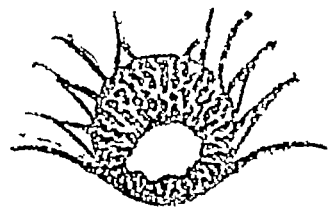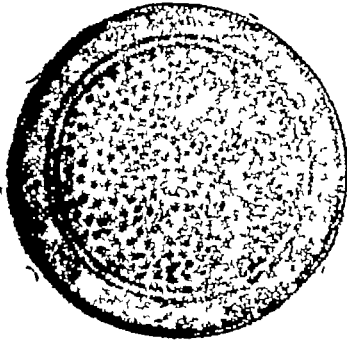
डिम्ब-जन्तु

बड़ा होता है, तौभी यह इतना छोटा होता है कि साधारण चर्म-चक्षुओं से केवल एक सूक्ष्म विन्दु के समान दिखाई देता है। इसका व्यास १/८० इञ्च से लेकर १/१२० इञ्च तक होता है। उँगली के नखपर ऐसे हजारो डिम्ब रक्खे जा साकते हैं। परन्तु ईश्वर की कैसी विचित्र लीला है कि इससे एक मनुष्य का जन्म होता है।

अब यह समझना चाहिये कि ये डिम्ब रहते कहाँ हैं ? जिस प्रकार पुरुष के शरीर में अण्डकोष (टेस्टस्) वीर्य उत्पत्ति करने वाला अङ्ग है, इसी प्रकार गर्भाशय की दाहिनी और वांई ओर जरा-जरा से फ़ासलेपर एक एक अण्डाशय होता है। इन अण्डाशयों का आकार वादाम के समान होता है। इन दोनों अण्डाशयों

के अन्दर अगणित डिम्ब भरे रहते हैं । इन डिम्बों में से प्रतिमास प्रायः रजोदर्शन के समय एक डिम्ब निकलता है इसी डिम्ब से पुरुष वीर्य का संयोग होनेपर गर्भसञ्चार होता है। ये डिम्ब दोनों अण्डाशयों से बारी बारी से निकलते रहते हैं । पहिले महीने में यदि दाहिने अण्डाशय से डिम्ब निकलता है तो दूसरे महीने में बांयें से। यही क्रम आजीवन चला करता है।

गर्भाशय ।

गर्भाशय का आकार नासपाती या बैंगन के समान होता है। यह अन्दर पोला परन्तु बाहर से चिपटा होता है। जिन स्त्रियो को एक भी बच्चा न हुआ हो उनके गर्भाशय की लम्बाई २ इञ्च, मोटाई १ इञ्च और वजन २½ से ३½ तोले तक होता है। जिन स्त्रियो को बच्चे होजाते हैं, उनके गर्भाशय का आकार कुछ बड़ा होता है। गर्भ के अन्त के दिनो में गर्भ पच्चीस गुना अधिक बढ़ जाया करता है और स्त्री पुरुष का संयोग होनेपर गर्भ स्थिर होता है।

अण्डकोष ।

यह पुरुष के शरीर में वीर्य उत्पत्ति करनेवाला अङ्ग है। प्रत्येक मनुष्य के दो अण्डकोष होते हैं, जो एक थैली (सेरोटम) के भीतर लटकते रहते हैं । इनमें अत्यन्त शूक्ष्म कीड़े उत्पन्न होते हैं और इन्हीं शुक्रकीटो से सन्तानोत्पत्ति होती है । ये कीड़े खारी पानी में जाते ही मरजाते हैं, सर्द पानी मे चलते नहीं, परन्तु मूत्र में भली प्रकार चलते फिरते हैं। पुरुष के अंगों में अण्डकोष सबसे उपयोगी

में भुने हुए चावल और दूध और घी से बनी हुई खीर का भोजन करे और स्त्री खीर न खाकर तैल और उरद का भोजन करे। इस दिन नमक का भोजन करना निषेध है। जहाँ तक हो सके स्त्री और पुरुष को हल्का और पुष्टकारी भोजन कर गर्भाधान करना चाहिये। अधिक भोजन से पेट भरकर गर्भाधान करने से गर्भ रहने की सम्भावना कम रहती है।

जिस दिन गर्भाधान करना हो उस दिन स्त्री पुरुष दोनो तैल मर्दन करें। हर्दी, ज्वार का चून तथा केसर आदि से उपटना करें। आज कल उपटन का प्रयोग उठ गया है और लोग फैशन के फेर में पड़ साबुन, सेन्ट आदि सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग करते हैं।

समय—उस रात्रि को घटा वा मेघ भी न हो। अकाश-निर्मल और स्वच्छ हो। रात्रि के पहले प्रहर मे अथवा नौ या दस बजे गर्भाधान नही करना चाहिये, क्योंकि इस समय गर्भ रहने की सम्भावना कम रहती है। कारण? स्त्री और पुरुष थके हुए से रहते है। गर्भाधान के लिये मध्यान्ह रात्रि का समय हमारे शास्त्र-कारों ने वर्जित बतलाया है। इसलिये रात्रि के तीसरे प्रहर मे ही गर्भाधान होना चाहिये। पाश्चात्य विद्वानो ने गर्भाधान के लिये मध्यान्ह दिन का समय बताया है, परन्तु वह समय शायद यूरोप के लिये ही ठीक हो, हमारे लिये नहीं। कारण? दिन मे गर्भ-धान करना नियम के बिल्कुल ही प्रतिकूल है। मध्यान्ह रात्रि का समय हमारे यहाँ इसलिये वर्जित है कि इस समय के गर्भाधान मे पैदा हुई सन्तान ठीक नहीं होती।

जातो वा न चिरञ्जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः ।
तस्मादत्यन्त बालायां, गर्भाधानंन कारयेत् ॥ (शुश्रुत-संहिता)

अर्थात्, यदि १६ वर्ष से कम आयु वाली स्त्री में २५ वर्ष से न्यून वय वाला पुरुष गर्भाधान करे तो वह गर्भ उदर में ही विपत्ति को प्राप्त होता है । यदि उस गर्भ से सन्तान उत्पन्न भी हुई तो वह जीती नही; यदि जीती भी है तो अत्यन्त दुर्वल अङ्गोवाली होती है । इसलिये कम आयु वाली स्त्री में कभी गर्भाधान न करना चाहिये ।

गर्भाधान के लिये वर्जित रात्रियां ।

रजोदर्शन् की रात्रियो में गर्भाधान निपेध है, क्योकि बहते हुए रक्त में प्रसङ्ग द्वारा प्रविष्ट वीर्य गुणकर नहीं होता अर्थात् रज के साथ वीर्य भी बह जाता है, जैसे बहते हुए जल में कोई उतराने वाली वस्तु के फेंकने से तत्स्थान में नहीं ठहर सकती । रज के दिनो में प्रसङ्ग करने से एक तो गर्भ ही नही रहता और यदि रह भी जाता है तो उस सन्तान के सम्पूर्ण अङ्ग ठीक नही होते और उसकी आयु थोड़ी होती है । इसलिये प्रत्येक स्त्री को चाहिये कि मासिक धर्म से शुद्ध होकर अपने स्वस्थ पति से गर्भधारण करे । प्रत्येक स्त्री और पुरुष को गर्भाधान के लिये एक मास पहले से ब्रह्मचर्य युक्त रहना चाहिये । ऐसा करने से सन्तान वलिष्ट पैदा होती है ।

भोजन ।

जब गर्भाधान करने की इच्छा हो तो पुरुष सायंकाल को घी

में भुने हुए चावल और दूध और घी मे बनी हुई खीर का भोजन करे और स्त्री खीर न खाकर तैल और उरद का भोजन करे। इस दिन नमक का भोजन करना निषेध है। जहाँ तक हो सके स्त्री और पुरुष को हल्का और पुष्टकारी भोजन कर गर्भाधान करना चाहिये। अधिक भोजन से पेट भरकर गर्भाधान करने से गर्भ रहने की सम्भावना कम रहती है।

जिस दिन गर्भाधान करना हो उस दिन स्त्री पुरुष दोनो तैल मर्दन करे। हर्दी, ज्वार का चून तथा केसर आदि से उपटना करे। आज कल उपटन का प्रयोग उठ गया है और लोग फैशन के फेर में पड़ साबुन, सेन्ट आदि सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग करते हैं।

समय—उस रात्रि को घटा वा मेघ भी न हो। आकाश-निर्मल और स्वच्छ हो। रात्रि के पहले प्रहर मे अथवा नौ या दस बजे गर्भाधान नहीं करना चाहिये, क्योंकि इस समय गर्भ रहने की सम्भावना कम रहती है। कारण? स्त्री और पुरुष थके हुए से रहते हैं। गर्भाधान के लिये मध्यान्ह रात्रि का समय हमारे शास्त्र-कारों ने वर्जित बतलाया है। इसलिये रात्रि के तीसरे प्रहर में ही गर्भाधान होना चाहिये। पाश्चात्य विद्वानों ने गर्भाधान के लिये मध्यान्ह दिन का समय बताया है, परन्तु वह समय शायद यूरोप के लिये ही ठीक हो, हमारे लिये नहीं। कारण? दिन मे गर्भ-धान करना नियम के बिल्कुल ही प्रतिकूल है। मध्यान्ह रात्रि का समय हमारे यहाँ इसलिये वर्जित है कि इस समय के गर्भाधान मे पैदा हुई सन्तान ठीक नहीं होती।

शयन भवन—शयन भवन, चित्र इत्यादि से सुसज्जित रहना चाहिये। सुन्दर और अच्छे अच्छे ऐतिहासिक और धार्मिक महापुरुषों के चित्र शयनागार में उस स्थान पर टँगे रहने चाहिये, जहाँ गर्भाधान के समय स्त्री और पुरुष की आखें जा सकें।

विचार और मन—यह लिखा जा चुका है कि रजोदर्शन से शुद्ध होकर स्त्री अपने पति का ही ध्यान रक्खे तथा उनका ही मुख देखे। तौभी जिसदिन गर्भाधान करना हो, अच्छे अच्छे पुरुषों का ध्यान दोनों स्त्री पुरुष को रहना चाहिये। जिस व्यक्ति विशेष की आकृति और स्वभाव की सन्तान उत्पन्न करनी हो, उसी का ध्यान विशेष रहना उचित है और यह ध्यान स्त्री को तो वहाँ तक रखना चाहिये जबतक बच्चा पैदा न हो ले। ऐसा करने से ठीक उसी स्वभाव और आकृति की सन्तान पैदा हो सकती है।

वस्त्र—इस दिन स्त्री पुरुष दोनों को साफ और स्वच्छ वस्त्र पहनने चाहिये। मैला कुचैला वस्त्र पहनकर गर्भाधान करना मना है।

निषेध—जिस दिन गर्भाधान करने की इच्छा हो, उसदिन अष्टमी, अमावस्या, पूर्णमासी, एकादशी वा त्रयोदशी भी न हो। इन रात्रियों के अतिरिक्त पर्व या त्यौहार की रात्रियाँ भी गर्भाधान के लिये हमारे शास्त्रकारों ने वर्जित बताई हैं।

प्रथम गर्भधारण करने के बाद २½ अथवा ३ वर्षोंतक गर्भधारण नहीं करना चाहिये। जो स्त्री पुरुष इस वैदिक नियम का पालन करते हैं, वे सदैव स्वस्थ और निरोग रहते हैं।

गर्भ सञ्चार अथवा गर्भाधान—यह तो सभी जानते हैं कि स्त्री पुरुष का संयोग होनेपर गर्भ सञ्चार होता है, परन्तु संयोग होने के वाद किसप्रकार गर्भ रहता है, यह हमलोग नहीं जानते। वास्तव में यह विषय विवादग्रस्त और ज्ञानगम्य है । कितने ही विद्वानों ने इस सम्वन्ध में बड़ी जॉचकर अपनी अपनी सम्मतियाॅ अंकित की हैं । सवकी बात किसी अंशतक एक दूसरे से मिलती है, परन्तु सब वातें सव अंशोमें नहीं मिलती। हम सबसे अन्तिम खोज के अनुसार इस विषय को अङ्कित कर रहे हैं ।

जिसप्रकार पुरुष और स्त्री को ईश्वर ने एक दूसरे को अपनी ओर आकर्पित करने की शक्ति दी है, उसीप्रकार स्त्री डिम्व और पुरुप शुक्रकीटो मे भी एक दूसरे की ओर आकर्पि होने की शक्ति ईश्वर ने रक्खी है । जव पुरुष स्त्री संयोग करते हैं और संयोग के अन्त मे जव वीर्यपात होता है, तव लाखो शुक्रकीट डिम्वको भेंटने के लिये व्याकुलता पूर्वक गर्भाशय की ओर दौड़ते हैं । रजोदर्शन के समय जो डिम्व अण्डाशय से निकलता है, वह कभी कभी डिम्वप्रणाली पारकर गर्भाशय मे आता है और उसके एक कोने से चिपककर वीर्य की प्रतीक्षा किया करता है। स्त्री की जननेद्रिय से मिलेहुए गर्भद्वार मे होकर शुक्रकीट वहाॅ पहुॅचते हैं और उस डिम्व पर चारो ओर से आक्रमण करते हैं । परन्तु इन लाखों शुक्रकीटों मे से केवल एक शुक्रकीट जो सवसे अधिक बलवान होता है, वही डिम्व में प्रवेश कर पाता है । इसी प्रक्रिया का नाम गर्भाधान है । डिम्व और शुक्रकीटो का मिलान होनेपर डिम्व गर्भित

होजाता है गर्भित डिम्ब देखने में स्पञ्ज के समान मालूम होता है। उसके अन्दर क्रमशः गर्भ की सृष्टि और वृद्धि होने लगती है।

चित्र नं० ५
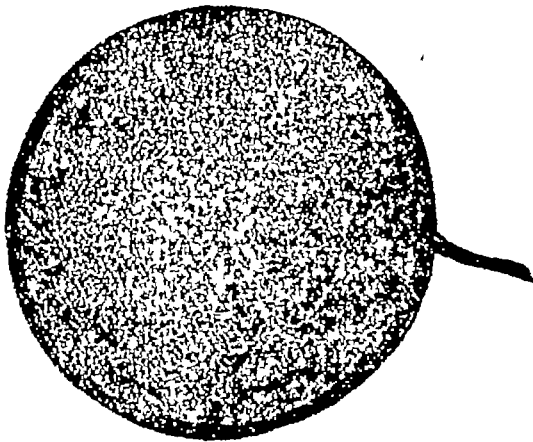
डिम्ब गर्भित क्रिया

डिम्ब और शुक्रकीटों का यह मिलन प्रायः फलवाहिनी किंवा डिम्ब प्रणाली में होता है। और यदि डिम्ब गर्भाशय तक आ जाता है तो यह मिलन गर्भाशय से ही होता है और यदि अण्डाशय से निकलकर वह डिम्ब प्रणाली या गर्भाशय तक नहीं पहुँचता तो कभी कभी शुक्रकीट अण्डाशय तक धावा मारते हैं और वहीं उसे गर्भित करदेते हैं। बादको डिम्ब क्रमशः फलवाहिनी और गर्भाशय मे आता है और वहीं उसकी वृद्धि आरम्भ होती है।

चित्र नं० ६
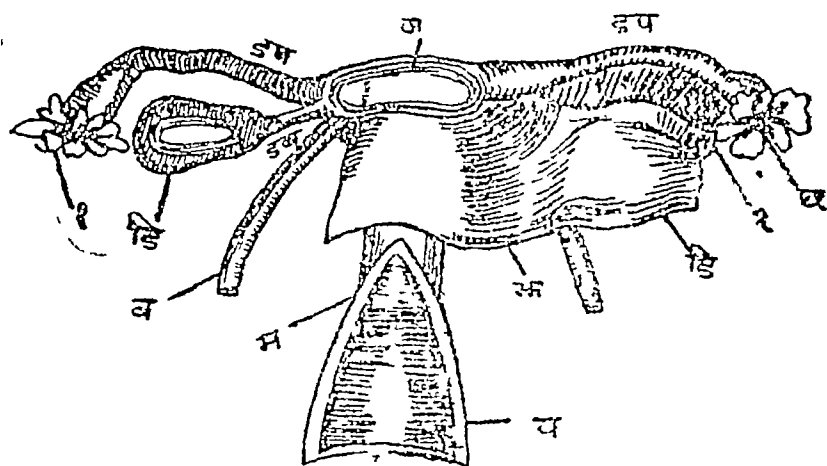
गर्भाशय, डिम्ब-प्रणाली, डिम्ब-ग्रन्थि (अण्डाशय)

ज = जरायु या गर्भाशय; झ = चौड़ा बन्धन, यह बन्धन केवल एकही ओर दर्शाया गया है, डि = डिम्ब ग्रन्थि (अण्डाशय) यह ग्रन्थि चौड़े बन्धन की पिछली तहमे रहती है, जैसी कि चित्र में दाहिनी ओर दिखाई गयी है, डप = डिम्ब प्रणाली, जो कि गर्भाशय से आरम्भ होकर दो नालियाँ दाहिनी और बाँई ओर से डिम्ब-ग्रन्थियों (अण्डाशयों) में जा मिलती हैं, १ = डिम्ब प्रणाली के मुख की झालर, छ = छिद्र, जिसके द्वारा डिम्ब, डिम्ब प्रणाली में पहुँचता है, डब = डिम्ब ग्रन्थि (अण्डाशय) का बन्धन, व = गर्भशयका गोल बन्धन, म = गर्भाशयका बहिर्मुख; य = योनि ।

हरएक मैथुन क्रिया में शुक्र गर्भाशय के भीतर नही पहुँचता, वह बहुधा जननेन्द्रिय से वाहर निकल जाता है । जब रुके तभी गर्भाधान हो सकता है गर्भाधन के लिये केवल एक ही शुक्राणु की आवश्यकता है, इसलिये शुक्र का जरा सा भाग भीतर रहजाने से गर्भस्थिति हो जाया करती है।

गर्भाशय, योनि और डिम्ब प्रणाली में शुक्राणु कईदिन तक जीवित रह सकता है। इसलिये यह आवश्यक नहीं कि जिस दिन मैथुन हो उसी दिन गर्भाधान भी हो। अतः गर्भाधान मैथुन के कई दिन पीछे भी हो सकता है।

जोडी सन्तान होने का कारण।

सामान्यतः एक शुक्राणु का एक ही डिम्ब से संयोग होता है और एक गर्भ बनता है। परन्तु कभी कभी एक ही साथ या कुछ दिनो के अन्तर से दो शुक्राणुओ का दो डिम्बों से संयोग हो जाता है तव दो गर्भ उत्पन्न होता है और स्त्री एक साथ या कुछ दिनों के अन्तर से दो वच्चे जनती है। कभी कभी दो से-अधिक वच्चे भी पैदा होते हैं, परन्तु निर्वलता के कारण, वे वचते नहीं।

दो शरीर की एक सन्तान होने का कारण।

कभी कभी दो शुक्राणुओं का एक ही डिम्ब से संयोग होजाता है। गर्भ से जो सन्तान पैदा होती है उसके दो शरीर होते है, जो आपस मे जुटे रहते हैं । ये अद्भुत वालक अधिक कालतक नहीं जीया करते । कभी कभी जीते भी देखे गये हैं, ईश्वर की विचित्र लीला है।

मासिक स्रावका कारण ।

मासिक स्राव का डिम्ब के साथ, जो प्रति मास डिम्ब ग्रन्थियों (अण्डाशयों) से निकलकर डिम्ब-प्रणाली में आता है, कुछ न कुछ सम्बन्ध अवश्य है, क्योंकि जब डिम्ब पककर डिम्ब प्रणाली में आने वाला होता है, तभी अधिकतर श्राव होता है । रजोदर्शन के साथ साथ डिम्ब का पकना आरम्भ होता है और रजोनिवृति के बाद डिम्ब ग्रन्थि सिकुड़कर छोटी होने लगती है तथा डिम्ब निकलना वन्द होजाता है । इसी समय आर्त्तव का वहना भी रुकता है । मासिकश्राव होने के वाद १५ दिनो में ही गर्भसञ्चार हुआ करता है ।

इच्छानुसार कन्या या पुत्र उत्पन्न करना ।

जिस प्रकार सूर्य चन्द्र, जल वायु और रात दिन आदि के सम्वन्ध में कोई नियम विद्यमान है, उसीतरह पुत्र और कन्या उत्पत्ति के सम्बन्धमें भी कोई प्राकृतिक नियम अवश्य विद्यमान है । यदि ऐसा न होता तो एक ही प्रक्रिया का भिन्न भिन्न परिणाम क्यों दृष्टिगोचर होता ? एक ही प्रकार गर्भाधान करने पर कभी पुत्र और कभी कन्या का जन्म क्यो होता ? हम इसका रहस्य नहीं जानते, इसलिये हम कहने मे असमर्थ हैं कि इसमें प्रकृति का अमुक नियम काम करता है । संसार के जब समस्त कार्य और समस्त पदार्थ नियम सूत्र में बँधेहुए हैं, तब यह उसका अपवाद नहीं हो सकता । अवश्य इस सम्वन्ध में भी कुछ नियम विद्यमान हैं और इन नियमों के अनुसार ही पुत्र या कन्या का जन्म होता है ।

परन्तु इन नियमो से अभी संसार अनभिज्ञ है। प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानो ने इस सम्बन्धमें बड़ी खोज और छानबीन की, किन्तु फिर भी इच्छानुसार पुत्र या कन्या उत्पन्न करने का ठीक २ नुस्खा अभी लोगो के हाथ नहीं लगा। इस रहस्य पर अभी एक प्रकार से परदा ही पड़ा हुआ है। विचार करने पर यही निश्चय किया जाता है कि यह परदा अनन्तकाल तक इसीप्रकार पड़ा रहना चाहिये। इस परदे का उड़ना मानव—समाज के लिये घातक सिद्ध होगा, इश्वर की शृष्टि में बाधक हो पड़ेगा, क्योंकि शृष्टि का कार्य सुचारु रूप से चलाने के लिये इस संसार में स्त्री और पुरुष की समान रूप से आवश्यकता है। सच बात तो यह है कि मनुष्य के मनमें पुत्र या कन्या उत्पन्न करने का प्रश्न ही न उठना चाहिये। जब पुत्र और कन्या दोनो समान रूप से उपयोगी है तो केवल पुत्र या कन्या ही उत्पन्न करने के लिये किसी को क्यो लालियत होना चाहिये ?

परन्तु यदि किसी के यहाँ दैवयोग से कन्या ही कन्या उत्पन्न होती हो तो वह पुत्र की इच्छा अवश्य कर सकता है। इसी प्रकार यदि किसी के यहाँ पुत्र ही पुत्र उत्पन्न होते हों तो वह कन्या होने की लालसा कर सकता है। ऐसे ही लोगो को अपनी इच्छानुसार पुत्र या कन्या उत्पन्न करनेकी चेष्टा करनी चाहिये। परन्तु जिनकी अवस्था ऐसी न हो उन्हे नाहक इस मामले में पड़कर सृष्टि कार्य में बाधा डालना उचित नहीं। जो लोग वास्तव मे इसके लिये लाला-यित होगे वे अपनी इच्छाशक्ति और मनोबल के सहार सहज मे ही

पुत्र वा कन्या उत्पन्न कर सकेंगे, किन्तु जो लोग केवल कौतुकवश पुत्र या कन्या उत्पन्न करने की चेष्टा करेंगे उन्हे इसमें सफलता न मिलेगी, क्योंकि ऐसे लोगों में वह इच्छाशक्ति, वह मनोबल, वह दृढ़ता कभी सम्भव नही जो इच्छानुसार पुत्र या कन्या होने में सहायता पहुँचाती है। यह कभी न भूलना चाहिये कि यह एक तपस्या है—एक साधना है। सब लोग समान रूप से इसके अधिकारी नहीं हो सकते।

हम पहले भी लिख चुके हैं कि इच्छानुसार पुत्र या कन्या उत्पन्न करने का नुस्खा अभी लोगोके हाथ नहीं लगा। किन्तु ज्ञान और विज्ञान ऐसी चीजें हैं कि ये गूढ़ से गूढ़ रहस्यो का भी पता लगा सकती हैं। पुत्र या कन्या की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे भी इनसे थोड़ा बहुत प्रकाश पड़ा है। प्राचीन काल से अब तक बराबर इस विषय पर विचार होता चला आया है। हमारे ऋषि मुनियो से लेकर आधुनिक डाक्टर और वैज्ञानिकोंतक ने इस सम्बन्ध में अपनी अपनी सम्मतियाँ अङ्कित की है। आधुनिक विज्ञान सब बातों मे बढ़ा चढ़ा माना जाता है, किन्तु फिर भी यह किसी किसी बात मे भारतीय विज्ञान की अब तक समता नही कर सका। सन्तति विज्ञान के सम्बन्ध मे भी यही बात है। पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने बहुत खोज की और बहुत बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे हैं परन्तु तथ्य का अन्वेषण करने पर उनमे कोई नयी बात नहीं मिलती। हमारे ऋषि मुनियों ने जो बाते एक सूत्र या श्लोक के एक पद मे लिखी हैं। वही बाते पाश्चात्य वैज्ञानिकों के समूचे ग्रन्थों में दिखाई पड़ती ।

पाश्चात्य वैज्ञानिको की बातें विस्तारपूर्वक होने के कारण आसानी से समझ में आ जाती हैं, किन्तु ऋषि मुनियों के सिद्धान्त सूत्र रूप में होने के कारण मनन किये बिना समझमें नही आते। यही दोनों में स्थूल अन्तर है। इतना बतलाने के बाद अब हम पुत्र या कन्या का उत्पत्ति के सम्बन्धमें पाश्चात्य एवम् भारतीय विद्वानों की सम्मतियाँ अङ्कित कर अपने पाठक और पाठिकाओ को किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचाने की चेष्टा करेंगे ताकि इच्छानुसार वे कन्या या पुत्र उत्पन्न कर सकें।

पाश्चात्य वैज्ञानिकों के मत—(१) मान्सथ्यूरी का कथन है कि पुत्र अथवा पुत्री का उत्पन्न होना स्त्री वीर्य की परिपक्वता पर आधार रखता है। रजोदर्शन के बाद ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है त्यो त्यो यह वीर्य परिपक्व होता है। अतएव यदि रजोदर्शन् बन्द होनेपर दो ही चार दिन के अन्दर गर्भाधान होता है तो कन्या और सात आठ दिन के बाद गर्भाधान होने से पुत्र उत्पन्न होता है।

(२) मेयर का कथन है कि रजोदर्शन के बाद कुछ दिन तक स्त्री वीर्य बहुत बलवान होता है, अतएव उस समय गर्भाधान करने से कन्या उत्पन्न होती है, किन्तु दसवें दिन के बाद जब स्त्री वीर्य बहुत निर्बल हो जाता है तब गर्भाधान करने पर पुत्र उत्पन्न होता है।

(३) डाक्टर लियोपाल्ड का कथन है कि जिन स्त्रियों के पेशाब मे अधिक चीनी जाती है, वे पुत्रियों को जन्म देती हैं। क्योंकि अधिक चीनी जानेसे स्त्री वीर्य भलीभाँति परिपक्व नहीं होता

और इस प्रकारके हीन वीर्य से पुत्रियों का ही जन्म होना असम्भव है। इसी प्रकार कम चीनी जाने से वीर्य परिपक्व होकर पुत्र उत्पन्न करता है।

(४) डाक्टर ट्राल का कथन है कि रजोदर्शन के वाद कुछही दिनो में गर्भाधान होने से पुत्री और आठ दस दिन वाद गर्भाधान होने से पुत्र उत्पन्न होता है। यों होने का कारण यह है कि रजोदर्शन के समय स्त्री अण्ड वहुत दूरीपर होता है, अतएव शुक्रकीट उसे अधिक परिमाण मे नहीं भेंट सकते। किन्तु वाद को स्त्री-अण्ड (डिम्ब) गर्भाशय में आ जाता है, अतएव वहाँ तक शुक्रकीटों की पहुँच आसानी से हो जाती है। इस प्रकार स्त्री वीर्य से अधिक शुक्रकीटो का मेल होने पर पुत्र उत्पन्न होता है।

(५) कितने ही विद्वानों का मत है कि रजोदर्शन वन्द होनेपर स्त्री की सङ्गमेच्छा वहुत प्रवल होती है। अतएव उस समय गर्भाधान करने से स्त्री इच्छा प्रवल होनेके कारण कन्या उत्पन्न होती है। किन्तु ८-१० दिन वाद यह इच्छा कम हो जाती है, अतएव उस समय गर्भ रहने पर पुत्र उत्पन्न होता है।

(६) ऐरीस्टोटल का कथन है कि स्त्री और पुरुष के दाहिने उत्पादक अङ्गों से पुत्र और वायें उत्पादक अङ्गो से कन्या उत्पन्न होती है।

(७) ये सव पाश्चात्य विद्वानो की सम्मतियाँ हैं। इनमें से ऐरिस्टोटल की सम्मति अधिक ग्राह्य मानकर डाक्टर पी० एच० सिक्स्ट एम० डी० ने वड़ी खोज की और यह सिद्ध किया कि

के दाहिने अण्डकोष से निकला हुआ वीर्य स्त्री के दाहिने ही अण्ड-कोष से निकले हुए बीज से मिलता है और इस प्रकार गर्भ रहनेपर पुत्र उत्पन्न होता है। इसके विपरीत जब पुरुषों के बायें अण्डकोष से जब वीर्य निकलता है तब वह स्त्री के बायें अण्डकोष से ही निकले हुए बीज से मिलता है और इसप्रकार गर्भ रहनेपर कन्या उत्पन्न होती है। डाक्टर सिक्ट अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन एवम् अपनी खोज और प्रयोगों का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि स्त्री तथा पुरुष को दो दो अण्डकोष होते हैं, यदि दोनों में एक ही प्रकार का पदार्थ होता तो इनके दो दो होने का क्या कारण? जब दोनों में एक ही प्रकार का पदार्थ है तो एक ही से काम चल सकता था, दो दो अवयव अलाहदा अलाहदा बनाने की क्या आवश्यकता थी? क्या इसको प्राकृति की भूल नहीं समझनी चाहिये कि उसने निरर्थक दो जुदे जुदे अवयव उत्पन्न किये? किन्तु प्रकृति का कोई काम निरर्थक नही होता, उसमें कोई न कोई रहस्य अवश्य होता है अतएव इनके दो दो होने में कोई रहस्य अवश्य है। मेरे ख्यालमें, मेरे विचार में इन दोनो में जुदा जुदा पदार्थ है, जिनमे जुदी जुदी शक्तियाँ हैं। किन्तु ऐसी महत्व की बातको मान लेनेके लिये केवल तर्क और दलीलों से साबित होनेपर ही आधार नहीं रखना चाहिये जबतक कोई प्रयोग इत्यादि करके इसको पूर्णतया प्रमाणित नही करदिया जाय तब तक यह सिद्धान्त सर्वथा अपूर्ण है।

मै इसी विचार में था कि कोई प्रयोग करके इसका पूर्णरूपसे प्रतिपादन करूँ। अचानक मैंने सन १८८२ में दो खस्सी किये हुए

शूकर के बच्चे इस अभिप्राय से खरीदे कि इनको खूब मोटेताजे करके आगामी शीत ऋतु मे खाने के काम मे लिया जाय।
उनके बड़े होनेपर एक दिन मैंने देखा कि उनमे से एक पूरा खस्सी नहीं है। गलतीसे वा भूलसे उसका वायाँ अवयव (अण्डकोष) काटने से रहगया है। मुझे यह देखकर क्रोध होने की अपेक्षा— अपने प्रयोग करने के इरादे का स्मरण हो आया और उसके करने मे स्वतः सुविधा मिलने के कारण हर्ष हुआ।

मैंने उसी जाति की मादीन खरीदी और उसदायें अण्डकोष कटे हुए पशु को उस मादीन के साथ रक्खा। दिसम्बर मास मे उससे ८ बच्चे हुए, जो सबकी सब मादीनें थी। इसपर मैंने सन्तोष न कर इनसे और बच्चे लेने चाहे। पूरी सँभाल और निगरानी रक्खी और उक्त मादी को दूसरे पशुओं के संसर्ग से बचाया। जुलाई मास मे उस जोड़े से फिर ११ बच्चे हुए, किन्तु ये भी सारे के सारे नारी जाति के थे। अब मुझे अपने सिद्धान्त के सत्य होने के विषय मे पूर्णरूपसे विश्वास हो गया। इस सफलता से मेरी हिम्मत और वढ़ी और मैंने इन प्रयोगो को वरावर दूसरे दूसरे पशुओं पर जारी रक्खा। किसी के दायें अण्डकोष काटकर मादिनें उत्पन्न की तो किसी के वायें अण्डकोष काटकर नरोंकी उत्पत्ति की। जब मैं ने नरो को छोड़कर यही प्रयोग नारी जातिपर करना चाहा तब मुझे नर की अपेक्षा नारि जातिपर प्रयोग करने मे बहुत कठिनाई हुई। नर के अवयव वाहर होते हैं, अतएव पहले पेट चीरना, तत्पः उक्त अवयव को काटना पड़ा। इस प्रकार चीरफाड़ करते

प्राणियों की हानि हुई, अन्त में कठिनाई से मैंने इसमें भी सफलता प्राप्त की अर्थात् मदीनों के बायें अवयव काटकर नरों की उत्पत्ति की और दायें अवयव काटकर मादिनो की उत्पत्ति की।

अन्त में डाक्टर सिक्स्ट कहते है कि मैं अपने इन प्रयोगों पर से इस सिद्धान्त पर पहुँचा हूँ कि (१) पुरुष के भिन्न भिन्न अण्डकोषों में भिन्न भिन्न प्रकार का वीर्य रहता है (२) स्त्री के भिन्न भिन्न अण्डाशयो में भिन्न भिन्न प्रकार के अण्ड किंवा बीज रहते हैं— दाहिने में पुत्र के वीज और बायें में कन्या के वीज (३) पुरुष के बायें अङ्ग का बीज स्त्री के बायें अङ्ग के वीर्य से और दाहिने अङ्ग का वीर्य स्त्री के दाहिने अङ्ग के वीर्य से मिलता है। पाश्चात्य देशोमें डाक्टर सिक्स्ट की यह खोज सबसे अधिक प्रमाणित मानी जाती है। डाक्टर सिक्स्ट ने अपने सभी प्रयोग पशुओं पर ही किये थे, परन्तु बाद को ये बातें मनुष्यों के सम्बन्ध में भी आजमायी गयी। आजमाने पर डाक्टर सिक्स्ट का सिद्धान्त सत्य प्रमाणित हुआ।

भारतीय वैज्ञानिकों के मत।

(१) धर्माचार्य मनु का मत है कि पुत्रोत्पत्ति की इच्छा होने पर रजोदर्शन की तीन रात्रियाँ छोड़कर युग्म रात्रि अथात् चौथी, छठीं, आठवीं इत्यादि रात्रियो मे गर्भाधान करे और कन्या की इच्छा होने पर विषम रात्रि अर्थात् पाचवी, सातवीं, नवीं इत्यादि रात्रियो मे गर्भाधान करे। इसपर भी यदि पुरुष वीर्य अधिक और बलवान रहेगा तो पुत्र और स्त्री-रज अधिक बलवान और पुष्ट रहेगा

तो कन्या होगी। विशेष वलिष्ठ पुत्र उत्पन्न करने के लिये उत्तरोत्तर रात्रि और भी श्रेष्ठ है, जैसे चौथी की अपेक्षा छठी रात्रि में गर्भाधान होने से विशेष वलिष्ठ पुत्र उत्पन्न होगा, उससे अधिक वलिष्ठ आठवीं रात्रि मे गर्भाधान होने से और इसीप्रकार उत्तरोत्तर समझना चाहिये।

(२) सुश्रुत का भी यही मत है कि विषम रात्रियो में सङ्गम करने से कन्या और सम रात्रियो में संगम करने से पुत्र उत्पन्न होता है। उसका कारण यह दिखलाया गया है कि सम रात्रियो मे स्त्री को स्त्री रज कम होता है और विषम रात्रियो मे पुरुष को वीर्य कम रहता है। परन्तु यह नहीं लिखा कि क्यों कम रहता है। मालूम होता है, ये बातें वैद्यवरो ने अनङ्ग रङ्ग आदि कामशास्त्र द्वारा परीक्षा करके सिद्ध की है।

(३) वाग्भट्ट का कथन है कि स्त्री अथवा पुरुष के दाहिने अंग से पुत्र और बायें अंग से कन्या उत्पन्न होती है। साथ ही उन्हों ने यह भी कहा है कि वीर्य अधिकता से पुत्र और रज की अधिकता से कन्या उत्पन्न होती है।

(४)भाव मिश्र इस सम्बन्धमें दो बातें लिखते हैं—एक तो यह कि पुरुष के वीर्य का अधिक भाग होने से पुत्र और स्त्री-वीर्य का अधिक भाग होने से कन्या उत्पन्न होती है। दूसरी यह कि स्त्रियों की जननेन्द्रिय में समीरणा, चान्द्रमसी और गौरी नामक तीन नाड़ियाँ होती हैं। समीरणा नाड़ी में वीर्यपात होने से गर्भ स्थिती नहीं होती। साधारण रति सेवन करने से चान्द्रमसी नाड़ी का

मुख खुलता है और उसमें वीर्य पड़ने से कन्या उत्पन्न होती है। गौरी का मुख उसी समय खुलता है जब स्त्रियों की काम वासना बहुत ही प्रबल होती है अतः इस नाड़ी के मुख में वीर्य पड़ने से पुत्र उत्पन्न होता है।

(५) योग-शास्त्र का सिद्धान्त है कि जिस समय नाक के दाहिने छिद्र से स्वाँस चलता हो उस समय गर्भाधान करने से पुत्र और जिस समय बाये छिद्र से श्वाँस चलता हो उस समय गर्भाधान करने पर कन्या उत्पन्न होती है। सम स्वर में बहुधा गर्भ ही नहीं रहता और यदि रहता है तो नपुंसक उत्पन्न होता है।

डाक्टर सिक्स्ट के सिद्धान्त से हमारा यह सिद्धान्त मिल जाता है। क्योंकि वैज्ञानिको का कथन है कि जिस समय जो स्वर चलता है उस समय उसी ओर का अण्डकोष ऊपर उठा रहता है। यदि किसी को पुत्र उत्पन्न करना हो तो उसे केवल अपने श्वासोच्छ्वास पर ध्यान रखना चाहिये जिस समय दाहिना श्वाँस चलता हो। दाहिना श्वर चलने से आपही आप दाहिना अण्डकोप ऊपर को उठा रहेगा, फलतः उसीसे वीर्य निकलेगा। परन्तु यदि इच्छित स्वर न चलता हो तो उसे बदल लेना चाहिये। कुछ मिनटो तक बांई करवट लेटने से दाहिना और दाहिनी करवट लेटने से बायाँ स्वर आपही आप चलने लगता है। तथा हाथ या पैरसे कुछ समय तक जिस पार्श्व को दबा रखियेगा उस ओर का स्वर चलना बन्द हो जायगा और दूसरी ओर का स्वर चलने लगेगा। पुत्र चाहने वालों के लिये सबसे अच्छा तरीका यह है कि पुरुष, स्त्री को सदा

अपनी बायीं ओर सुलाये और संयोग के पहले कुछ कालतक स्त्री और पुरुष दोनों करवट होकर एक दूसरे से बातें करते रहें। इस प्रकार बातचीत करने के लिये पुरुष को बायीं करवट और स्त्री को दायी करवट लेटना होगा। कुछ समय तक इसी प्रकार लेटे रहने से पुरुष का दाहिना स्वर चलने लगेगा और स्त्री का बायाँ स्वर। स्त्री का बायाँ स्वर चलने से पुरुष स्त्री के प्रजनन अङ्ग वही कार्य करते हैं जो पुरुष के अङ्ग, दाहिना स्वर चलने पर। हमारे यहाँ स्त्रियों को वामाङ्गी बनाने का भी यही मुख्य कारण है, और कोई बात नहीं।

अन्तिम निर्णय—अतः लेखक की राय है कि जिनको कन्या ही कन्या होती हो उन्हें पुत्र उत्पन्न करने के लिये निम्नाङ्कित बातों पर ध्यान रखना चाहिये।

(१) ऋतु काल के अतिरिक्त अन्य समय गर्भाधान न करे।

(२) रजोदर्शन से सात रात्रियां छोड़कर आठवीं और इसके बाद की रात्रियों में गर्भाधान करे।

(३) गर्भाधान के पहले स्त्री को कुछ देर तक बायीं ओर सुलाकर बातचीत करते रहे।

(४) गर्भाधान करते समय स्त्री और पुरुष के हृदय में पुत्र की ही भावना हो।

(५) गर्भाधान देते समय पुरुष को उचित है कि आहिस्ते से अपने दाहिने अण्डकोष को कुछ उठा दे।

गर्भ रहने की शर्तिया पहिचान—जिस रात्रिको गर्भ रह जाता है उसके भोर को उठते ही जी मिचलाता है, मुख का रङ्ग और ही हो जाता है, देह भारी सी जान पड़ती है, शृङ्गार करने को मन नहीं चलता, उल्टी आने लगती है, खट्टी व सोंधी वस्तु को खाने को जी बहुत चलता है. नींद अच्छी नहीं होती। ये लक्षण प्रथम मास के हैं। विशेष पहिचानने का यह सहज उपाय है कि थोड़े शहद को पानी में मिलाकर पी लेवे। जो थोड़ी देर पीछे टूँडी मे कुछ दर्द सा जान पड़े तो गर्भ अवश्य ही है, यदि दर्द नही होवे तो गर्भ कदापि नहीं। यह पहिचान बहुत ठीक है।

गर्भवती के लक्षण—रज का बन्द होना, पेट बढ़ना, चेहरा फीका, पेट पर मैल या रङ्गत सी जम जाना, छाती का बढ़ जाना, रगो का फैलना, खालका ढीला होना, स्तन की नोक खड़ी और स्याह रङ्गत की होना, तथा स्तनों में दूध, आँख की पलक मिचना, वमन अधिक, भोजन अच्छा न लगना, मुह से पानी गिरना, शरीर का जकड़ा रहना, होठोंपर स्याही और पावोंपर सूजन इत्यादि—

गर्भवती के कर्त्तव्य—(१) गर्भ रहने के बाद संगम करना विल्कुल निषेध है संगम करने से गर्भ का द्वार खुलकर गिरने का भय रहता है तथा संतान कुरूप और डौलहीन होने का भय रहता है। कितने कामी और व्यभिचारी स्त्री और पुरुष गर्भ के दिनों में भी संगम करते देखे जाते हैं, परन्तु ऐसा करना वैद्यक और शास्त्र अनुकूल नही।

(२) अधिक परिश्रम, बोझ उठाना, भारी वस्त्र पहनना, कुम-

मय का सोना वा जागना अथवा अधिक देर तक सोये रहना; बिना बिछावान के केवल भूमिपर सोना, मल-मूत्र की बाधा को रोकना, व्रत रखना, दूरतक पैदल चलना, अधिक गर्म गरिष्ट वस्तु खाना, चन्द्रग्रहण या सूर्य ग्रहण देखना, वस्ति कराना, वमन करना, कच्चा भोजन करना या अधिक आहार करना; अधिक चटपटी, कड़वी, पित्त बढ़ानेवाली वस्तु और कफकारी वस्तु खाना, पति की ताड़ना अथवा निकृष्ट खबर सुनना; चिन्ता, क्रोध और सोच अधिक करना; अधिक तैल या उबटन मलवाना, टेढ़ा उठना बैठना और गिरना, धक्का लगना, सिकुड़ना आदि बातें गर्भिणी स्त्री के लिये अधिक हानिकारक हैं। इन बातों से गर्भपात होने का भय रहता है तथा सन्तान निकृष्ट उत्पन्न होती है।

(३) गर्भ के दिनों में नित्य स्नान करना आवश्यक है। स्वच्छ हवा पहले से दूनी खानी चाहिये, क्योंकि एक शरीर में दो जीव रहते हैं। सीधा चलना तथा बैठना, चित्त सोना, लम्बा साँस लेना, आटा बिना चाला हुआ खाना, सादा सूक्ष्म भोजन करना, मीठा और स्वादिष्ट फल खाना; मिश्री, मक्खन, दूध, ईख आदि का सेवन गर्भवती को लाभदायक है।

(४) मीठा अधिक खाने से बालक मोटा वा धातुक्षीण रोग वाला, अधिक सोने से निर्बुद्धि व अपची रोग वाला, खट्टा अधिक खाने से कोढ़ी और निकृष्ट भोजन से फोड़ों का रोगवाला होता है। वायु कसली मिलने से कृश शरीर और गर्भवती दूसरे बालक को दूध पिलावे तो बालक और गर्भ दोनों निर्बल होते हैं। गर्भवती को

तीव्र औषधियाँ, रसादिक व कोनेन खिलाने से गर्भपात या बालक गूँगा होता है। कितनी स्त्रियाँ गर्भ के दिनो में कोयले और खपटे खाती हैं, परन्तु नहीं खाना चाहिये। खाने से सन्तान उदर रोग-वाली पैदा होती है।

(५) आलस्य, दुख, निर्दयता, दम्भ, अभिमान, द्वेष, क्रोध, अधर्म और अन्याय से तथा गर्भ के दिनों में लड़ाई झगड़ा करने से सन्तान द्वेषी, क्रोधी, कुरूप, मूर्ख और अधर्मी उत्पन्न होती है।

(६) इच्छा दो प्रकार की होती है। एक सदिच्छा, दूसरी असदिच्छा। इसलिये गर्भवती की सदिच्छा पूर्ण होनी चाहिये और असदिच्छा के लिये उसे अपने चित्तको समझा लेना चाहिये। यदि स्त्री का मन किसी ऐसी वस्तु पर चले जो उसे न मिलसके तो तो स्त्री को चाहिये कि एक ग्लास ठंडा पानी पी लेवे अथवा अपने मन को मारे, जिससे गर्भ में जो सन्तान है, उसमें भी मन मारने के गुण उत्पन्न हो जांय।

(७) यह भी ध्यान रखना चाहिये कि यदि स्त्री का स्वभाव पहले से श्रम करने का हो तो गर्भ के दिनों में उसका खाली बैठना भी हानिकर होगा, हाँ इतना श्रम न करना चाहिये कि जिससे थका-वट अधिक हो।

(८) कितने विद्वानो का विचार है कि गर्भ के पहिले पाँच महीनों में बालक का शरीर बनता है और पिछले चार महीनों में मस्तिष्क। इसलिये चार महीनों में वायु सेवन अधिक करे तथा

परिश्रम करे और अन्त के महीनों में शुद्ध विचार की शिक्षा श्रवण करे तथा पढ़े।

(९) यदि अधिक महीनों का गर्भ होने से पेट बढ़गया हो और चर्म फटने लगे तो उसपर खालिसबादाम तैल मलना चाहिये।

(१०) प्रसव कालतक सदा प्रसन्न चित्त रहे, सुन्दर वस्त्र धारण करे। विकृत और हीन अङ्ग के दर्श, स्पर्श से, भयोत्पादक बात के सुनने अथवा भयानक दृश्य या चित्र देखने से तथा कलः लड़ाई और रोने पीटने से बराबर अलग रहे।

गर्भपात के लक्षण और उचित उपाय—स्त्री की कमर व कोख में दर्द हो, रुधिर श्राव हो, तनी हुई छातियाँ मुर्झाने लगे, गर्भ के दिनों में स्तनों से दूध बहा करे तथा गर्भाशय में अधिक पीड़ा हो तो जान लेना चाहिये कि गर्भ गिर पडेगा। जिस स्त्री को बराबर गर्भपात हो जाता हो, उसे निम्न लिखित औषधि खिलावे, निश्चय लाभ होगा।

(१) मुलहठी, सालवृक्ष के बीज, देवदारु, लोनिया साग, काले तिल, गल, शतावरी, पीपल, कमल की जड़, जवासा, गोरीसर, वायसुरई, दोनों कटेली, सिंघाड़ा, कसेरू, दाख, मिश्री—सब औषधि तीन तीन मासे लेवे और सात महीने तक सात सात दिन पीवे तो कभी गर्भश्राव या गर्भपात न होगा। औषधि पीने की विधि यह है कि इनकी पोटली बाँधकर दूध में डाल दे। जब दूध पीने लायक औट जावे तब पोटली निकाल कर फेंक दे और मीठा डाल दूध पी लेवे।

(२) कठूमर के फल का अर्क या [illegible] के सोंठ को शहद में

मिलाकर पीने से तत्क्षण गर्भपात रुकता है। गर्भपात के लक्षण होने पर योग्य और अनुभवी वैद्यवरों से औषधि कराई जाय तो और अच्छा है।

गर्भवती के जी मिचलाने की औषधि—जी मिचलावे अथवा उल्टी आती हो तो थोड़ा सा दूध पी लेवे वा चिरायते का अर्क पीवे या निम्बू का शर्बत पीवे।

गर्भवती के छाती के दर्द की औषधि—छाती में दर्द वा जलन होती हो तो चिरायते का अर्क पीना चाहिये और राई का पलस्तर कौड़ी से नीचे स्थान पर लगाना चाहिये।

गर्भवती के शूल की औषधि—लाल चन्दन, खस, कमल, केसर, पदमाख, मुलहठी और तैल इन सब औषधियों को पीस कर गर्भवती के पेट पर लेप करने से गर्भ शूल दूर होता है।

गर्भमें बालक का किस अवस्था में रहना—गर्भ में बालक का सम्पूर्ण शरीर एक ही साथ बनता है, सिर्फ उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग सूक्ष्म होनेसे नहीं दीख पड़ते। जैसे आम का फल—गुठली, मोटी, त्वचा मज्जा और ऊपर का छाल सब समेत एक ही साथ उत्पन्न होता है, परन्तु वहुत महीन होने के कारण अलग अलग नहीं दीख पड़ते हैं और जब वही फल वड़ा और पुष्ट होता है तव सव दीख पड़ते हैं। इसीप्रकार गर्भ की भी उत्पत्ति समझिये। गर्भ में सव अवयव एक ही साथ उत्पन्न होते हैं, परन्तु अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण दीख नहीं पड़ते।

शनैः शनैः अङ्ग प्रत्यङ्ग वड़े और मोटे होने लगते हैं। इस

समय बालक माता के पेट में उकरू बैठा हुआ, हाथों को पावो से मिलाये, दोनो घुटनो को छाती और पेट से लगाये, घुटनो के बीच में माथा टेके, (यदि पुत्री है तो माता की पीठ की ओर मुख होता है और यदि पुत्र है तो माता के पेट की ओर मुख होता है) और अपने हाथ की उँगुलियो से आँख, कान, नाक, मुख सब मूँदे हुए रहता है। इस मूँदने का कारण यह है कि जिन सात झिल्लियों के भीतर गर्भाशय में बालक रहता है, उन झिल्लियो मे एक प्रकार का ऐसा पानी होता है कि यदि आँख से छू जावे तो अन्धा, कान में चला जावे तो बहरा, मुख में चला जावे तो गूँगा, पेट में चला जावे तो मुर्दा और मस्तक मे चला जावे तो बालक पागल होजाता है। इसलिये ईश्वर ने बालक को अपने सब छिद्र मूँद रखने की शक्ति दी है।

गर्भाशय का मुख आच्छादित होने से और कण्ठ कफ करके वेष्टित होने से एवं वायु का मार्ग रुके रहने से गर्भ के भीतर बालक नहीं रोता और गर्भ के भीतर बालक का श्वास लेना, डोलना तथा निद्रा आदि क्रिया माता के श्वाँसादि लेने से होती है यानि माता जो जो श्वासादिक चेष्टा करती है, वही गर्भस्थ बालक भी करता है।

गर्भ में पुत्र और कन्या होने की पहिचान—जिस स्त्री की दाहिनी आँख, कुछ बड़ी जान पड़े, दाहिनी जांघ में बल ज्ञात हो, मुख प्रसन्न, सब मर्दानी वस्तुओं से रुचि, स्वप्न में भी मर्दानी वस्तुयें देखना, आम या कमल स्वप्न में देखना और गर्भ में गोल पिण्ड सा दृष्टि पड़ना, ये पुत्र उत्पन्न होने के लक्षण

हैं। यदि गर्भ में लम्बा सा लोंदा मांस का जान पड़े और चलना फिरना इत्यादि प्रत्येक कार्य स्त्री बायें पांव से आरम्भ करे और जनानी वस्तुओं की इच्छा रहे तो जान लेना चाहिये कि पुत्री होगी। और यदि पेट में गांठ सी जान पड़े, दोनों पसुलियाँ ऊँची हो, पेट आगे को बड़ा दीख पड़े तो नपुंसक उत्पन्न होने का लक्षण है।

यदि गर्भवती के दूध में जूंवा चींटी डाल कर देखे कि वे जीती हैं और चलती हैं तो अवश्य ही पुत्र है और यदि मर जावे तो पुत्री है।

डा० सैराडर्स का कहना है कि गर्भवती स्त्रीके खून की परीक्षा कर पता लगाया जा सकता है कि उसके खून में जो तीक्ष्णता है उसकी मात्रा घटती या बढ़ती है। यदि उसकी मात्रा बढ़ती है तो उसे पुत्र होगा और यदि उसकी मात्रा घटती जाती है तो उसे पुत्री होगी। डाक्टर सैराडर्स का कहना है कि मानव शरीरपर इस युक्ति का कई बार प्रयोग किया गया है और सर्व प्रथम पशुओं पर अनुभव किया जा चुका है।

सातवें और आठवे मास में बालक का उत्पन्न होना—हम लिख आये हैं कि गर्भ में बालक का सम्पूर्ण शरीर एक ही साथ बनता है, सिर्फ उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग सूक्ष्म होने के कारण नहीं दीख पड़ते। शनैः शनैः बालक के अङ्ग प्रत्यङ्ग बड़े और मोटे होकर तैयार हो जाते हैं अर्थात् छठे और सातवें मास में

बालक पुष्ट होकर तैयार हो जाता है। जो बालक सातवें महीने में पुष्ट नहीं हो लेता वह आठवें या नवें महीने में उत्पन्न होता है। कभी २ निर्बल बालक भी सातवे महीने में उत्पन्न हो जाते हैं, परन्तु जीते नहीं। जो बालक पुष्ट होकर उत्पन्न होता है, वही जीता है। परन्तु आठवे महीने का उत्पन्न हुआ बालक कदाचित ही कोई जीता है, वरन सब ही नष्ट हो जाते हैं। कारण यह है कि सातवें महीने मे जो बालक ने उत्पन्न होने की चेष्टा की थी वह निष्फल गयी अर्थात् गर्भ से बाहर न हो सका और आठवें महीने में फिर उत्पन्न होने की चेष्टा की तो पहली चेष्टा उसको निर्बल कर डालती है, इसी से वह मर जाता है। परन्तु जो बालक नवें महीने मे उत्पन्न होता है, उसके दो कारण होते हैं। एक तो शरीर पूर्ण पुष्ट हो जाता है, दूसरे सातवें महीने की चेष्टा के पीछे आठवें महीने मे उसको विश्राम मिल जाता है।

गर्भ न रहने का कारण और उचित उपाय—गर्भ न रहने के मुख्य तीन कारण हैं। (१) स्त्री दोष—जैसे बांझ हो, जो वैद्यक शास्त्र मे अनेक प्रकार की लिखी है, मोटी अधिक हो, योनि में सूजन हो, प्रदर रोग, योनि रोग अथवा सोमरोग हो, स्त्री धर्म बराबर जारी रहता हो अथवा किसी रोग वश स्त्री धर्म से न होती हो। (२) स्त्री पुरुष दोनों का वीर्य गर्म या ठन्डा रहने पर गर्भ नहीं रहेगा, क्योंकि नियमानुकूल भिन्न २ स्वभावों का मिलना गर्भस्थापन के लिये लाज़मी है। इस अवस्था में किसी एक का स्वभाव औषधि के बल से किसी प्रकार पलट दिया

हैं। यदि गर्भ में लम्बा सा लोंदा मांस का जान पड़े और चलना फिरना इत्यादि प्रत्येक कार्य स्त्री बायें पांव से आरम्भ करे और जनानी वस्तुओं की इच्छा रहे तो जान लेना चाहिये कि पुत्री होगी। और यदि पेट में गांठ सी जान पड़े, दोनों पसुलियाँ ऊँची हों, पेट आगे को बड़ा दीख पड़े तो नपुंसक उत्पन्न होने का लक्षण है।

यदि गर्भवती के दूध में जूंवा चींटी डाल कर देखे कि वे जीती हैं और चलती हैं तो अवश्य ही पुत्र है और यदि मर जावे तो पुत्री है।

डा० सैण्डर्स का कहना है कि गर्भवती स्त्रीके खून की परीक्षा कर पता लगाया जा सकता है कि उसके खून में जो तीक्ष्णता है उसकी मात्रा घटती या बढ़ती है। यदि उसकी मात्रा बढ़ती है तो उसे पुत्र होगा और यदि उसकी मात्रा घटती जाती है तो उसे पुत्री होगी। डाक्टर सैण्डर्स का कहना है कि मानव शरीरपर इस युक्ति का कई वार प्रयोग किया गया है और सर्व प्रथम पशुओं पर अनुभव किया जा चुका है।

सातवें और आठवे मास में बालक का उत्पन्न होना—हम लिख आये हैं कि गर्भ में बालक का सम्पूर्ण शरीर एक ही साथ बनता है, सिर्फ उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग सूक्ष्म होने के कारण नहीं दीख पड़ते। शनैः शनैः बालक के अङ्ग प्रत्यङ्ग बढ़े और मोटे होकर तैयार हो जाते हैं अर्थात् छठे और सातवें मास में

बालक पुष्ट होकर तैयार हो जाता है। जो बालक सातवें महीने में पुष्ट नहीं हो लेता वह आठवें या नवें महीने में उत्पन्न होता है। कभी २ निर्बल बालक भी सातवे महीने में उत्पन्न हो जाते हैं, परन्तु जीते नहीं। जो बालक पुष्ट होकर उत्पन्न होता है, वही जीता है। परन्तु आठवे महीने का उत्पन्न हुआ बालक कदाचित ही कोई जीता है, वरन सब ही नष्ट हो जाते हैं। कारण यह है कि सातवें महीने मे जो बालक ने उत्पन्न होने की चेष्टा की थी वह निष्फल गयी अर्थात् गर्भ से बाहर न हो सका और आठवें महीने मे फिर उत्पन्न होने की चेष्टा की तो पहली चेष्टा उसको निर्बल कर डालती है, इसी से वह मर जाता है। परन्तु जो बालक नवें महीने में उत्पन्न होता है, उसके दो कारण होते हैं। एक तो शरीर पूर्ण पुष्ट हो जाता है, दूसरे सातवें महीने की चेष्टा के पीछे आठवें महीने मे उसको विश्राम मिल जाता है।

गर्भ न रहने का कारण और उचित उपाय—गर्भ न रहने के मुख्य तीन कारण हैं। (१) स्त्री दोष—जैसे बाझ हो, जो वैद्यक शास्त्र में अनेक प्रकार की लिखी है, मोटी अधिक हो, धरनि मे सूजन हो, प्रदर रोग, योनि रोग अथवा सोमरोग हो, स्त्री धर्म बराबर जारी रहता हो अथवा किसी रोग वश स्त्री धर्म से न होती हो। (२) स्त्री पुरुष दोनों का वीर्य गर्म या ठन्डा रहने पर गर्भ नही रहेगा, क्योंकि नियमानुकूल भिन्न २ स्वभावों का मिलना गर्भस्थापन के लिये लाजमी है। इस अवस्था में किसी एक का स्वभाव औषधि के बल से किसी प्रकार पलट दिया

जाय या मध्यम कर दिया जाय तो अवश्य गर्भ रहेगा। (३) पुरुष दोष—जैसे नपुंसकता वा बहुत मनुष्य ऐसे हैं जिनके सन्तान नहीं होती वा जिन्हे प्रमेह वा धातु क्षयी रोग है, ऐसे पुरुष के साथ संगम होने से गर्भ नही रहता। अल्पायु में हस्त मैथुनादि और वेश्या गमनादि द्वारा कुकर्मों के कारण जिनके वीर्य में दोष आ गया है, ऐसे पुरुप के साथ संगम होने से भी गर्भ नही रहता। ऐसी स्थिती में पुरुष को भी उचित है कि उचित औषधि कर वीर्य को शुद्ध कर ले तब गर्भाधान करे। नपुंसकता भिन्न भिन्न प्रकार की होती है, जिसका यहां पर लिखना जरूरी नहीं। किसी वैद्य से इस विपय में राय ली जा सकती है। क्योंकि सन्तान हीन पुरुष बहुधा ऐसे है कि जिनको ईश्वर ने सन्तान उत्पत्ति करने योग्य बनाया तो है, परन्तु थोड़ी सी खोट उनके शरीर में वा वीर्य में अथवा इन्द्री में है, जिनको वे नहीं जानते और यदि वे ज्ञात हो जावे तो अत्यन्त सुगमता से इस रोग को दूर करना चाहिये। अतः इसके लिये उचित है कि प्रथम प्राकृतिक नियमों को जान लें अथवा पढ़ लें और फिर स्वतः देखें कि उनमे कौनसी खोट है और उसकी चिकित्सा क्या है। किसी अनुभवी और कार्य कुशल चिकित्सक से इसकी औषधि कारवाई जा सकती है। साधारण नपुंसकता के लिये ये औषधियाँ किसी वैद्य से पूछकर सेवन की जा सकती हैं,—बादाम, केसर, फासफरस, कस्तूरी, अंबर; ऐमोनिया, चाकोलेट, मलाई, मेथी, लहसन, किशमिस, दालचीनी, अखरोट और नारियल की गिरी इत्यादि। इन चिकित्साओं से यह

आशय होता है कि किसी प्रकार रक्त का संचार शरीर में प्राप्त हो और वल उत्पन्न होवे।

गर्भ धारण कराने वाली औषधियां—साधारण दोषों में से किसी के कारण गर्भ न रहता हो तो निम्न औषधि करे सम्भव है गर्भ रह जाय। परन्तु बाँझ को गर्भ रहना असम्भव है, हो सकता है रह भी जाय।

(१) स्त्री-धर्म होने के दिन से सात दिन तक दो दो मासे हाथीदाँत का चूर्ण बराबर की मिश्री मिलाकर खाय।

(२) काले धतूरे के फूल शहद और घृत में मिलाकर खाय।

(३) एक समुद्रफल को दही में रखकर निगल जाय।

(४) हथेली भर आजवाइन फाँक जाया करे।

(५ खरैंटी, गगेरनकी छाल, महुआ, बड़के अंकुर, नागकेसर, इन सब को वराबर एक एक टंकले, महीन पीस, पाँच टंक शहद में मिला गौ के दूध के संग पन्द्रह दिन तक पीवे तो वाझ को भी पुत्र हो सकता है।

(६) मिर्च, पीपल, सोंठ, नागकेसर, दोनों कटाई, बराबर बराबर लेकर गौ के दूध में पीवे तो निश्चय गर्भ रहे।

(७) पीपल, सोंठि, मिर्च, नागकेसर, इनको महीन पीस ऋतुकाल में तीन दिन घी के संग पीवे।

(८) प्रदर रोग सोमरोग अथवा योनिरोग होने से गर्भ नही रहने पाता। ऐसी दशा में किसी अनुभवी वैद्यसे चिकित्सा करानी चाहिये।

इच्छानुकूल गुणयुक्त सन्तान उत्पन्न करना—प्रत्येक मनुष्य यह चाहता है कि हमारी सन्तान सबसे अधिक, सुन्दर, बलिष्ट, नीतिनिपुण, मिष्ठभाषी और विज्ञान विशारद आदि गुण-युक्त हो। परन्तु शोक है कि कोई माता पिता ऐसी सन्तान उत्पन्न करने के लिये, कभी यह विचार नही करते कि हम किस प्रकार ऐसी सन्तान उत्पन्न करें तथा क्योंकर हमारी सन्तान में सुन्दर और सराहनीय गुण आवें। प्रत्येक मनुष्य इस बात का तत्क्षण उत्तर यह देगा कि भला क्या यह मनुष्य के वश की बात है ? ईश्वर की माया है, उनकी आज्ञा बिना पत्ता भी नही हिलता और इसमें शङ्का समाधान करना नादानी है। परन्तु ये वाक्य उन लोगों के हैं जो अपनी बुद्धि पर जोर नहीं देते, जो अपनी भूल व निर्बलता के छिपाने के लिये प्रकृति की ओट लेते हैं और अपनी भूल से लज्जित होने के स्थान सम्पूर्ण दोष भाग्य के या ईश्वर के मत्थे मढ़ देते हैं। यदि ये ईश्वर को ऐसा ही मानते हैं तो वृथा श्रम करते हैं और वृथा ग्रास मुख को ले जाते हैं। वे नहीं जानते कि ऐसे विचार ईश्वर की महिमाके विरुद्ध हैं। ईश्वर ने ऐसे नियमों को स्थापित कर दिया है कि जिसके अनुसार संसार के प्रत्येक काम अपने आप चलते हैं। अब यह हमारा कर्त्तव्य है कि उन नियमों को समझें और उनसे लाभ उठावें।

कौन सा पिता है और कौन सी माता है जिसको क्लेश न हो, जब कि वह देखे कि उसकी सन्तान मूर्ख, पागल,व्यभिचारी, कुरूप और क्रूर है। परन्तु वे माता पिता यह नहीं सोचते कि सन्तान में

इन अवगुणों के प्रवेश करने का कारण क्या ? परन्तु उन माता पिता को सोचना चाहिये कि ये दुगु'ण उन्हीं के हैं और उन्हीं की भूल का यह फल है। परन्तु माता पिता अपनी भूल प्रकट न कर अपनी सन्तान को कायर, मूर्ख, निस्तेज और बलहीन देखकर वृथा झिड़कते हैं। वह तो निरपराध है। भूल तो हमारी है और वह तो नाहक उसका शिकार बना है। हम रोते हैं और भाग्य के हाथों अशक्तता प्रकट करते हैं, किन्तु शोक है कि हमारी बुद्धि पर पर्दा पड़ा है। जो भाग्य हमपर इतनी उपाधि करता है, वह हमारे आधीन है; वरन हम ही उसको बनाते हैं।

मैं सवा सोलह आने जोर देकर कहता हूँ कि यदि माता और पिता यह इच्छा करें कि मेरी सन्तान सुन्दर, बलिष्ट, मिष्ठभाषी तथा सुन्दर गुणयुक्त हो तो अपनी इच्छानुसार वे वैसी ही सन्तान पैदा कर सकते हैं। उसके लिये उन्हें सर्व प्रथम अपने दाम्पत्य जीवन में सुधार करना पड़ेगा, फिर नियमानुसार गर्भाधान संस्कार करना पड़ेगा, फिर माता को निम्नाङ्कित बातों पर ध्यान देना पड़ेगा सन्तान, निश्चयही सुन्दर, वलिष्ट, तेजवान और मिष्टभाषी होगी। जिस सूरत का ध्यान प्रसूता अपने मन में करेगी उसी सूरत की सन्तान उत्पन्न होगी, जैसा स्वभाव स्त्री का गर्भ के दिनों में रहेगा वैसेही स्वभाव की सन्तान उत्पन्न होगी; जो आहार, भोजन करेगी उनका प्रभाव सन्तान की आरोग्यतापर पड़ेगा; जिन इन्द्रियों से गर्भवती अनुचित काम करेगी, वे ही अङ्ग सन्तान के निकृष्ट वनेंगे। वड़े २ विद्वान और आयुर्वेद विशारदों का यही मत है।

सुन्दर सन्तान—यदि यह इच्छा हो कि सन्तान—सुरूप और सुन्दर उत्पन्न हो तो गर्भाधान से लेकर प्रसव काल तक माता सदा प्रसन्न चित्त रहे सादा और सूक्ष्म भोजन करे शृङ्गारमयी रहे, सुन्दर वस्त्र धारण करे और स्वच्छ वायु सेवन करे । विकृत और हीन अंग के दर्श स्पर्श से, भयोत्पादक बात के सुनने अथवा भयानक दृश्य या चित्र देखने से, दुर्गन्धि से, दूर की वस्तु देखने से, रात दिन कलः लड़ाई से चित्त में दुख मानने से अथवा रोने पीटने से सन्तान कुरूप पैदा होती है ।

व्यक्ति विशेष की आकृति की सन्तान—कहावत चली आती है कि सन्तान—ननसाल के वा ददसाल के अनुसार होती है। इसका कारण एकमात्र यही है कि माताके चित्त में अधिक प्रेम और ध्यान जिस ओर का रहेगा उसी प्रकार की सन्तान होगी । इस ध्यान का प्रभाव यहाँ तक देखा गया है कि पति से शत्रुओ तक की आकृति सन्तान में आ गयी है; इस कारण कि माता को अपने पति के शत्रु का ध्यान बँध गया था, बरावर उसका डर रहता था । इस वृत्ति ने स्त्रियों के बन्दर और पशु आकृत तक की सन्तान उत्पन्न कर दी है। इसलिये स्त्री को जिस व्यक्ति विशेष की आकृति और स्वभाव की सन्तान उत्पन्न करनी हो, वह अपने हृदय में बराबर उसी का ध्यान रक्खे, बरावर उसी के गुणा की चर्चा करे तथा बरावर उसीकी प्रशंसा और उसीके स्वभावानुकूल काम करे ।

इस समय मे माताओ को उचित है उचित शिक्षा, सत्परामर्श, ऐतिहासिक कहानियाँ और आदर्श पुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ें

तथा सुनें। इससे सन्तान चतुर होती है, यह बात निर्विवाद सत्य है। कितने ही आयुर्वेद विशारदों का मत है कि बालक माता के गर्भ में बहुत कुछ सीख लेता है । प्रल्हाद अपनी माता के गर्भ में था, प्रल्हाद की माता ने मुनियों से बन में धार्मिक इतिहास सुना। परिणाम क्या हुआ ? प्रल्हाद एक धार्मिक महापुरुष हुआ । अभिमन्यु का चक्रव्यूह भेदन भी संसार से छिपा नहीं है, उसने अपनी माता के गर्भ में ही चक्रव्यूह भेदन की क्रिया सुनकर समझ ली थी। मनः स्थिती के प्रभाव का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण वीर नैपोलियन का भी है। जिस समय नैपोलियन गर्भ में था, उस समय उसकी माता तेज घोड़े पर सवारी करती थी, अपने पति के साथ सैनिको के बीच मे रहती, युद्ध चर्या करती और सुनती और वीर पुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ती थी। गर्भस्थ नैपोलियन पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा। इसी प्रभावके कारण नैपोलियन अतुल योद्धा और महान रणपण्डित हुआ। अतः जो माता वीर पुत्र पैदा करना चाहे उसे वीर पुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ने और सुनने चाहिये, जो धार्मिक पुत्र पैदा करना चाहे तो उसे धार्मिक ग्रन्थ और धार्मिक महापुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ने और सुनने चाहिये। इसी प्रकार संगीत प्रेमी पुत्र पैदा करने के लिये संगीत सुनना और संगीत का अभ्यास करना चाहिये। साहित्यिक पुत्र पैदा करने के लिये साहित्यिक चर्चा में बराबर लगी रहना चाहिये तथा साहित्य का अध्ययन करना चाहिये। इसी प्रकार यदि विज्ञान-वेत्ता सन्तान उत्पन्न करनी हो तो माता को विज्ञान सम्बन्धी बातें अध्ययन तथा मनन

करनी चाहिये। प्रत्येक स्त्री ऐसा कर निश्चय लाभ उठावेगी। एक पाश्चात्य स्त्री ने अपनी इच्छानुकूल भिन्न भिन्न गुण युक्त अभी हाल में पांच सन्तानें उत्पन्न की हैं।

सूतिका गृह—सूतिका गृह—स्वच्छ हवादार और प्रकाशवान होना चाहिये। किसी मोरी वा पाखाने के पास न होना चाहिये, जैसी कि इस देश में रीति है कि घर भर में सबसे जो बुरा स्थान होता है, वही इसके लिये चुना जाता है। यदि जाड़ा होतो उस घर मे कोयलों की साधारण निर्धूम आग रहनी चाहिये। परन्तु गर्मी के दिनो में भीतर आग रखने की जरूरत नहीं, किन्तु यहाँ की स्त्रियाँ गर्मी में भी आग का पीछा नहीं छोड़ती। फलस्वरूप भीतर एक प्रकार की गैस हो जाती है, जो जहरीली हवा है और जिससे जच्चा और बालक दोनों के स्वास्थ्यपर बुरा प्रभाव पड़ता है। उस घरकी धर्ती लिपी, पुती और सूखी होनी चाहिये। उस घर में बराबर स्वच्छ हवा आने देना चाहिये, ऐसा न हो कि चारो ओर से दर्वाजे लगाकर भीतर की वायु को दूषित और गन्दी कर दी जाय। परन्तु साथ साथ जाड़े के दिनो में वा वर्षा के दिनो में यह भी ध्यान रखना चाहिये कि भीतर शर्दी प्रवेष न करसके। ऐसा करने के लिये दर्वाजा आधा लगाकर रखना चाहिये। इस घरका क्षेत्रफल कम से कम आठ हाथ लम्बा और चार हाथ चौड़ा होना चाहिये और इस गृहका तापमान ६२ से ६५ डिग्री तकका होना चाहिये यहाँ पर इतनी शान्ति रहनी चाहिये कि स्त्री सुख की नींद सो सके।

सौरिगृह के लिये आवश्यक चीजें—सौरिगृह में पहले से ये वस्तुएँ प्रस्तुत रहनी चाहिये—

(१) खूब कसाहुआ पलंग अथवा चौकी, जिसपर गुदगुदा बिछौना हो और उसपर वाटरप्रूफ अथवा आइलक्लाथ बिछा हो। इससे बिस्तर के खराब होने का भय नहीं रहता।

(२) पेट में लपेटने के लिये गाढ़ा कपड़ा और फटेहुए स्वच्छ चिथड़े तथा रेशम।

(३) पैनी कतरनी, यदि जाड़ा हो तो निर्धूम आग, गर्मी हो तो पंखा।

(४) गुनगुना पानी, तैल, साबुन, टिंचर और दो तीन मुलायम तकिये।

(५) क्लोरोफार्म और बेहोशी दूर करने की दवा।

(६) घड़ी और थर्मामिटर।

(७) सौरिगृह में दीपक ऐसे स्थान में रक्खाजाना चाहिये जो जच्चा के सम्मुख न हो तथा दीपक अरण्डी वा कड़वेतैल का होना चाहिये। मिट्टी के तैल का दीपक स्वास्थ्य के लिये हानिकर है।

(८) सौरिगृह में वहुत स्त्रियों को न रहने देना चाहिये और स्त्री के पति को तो वहाँ कदापि न जानेदेना चाहिये।

(९) प्रसूती की माँ तथा सास वा सखी सहेलियों का वहाँपर रहना वहुत ही आवश्यक है, परन्तु दो तीन स्त्रियों से अधिक न रहने देना चाहिये।

धाय—प्रथम तो प्रकृति के कामों में वाधा डालने की जरूरत

ही नहीं। तौ भी एक ऐसी धाय की आवश्यकता पड़ती है जो प्रसूता को भलीप्रकार प्रसव करालेवे, जो काम में चतुर और दक्ष हो, जच्चा से स्नेह और मधुर वचन से बोले, टहल और सेवा करके उसका क्लेश मिटासके तथा जो बहिरी, गूँगी और कानी न हो। दाई को सौरी में भेजने के पूर्व उसके कपड़े बदलवा देने चाहिये और हाथ की उँगुलियों के नख कटवा देने चाहिये। नख बड़े रहने से गर्भ स्थान में चोट लगने का भय रहता है। प्रायः ऐसी स्त्रियाँ जो धाय का काम करती हैं, मैली कुचैली साड़ी पहिने हुए ही प्रसव करा-दिया करती हैं, जो जच्चा और बालक दोनों के स्वास्थ्य के लिये हानिकर है। स्वास्थ्य का तकाजा है कि इससमय के सारे काम स्व-च्छता के साथ होने चाहिये। अतः उचित है कि सौरिगृह में प्रवेश करनेवाली धाय स्वच्छ कपड़ा पहिने रहे।

प्रसव की तैयारियाँ—(१) आंतों का हर समय साफ रहना नितान्त आवश्यक है। यदि प्रसव की प्रथम अवस्था में ही कब्जि-यत हो तो हल्की जुलाब, जैसे चम्मचभर या कम जैसा मुनासिब समझाजाय, अण्डी के तैल का सेवन कराना चाहिये। आंतों के साफ होने से आसपास के अवयवों को अधिक स्थान मिलेगा और इससे प्रसव वेदनायें कम होंगीं।

(२) इससमय जच्चा को ढीलाढाला वस्त्र पहनना चाहिये, जो आवश्यकता पड़नेपर कमर तक उठाया जा सके।

(३) प्रसव के पहले स्त्री का चित्त शान्त रहना आवश्यक है।

(४) प्रसवकाल के समय ठण्डा पानी, खटाई, कफकारी

वस्तुओं से प्रसूता को बचना चाहिये और दूध, बादाम अधिक सेवन करना चाहिये।

प्रसव या नया जन्म ?—यदि प्रसूता अपने हाथ पाँव से कुशलपूर्वक जापे से उठजाय तो उसका नया जन्म समझना चाहिये। नहीं तो अनेक रोग, जैसे-प्रसूत, लूंज और योनि का बाहर निकल कर बढ़आना आदि रोग हो जाते हैं। इसलिये इसविषय की जानकारी प्रायः सभी बहनों को होनी चाहिये।

प्रसव का प्रथम चिन्ह—प्रायः यह होता है कि प्रसव के एक या दो दिन पहले स्त्री अपने को पूर्वापेक्षा अधिक स्वस्थ अनुभव करती है। वह हलकी सी मालूम होती है और गर्भस्थ बालक नीचे लटक आता है। वह अधिक प्रसन्न मालूम होती है और स्वच्छता के साथ सास ले सकती है और घर के समस्त कार्य करने में उसका जी लगने लगता है। प्रसव होने के कुछ दिन पहले से और कभी कुछ घण्टे से पहले से बालक नीचे लटक आता है। उससमय गर्भ पेट के निचले हिस्से में आजाता है। यही कारण है जो उसे अधिक राहत मिलती है। इसप्रकार लटक आनेवाले गर्भ में एक असुविधा होती है। वह लटककर मूत्राशयपर आ जाता है। इससे मूत्राशयपर दबाव पड़ता है, मूत्राशय को उत्तेजना मिलती है और बराबर पेशाब करने की हाजत मालूम होती है परन्तु पेशाब कम होता है। इसलिये गर्भ का लटक आना प्रसव सूचक चिन्हों में सबसे प्रथम चिन्ह है और यह आगामी घटनाओं की सूचना देनेवाला प्रथमदूत कहलाता है। इस समय जननेन्द्रियमें पीड़ा, न.

कन और कफ सदृश पानी भी निकलता है। प्रसव का समय गर्भ रहने से २८० दिन पीछे गिनाजाता है, यद्यपि किसी किसी स्त्री को इससे आगे पीछे भी हुआ करता है।

प्रसव का द्वितीय चिन्ह—समय पूर्ण होने के पीछे बालक गर्भाशय से बाहर निकलता है। गर्भाशय २०-२५ मिनिट के पीछे बार बार सिकुड़ता है, इसी कारण जंतको दर्द हुआ करता है। जो स्त्रियाँ आरोग्यता के नियमो का पालन करती हैं, उन्हे जन्तकी पीड़ा अत्यन्त कम दुःख पहुँचाती है।

गर्भवती स्त्री को पहिले हलकी, किन्तु अधिक देर रुकने वाली पीड़ायें होती है। फिर रजोदर्शन प्रारम्भ होता है। यह रज और कुछ नहीं, केवल वह पदार्थ है जिसने गर्भाधान के समय गर्भाशय का द्वार रूंधदिया था। इस रज के साथ कभी कभी रक्त भी मिश्रित होता है। जब रजोदर्शन होनेलगे तब समझना चाहिये कि प्रसव का प्रारम्भ हो चला। प्रसव सूचक चिन्हों मे एक यह भी है कि वारम्वर मूत्राशय को खाली करने की आवश्यकता प्रतीत होती है। इस समय वारम्बार उठनेवाली पीड़ायें प्रारम्भ होती हैं। पीड़ायें कभी दो दो घण्टों में कभी घण्टे घण्टे में, कभी आधघण्टे में ही होने लगती है। इस प्रकार की पीड़ओ मे वाधा न डालनी चाहिये। इस स्थिती में घर में धाय का रहना अच्छा है। इस समय कभी कभी पीड़ायें इतनी कठिन हो जाती हैं कि देह कांपने लगती है और दांत कटकटाने लगते हैं। जब स्त्री का शरीर पीड़ा के कारण कांपने लगे तो उसके शरीरपर एकाध ऊन की कम्बल डालदेनी चाहिये।

जब वह इस प्रक्रिया से गर्म हो उठे और उसके शरीर से पसीना छूटने लगे तब धीरे धीरे उसके ऊपर से कम्बल अलग करदेनी चाहिये। उसे अधिक गर्म न रहना चाहिये, क्योंकि इससे वह दुर्बल हो जायगी और उसकी प्रसव पीड़ा और भयङ्कर हो जायगी।

प्रसव के समय की प्रारम्भिक अवस्था से ही बीमारी आ जाती है और बादतक बनी रहती है। बीमारी यहाँतक बढ़ जाती है कि स्त्री को वमन होने लगते हैं और वह अपने आमाशय में कुछ रख ही नही सकती। बीमारी प्रसव के बाद कुछ दिनो में अपने आप बन्द हो जाती है। ऐसी अवस्था में कुछ लोग शराब देते हैं, परन्तु जबतक डाक्टर सलाह न दे तबतक शराब देना हानिकारक होता है।

इस समय कितनी स्त्रियाँ उसे जोर लगाकर प्रसव करने के लिये कहती हैं परन्तु यह शिक्षा कभी न माननी चाहिये। इससे प्रसव पीड़ा कम होने की अपेक्षा बढ़ेगी। जिससमय पीड़ायें होती हो उससमय स्त्री को लेटे न रहकर इधर उधर टहलना चाहिये, क्योंकि एक ही जगह पड़ी रहने से जंघाओं और पैरों मे ऐंठन शुरू होजाती है। इसलिये हम स्त्री के लिये चलने फिरने की आवश्यकता बतलाते हैं। प्रसव के ठीक अवसरपर ऐंठन बहुत दुखद हो जाती है। उस समय ऐंठन और पीड़ा दोनो साथ ही साथ होती हैं। विचारी स्त्री को दो दो विपत्तियों का सामना करना पड़ जाता है। किन्तु इस प्रकार की ऐंठन मे किसी प्रकार का भय नहीं रहता। यह तो इस बातका चिन्ह है कि बालक अग्रसर हो रहा है। इसीसे नसोंपर जोर पड़ता है और ऐंठन पैदा होती है। ऐसी अवस्था में धाय को चाहिये

कि अपने हाथ सेंककर उन अंगोंपर रगड़े जहाँ ऐंठन होती हो।

प्रसव प्राकृतिक आयोजन है, इसलिये उसमें अकारण हस्तक्षेप न करना चाहिये और यदि ऐसा किया गया तो स्त्री को अपनी खैर न समझनी चाहिये। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि जिस स्त्री को कोई सहायता न दी जाय वह प्रसव के बाद शीघ्रता से स्वस्थ हो जायगी और जिस स्त्री को अनेक प्रकार की सहायतायें उपलब्ध होंगी उसे स्वस्थ होने में विलम्ब होगा। प्राकृतिक प्रसव में किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ती।

प्रसव सम्बन्धी आवश्यक जानकारी—यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक स्वस्थ स्त्री के प्रत्येक साधारण प्रसव में प्रकृति बिना किसी मनुष्य की सहायता के ही बालक को जन्म देती है। यहकाम मूर्खों का है कि प्रकृति के कामों में बिना कारण सहायता देने के लिये दौड़ते हैं। प्रकृति की सहायता! भला इस मूर्खता की भी कोई सीमा है। अतः प्राकृतिक प्रसव मे उतावली करना अथवा किसी प्रकार का हस्तक्षेप करना अत्यन्त वर्जित है। यदि ऐसा कोई कार्य प्राकृतिक प्रगति में बाधा डालने के लिये कियाजाय तो उसका परिणाम बड़ा भयङ्कर होता है।

सूतिका गृह में रहनेवाली स्त्री को यह सदा ध्यान रखना चाहिये कि वह जितना अधिक धैर्य रक्खेगी उतनी ही उसकी अधिक पीड़ा कम होगी। इस समय की पीड़ाओ में न तो स्वयं हस्तक्षेप करे और न किसी धाय वा स्त्री को ही करने दे। ये पीड़ायें अच्छाई के लिये होती हैं, उनका सहन शान्ति और धीरता के साथ करना

चाहिये । यदि इन नियमों का पालन भलीभाँति हुआ तो बदले में उसे सुन्दर जीवित बालक उत्पन्न होगा । सूतिकागृह में रहनेवाली स्त्री के लिये इससे अधिक महत्व का और विषय ही नहीं है। यदि कोई अच्छी धाय हुई तो वह किसी स्त्री को अनुचित हस्तक्षेप कदापि न करने देगी।

हम अनुचित हस्तक्षेप की बातें करते है । अनुचित इसलिये कि कभी कभी उचित हस्तक्षेप होता है। कभी २ ऐसी परिस्थिती आ उपस्थित होती है कि डाक्टरों को प्रसव कराने के लिये सहायता देने को आवश्यकता पड़जाती है। ऐसी अवस्थायें आ पड़नेपर स्त्री का साराभार डाक्टरों के सुपुर्द करदेना चाहिये।

पीड़ाओं और जन्म के बीच कुछ समय लगता है। प्रथम प्रसव मे प्रायः ४ या ५ घण्टे लगते हैं और बाद के प्रसव में तीन घण्टे ही लगते हैं। प्राकृतिक प्रसव तीन अवस्थाओ मे विभक्त किया जा सकता है।

(१) प्रारम्भिक अवस्था, जिसमें गर्भाशय नीचे लटकआता है और रजोदर्शन गिरने लगता है।

(२) वृद्धिगत अवस्था, जिसमें रह रहकर पीड़ायें उठती हैं और गर्भाशय का मुख धीरे धीरे खुलता या बढ़ता है, यहाँ तक कि वह इतना काफी बड़ा हो जाता है कि उससे गर्भस्थित बालक का शिर निकल सके।

(३) पूर्णावस्था, जिसमें प्रसव वेदना बढ़जाती है और बच्चा बाहर निकलता है।

प्रारम्भिक अवस्था में स्त्री को कमरे में घुसी न रहकर टहलना चाहिये। दूसरी वृद्धिगत अवस्था में यह आवश्यक हो जाता है कि स्त्री अपने कमरे में ही रहे। किन्तु इस अवस्था में भी यह ध्यान रखना चाहिये कि स्त्री को लेटा ही न रक्खाजाय। उसे इधर उधर घूमते रहना चाहिये और यदि आसपास के कमरोंतक टहल आया-जाय तो और भी लाभप्रद है।

पहली और दूसरी अवस्था में यह आवश्यक नही होता कि जच्चा की पीड़ायें कम करने का प्रयत्न किया जाय। इस प्रकार का प्रयत्न हर हालत में वर्जित है। यद्यपि कभी कभी अयोग्य धाये इस प्रकार की शिक्षा दे दिया करती हैं, तथापि स्त्री को इससे बचे ही रहना चाहिये। इसके अतिरिक्त जिस समय गर्भाशय का दुख बढ़ रहा हो उसी समय प्रसव करने का प्रयत्न करना कोई लाभ नहीं पहुँचा सकता। वास्तव में उस समय उसकी कोई उप-योगिता ही नही होती। इस समय गर्भाशय इस योग्य होता ही नहीं कि गर्भस्थित बालक को बाहर निकाक सके। यह तो एक मात्र उसके बढ़ने की अवस्था होती है। ऐसी अवस्था में यदि प्रसव कराने के लिये किसी प्रकार का दबाव आदि डाला जाय या किसी अन्य प्रकार का हस्तक्षेप किया जाय तो पहले तो वह प्रसव ही न हो सकेगा और यदि दुर्भाग्य से हो भी गया तो उसका परि-णाम बड़ा ही भयङ्कर होगा। गर्भाशय के फट जाने का भय तो ऐसी अवस्था मे नितान्त साधारण भय है। इसके अतिरिक्त भी अन्य कई प्रकार के भय इससे हो सकते हैं। इसलिये किसी भी

स्त्री को इस प्रकार की मूर्खता में न पड़ना चाहिये।

तीसरी अथवा पूर्णावस्था में यह आवश्यक होता है कि स्त्री अपने बिछौने पर लेटी रहे और प्रसव को बराबर निकालने का विचार करती रहे। 'विचार' शब्द हम जान बूझ कर लिख रहे हैं, क्योंकि उस समय भी हम यह सलाह नहीं देते कि प्रसव करने के लिये कोई विशेष प्रयत्न किया जाय। केवल विचार करने से ही हमारी धारणा है उतना प्रयत्न हो जाता है, जितना कि प्रसव कराने के लिये इस अवस्था में आवश्यक होता है।

यदि प्रसव काल के निकट आने पर पीड़ायें बहुत ही कठिन हो जाय और उस समय स्त्री चिल्लाने के लिये विवश हो रही हो तो उसे चिल्लाने देना चाहिये। इससे उसे कुछ शान्ति मिलेगी। मूर्ख और अबोध धायें चिल्लाने को हानिकर बताती हैं, किन्तु वास्तव में यह बात नहीं है।

प्रसव गिराने की रीति—प्रसव को गिराने के लिये प्रयत्न करने की यह रीति है कि श्वास रोककर इस प्रकार ज़ोर लगावे जैसा कि उदरस्थित मल निकालने में लगाया जाता है। इस रीति से प्रसव गिराने वाली स्त्री को अधिक थकावट नहीं होती। प्रसव के समय यदि कोई धाय अपने हाथ की हथेली स्त्री की रीढ़ के निचले भाग मे नीचे रक्खे और पीड़ाओ के समय ज़ोर से उस भाग को दबा दे तो बहुत आराम मिलता है। जब बालक का सिर निकलने लगता है, तब स्त्री को ऐसा मालूम होता है जैसे उसकी पीठ ही गिरी जा रही है। उस समय यदि धाय हाथ से उ

को दबाये रहे तो कितना सुख मिल सकता है, यह सहज ही में अनुमान किया जा सकता है।

बालक का पेट में मर जाना—कभी कभी ऐसा भी होता है कि बालक पेट में ही मर जाता है। ऐसी दशा में किसी अच्छे डाक्टर को बुलाकर उसको तुरन्त निकलवाने की चेष्टा करनी चाहिये। बालक के पेट में मर जाने की पहिचान यह है कि बालक पेट में घूमता नहीं है। पेट में लोथ सी हो जाती है। स्त्री की छातीका दूध सूख जाता है और उसी समय वे ढीली पड़ जाती हैं।

धाय सम्बन्धी जानकारी—सच्ची वा झूठी पीर-(१) धाय को पहले यह जान लेना चाहिये कि गर्भिणी को पीर जनने की है वा किसी और कारण से, अथवा सच्ची पीर है वा झूठी। क्योंकि पीर दो प्रकार की होती है। एक तो प्रसूताकी पीर जिसके लक्षण पहले लिख दिये गये हैं, दूसरी पेट या दूसरी बीमारी की, जिसके भिन्न भिन्न लक्षण होते हैं। यदि पीर प्रसव की न होकर दूसरी विमारी की हो तो उसका उचित उपाय करवाना चाहिये। जब यह निश्चय हो जाय कि पीर प्रसव की है तो उस स्त्री को कसे हुए पलंग वा चौकी पर लिटावे। यदि पीठ की पीर हो तो पीठ के पीछे तकिया रखकर हौले २ तकिया को दबावे। जो कपड़ा, धोती, लँहगा वा साड़ी जच्चा पहिने हुए हो उसे ढीला कर दे, हौले हौले टहलावे, शौच हो आने दे पर मूत्र त्याग न करने दे, क्योंकि इससे प्रसव में बहुत सहायता मिलती है।

बालक का हाथ, पांव, व शिर के बल निकलना—

चित्र नं० १ चित्र नं० २

शिर के बल वालक का पैर के वल निकलना
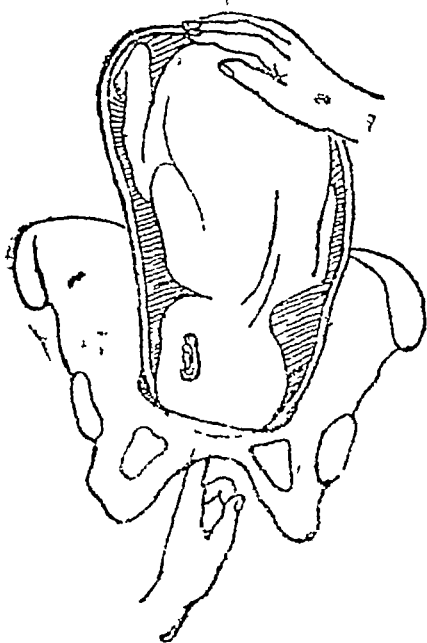
(२) वालक वहुधा शिर की ओर से निकला करता है। इसमें जच्चा को भी थोड़ा कष्ट होता है और कोई बात डर की नहीं रहती। परन्तु वालक का दूसरी ओर से निकलना माँ को हानि पहुँचाता है। जब वालक का शिर नीचे को होता है तब वह वाईं ओर से दाईं ओर घूमता है और वाईं ओर स्त्री की भारी रहती है। परन्तु जिस स्त्री की दाईं ओर भारी रहे और बालक दाईं ओर से वाईं ओर घूमे तो वालक पाँव के वल उत्पन्न होता है, जिसको

विष्णुपद कहते हैं। और यदि दोनों ओर भारी हो और घूमे नहीं तो बालक आड़ा पड़ा रहता है और हाथ के बल उत्पन्न होता है। इसमें स्त्री को महाकष्ट होता है। यहाँ तक कि दश स्त्रियों में दो चार ही बचती हैं। ऐसी स्थिती में यदि बालक अपने आप ही घूम-घाम कर पांव या मस्तक के बल आ गया तो भला जानो अथवा दाहिना हाथ डाल कर चतुराई से बालक के हाथ तो ऊपर को भीतर कर दिये जांय और पाँव को खीच कर निकाल लिया जाय तो बालक उत्पन्न हो जायगा और स्त्री को केवल कष्ट ही कष्ट होगा परन्तु प्राण बच जांयगें। यदि इस समय किसी डाक्टरनी को बुला लिया जाय तो और भी अच्छा। वह अपने यन्त्रों के सहारे बालक जना देगी और जच्चा को विशेष कष्ट नहीं होने पायगा।

चित्र नं० ३
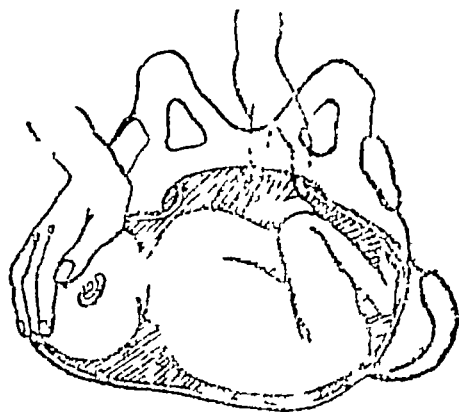
इस चित्र में हाथ के बल आड़े पड़े हुए बालक का हाथ भीतर कर पैर पकड़ कर निकालने की चेष्टाकी जा रही है।
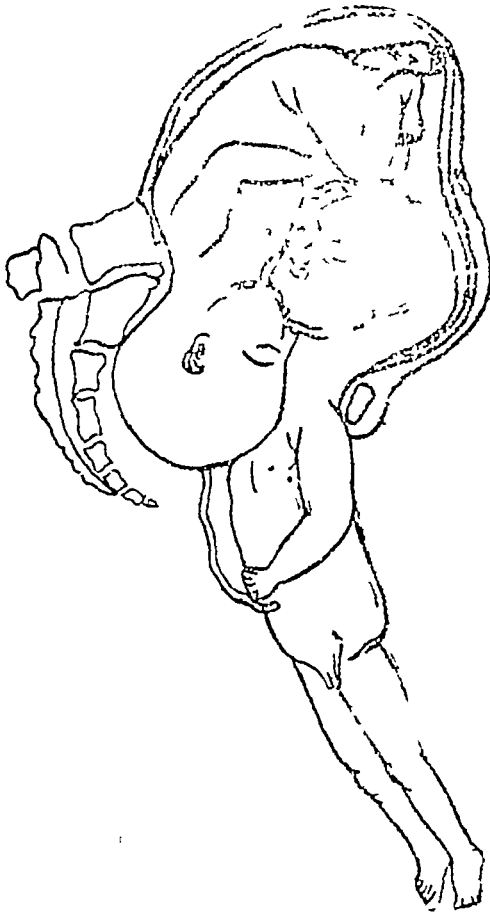
चित्र नं० ४

दो सन्तानों की उत्पत्ति

इन में एक के पैर बाहर आ गये हैं, किन्तु दोनों के मस्तक प्रसव-मार्ग में रुके हैं।

चित्र नं० ५
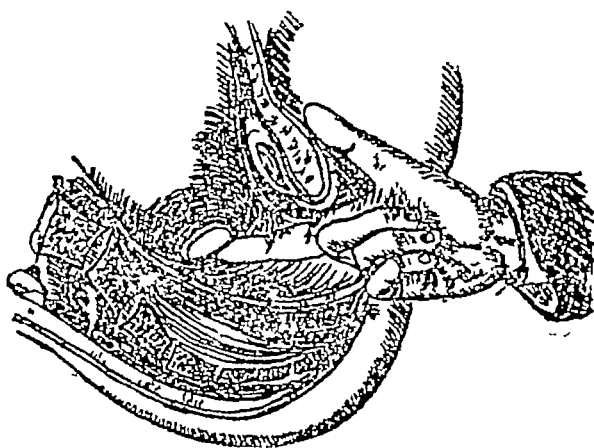
हाथ डाल कर योनि-मार्ग में सन्तान-परीक्षा

इन उपर्युक्त तीन बातो के निश्चय करने के लिये धाय को चाहिये कि नारियल का तैल हाथ में चुपड़ कर और भीतर डाल कर देख ले कि बालक मस्तक के बल है वा पाँव के अथवा हाथ के बल आड़ा है। भीतर हाथ डालने से जान पड़ेगा कि, पहले हाथ में बालक का कौन सा अंग आता है। जो अङ्ग बालक का पहले हाथ में आवे, उसी अङ्ग के बल बालक पैदा होगा। इस लिये एक बार ठीक निश्चय कर लेना चाहिये कि बालक किस ओर से है। बार बार हाथ न डालना चाहिये। इससे जच्चा को बड़ा कष्ट होता है और रोग भी उत्पन्न हो जाता है। एक बात और याद रखने की है कि जो बालक छठे महीने के पहले उत्पन्न होते हैं, वे बहुधा हाथ व पांव के बल ही उत्पन्न होते है। बालक के शिर में पानी उतर आने से भी बालक हाथ व पाव के बल ही उत्पन्न होते हैं, क्योंकि

बालक का मस्तक पानी उतर आने के कारण तिगुना बड़ा जाता है ।

हूल व वेग कराना—(३) जो दाइयाँ मूर्ख होती है प्रसव के समय जच्चा को अपने पैरों पर बिठा कर 'हूल' वा 'वे दिलाती हैं, परन्तु ऐसा करना बहुत ही बुरा है, इससे जच्चा बहुत हानि उठानी पड़ती है।

प्रसव के समय जच्चा की सहायता—(क)(४) प्रसव समय अपने हाथ की हथेली जच्चा की रीढ़ के निचले भाग में न रक्खे और पीड़ाओं के समय जोर से उस भाग को दबा दे तो ज को बहुत आराम मिलता है । जब बालक का शिर निकलने लग है तब जच्चा को ऐसा मालूम होता है जैसे उसकी पीठही गिरी रही है । उस समय यदि धाय हाथ से उस हड्डी को दबाये रव तो कितना सुख उस जच्चा को मिल सकता है, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है ।

(ख) सुतहड़ फट जानेपर जच्चा के जांघों के बीच में ए तकिया दे देना चाहिये, जिससे बालक का मस्तक निकलने मे सुभी हो और जच्चा के कमरपर हौले हौले हाथ फेरते रहना चाहिये ।

(ग) जिस स्त्री को पहलौठी का बालक होता हो उसकी वड़ी सावधानी रखनी चाहिये ।

(घ) जब बालक का मस्तक निकल आता है और देह निकलने में कुछ देर होती है तब बहुत सी धाये बालक का मस्त पकड़कर खींचती हैं । सो यह कभी न करना चाहिये । मस्तक

संग एक नस होती है, वह खिंच आती है और उसके खिचआने से बालक तुरन्त मरजाता है। ऐसी दशा में जच्चा की जांवों के बीच एक तकिया लगादेना चाहिये।

ऐसी दशा में मस्तक खींचकर निकालने की यहरीति है कि एक स्त्री जच्चा के पेट को दाब ले और एक बालक के मस्तक को एक हाथ से पकड़कर और उसके बगलाऊ दूसरे हाथ की दो वा तीन उँगुली लगाकर हौले हौले खिसका लावे। इस प्रकार खिसकाने से नस नहीं खिंचनेपाती और न जच्चा को दुख होता है।

पैदा होते ही बालक का न रोना और उचित उपाय।

(५) बालक पैदा होते ही रोने लगता है और यदि न रोवे तो जानना चाहिये कि अभी हाफ रहा है। इससे नहीं रोता है। बालक जबतक हाँफता हो तबतक नार न काटना चाहिये। हाँफनो शीघ्र बन्द करने के उपाय ये हैं कि बालक के मुख की लार निकालकर उसके मुखपर ठण्ढेपानी के छींटेदेवे तो बालक रोनेलगेगा। और जो न रोवे तो गलेतक उसकी देह किसी ठण्ढेपानीके बासनमे डुबोदेनी चाहिये और तत्काल निकाललेनी चाहिये। इससे बालक चौंककर रो उठेगा। यदि इससे भी न रोवे तो एक वासन में ठण्ढा और दूसरे में गुनगुना पानी रक्खे, ऐसा कि बालक सह सके। एक वेर बालक को ठण्ढेपानी में और दूसरी वेर गुनगुना पानी में बहुत थोड़ी देरतक रक्खे अर्थात् सिर्फ दो मिनटतक ही और केवल मस्तक के नीचे का ही धड़ रक्खे। ऐसा करने से बालक चैतन्य हो जावेगा और रोने लगेगा। जल ऐसा गर्म होना चाहिये कि जैसा कि जाड़े

बीर दुर्गावती

पृष्ठ सं० ३४४

के दिनोंमें प्रातःकाल के समय कूएँ का जल उष्ण रहता है। और ठंएढा पानी भी ऐसा होना चाहिये जिसमे हाथ भी न दिया जा सके अर्थात् तुरन्त का ताजा पानी होना चाहिये।

यदि इससे भी बालक न रोने और बालक को चेत न हो तो उसके नाक के तालू को सुरसुरावे और हौले हौले चूतड़ और पीठ को थपथपावे वा कपड़ा जलाकर नाक में दूर से धूँआ दे वा बालक को दोनो हाथो पर औंधा लिटाकर जल्दी जल्दी हिलावे । ऐसा करने से निश्चय चेत हो जायगा और बालक रोने लगेगा।

नार काटना और बालक को घी, शहद चटाना—(६) जब बालक उत्पन्न हो चुके तो उसके गले मे उँगुली डालकर जो लार हो उसे निकाल देना चाहिये और मुख पोछ देना चाहिये, ताकि सास लेने लगे। इसके पीछे नार काटना चाहिये! नार काटने के लिये पैनी छुरी वा कतरनी होनी चाहिये और थोड़ा डोरा वा रेशम वा पाट होना चाहिये और थोड़ा सफेद कपड़ा भी। नार काटने की यह रीति है कि बालक की टूंडी की ओर तीन उँगुल नार छोड़कर फीते से बाँध दे और आध उँगुल और छोड़कर माँ की ओर भी बांध दे। इन दोनों गाठों के बीच मे से काट दे। बालक की ओर को गाठ को यो बाधते हैं कि लोहू बहुत न बहे, जिससे निर्जीव होकर वह मर न जाय और माँ की ओर गाँठ यों बांधते हैं कि न जाने अभी प्रसूता के पेट में दूसरा बालक और हो, जैसा कि जोड़ा बालक बहुधा हुआ करते हैं। पर नार दोनो का एक ही होता है और ऐसे बालक एक साथ नहीं होते, थोड़ी बहुत देर आगे

पीछे हुआ करते हैं। नार काटने के पहले नार को शहद, घी और सैंधा नमक से मलकर शुद्ध करले तब काटे अथवा सोने व चादी के बुझे हुए जल से नार को शुद्ध करले तब काटे। यदि बालक विशेष कमजोर हो तो माँ की ओर से नार का लोहू सूतकर बालक की टूंडी में कर दे, पीछे काटे अथवा चार या पाँच बूंद उसकी बालक को चटा दे। माँ का लोहू बालक को बहुत बल देता है, क्योंकि पेट में बालक इसी को खाकर पलता है। नार को काटकर लकड़ी के कोयलो मे पिसी हुई कस्तूरी (जो पहले से इस प्रकार तैयार रखना चाहिये-दो चावल, चोखी कस्तूरी एक एक मासे कोयलों मे महीन पिसी हुई) लगा दे और बालक को घी, शहद, अनन्तमूल और ब्राह्मी के रस में थोड़ा स्वर्ण चूर्ण मिलाकर चटा दे। यह महागुणकारी है। इससे बालक का मल त्याग हो जाता है और अनेक गुण होते है। यदि सब न मिल सके तो केवल शहद और घी ही सोने की सलाखा (सलाई) से चटा दे। यदि बालक सतमासा या बहुत ही दुबला पतला होवे तो रूई के गाले को कड़वे तैल मे भिगोकर उसमे दो वा चार दिन तक बालक को रक्खे। इससे बहुत पोस पहुँचता है।

नार काटने के बाद बालक को स्नान कराना—(७) नार काटने के बाद गुनगुना पानी और साबुन से बालक को नहला देवे। इससे मैल कुचैल साफ़ हो जाता है। अत्यन्त गर्म जल से न नहाना चाहिये। इसलिये पानी को ऐसा गर्मकर लेना चाहिये जैसा कि जाड़े के दिनों में कूप का उष्ण जल। और साबुन लगाते समय

ध्यान रखना चाहिये कि साबुन आंख में न जाय।

बालक के अङ्ग प्रत्यङ्ग की जॉच—(८) जब बालक उत्पन्न हो जाय तब दाई को यह भी देखना चाहिये कि बालक के अङ्ग प्रत्यङ्ग सब ठीक हैं अथवा बेडौल हैं या कोई अङ्ग किसी से जुड़ा तो नहीं है, जैसा कि बहुधा हाथ पांव की उँगुली जुड़ी हुई हुआ करती है। यदि कोई अंग जुड़ा दीख पड़े तो तत्काल तीव्र नस्तर से चीर देना चाहिये, विलम्ब तनिक भी न करना चाहिये। परन्तु वही धाय चीरे जो चीर फाड़ के काम में चतुर हो। इसी प्रकार यदि आँखो के पलक जुड़े हो तो उनको भी चीर कर अलग कर दे। यदि गुदा का छिद्र बन्द होवे तो उसको भी खोल देना चाहिये। और यदि कोई अङ्ग बेडौल हो, जैसे नाक चिपटी हो तो नाक को दोनों हाथों की उँगुलियों से सूतकर ऊपर को उठाकर ऊँची सुडौल कर देनी चाहिये। इसी प्रकार मस्तक को दोनो हाथों से दाबकर सीधा और सुडौल कर देना चाहिये। इस समय थोड़ी ही सावधानी और उपाय से कुडौल अङ्ग सुडौल हो सकता है, क्योंकि इस समय देह की हड्डी तक ऐसी नरम होती है जैसी हरे वृक्ष की कोमल टहनी, इच्छानुसार जिधर को चाहो झुका दो।

औनार का गिरना—(६) बालक उत्पन्न होने के पीछे स्त्री के पेट से एक मांस की सी थैली निकलती है, जिसको "औनार" कहते हैं। जब तक यह गिर न ले तबतक स्त्री के पेट पर हाथ रक्खे रहना चाहिये। यदि औनार गिरने में देर लगे तो भलेही लग जाय परन्तु खींचकर कभी न निकाले, जैसा कि मूर्ख दाइयाँ करती हैं।

इस समय पेट हाथ से न दावा जायगा तो लोहू बहुत वहेगा। यदि औनार अपने आप न निकले तो हौले से नार कई बेर खींचने से चार पांच वेर की देर में निकल आवेगा। और यदि यों भी न निकले तो हाथ में नारियल का तैल चुपड़कर और पेट में डालकर औनार को इकट्ठा करके बहुत हौले हौले निकाल ले और हाथ से पेट को दबाये रक्खे। जब यह निकल आवे तब एक दुपट्टा चौतह करके पेड़ू से लेकर कलेजे तक कस के लपेट देना चाहिये। इससे लोहू निकलना भी बन्द हो जाता है, पेट भी नही डोलता, स्त्री को बहुत चैन पड़ती है तथा गर्भाशय डिगने नही पाता और अपने स्थान पर आ जाता है। इस कपड़े को खोलकर दूसरे तीसरे दिन बांधती रहे, जिससे नसे भी बहुत न खिचने पावें। बहुत सी स्त्रियों बालक उत्पन्न होने के पीछे जच्चा को बैठा देती हैं, जिसका यह अभिप्राय है कि सब लोहू निकल आवे। परन्तु ऐसा करना हानिकर है, इससे स्त्री निर्बल हो जाती है। क्योंकि बहुत लोहू निकलना अच्छा नही होता।

प्रसव के बाद सुख की नींद—(१०) इसके बाद लेटे लेटे ही जच्चा को धो पोंछ दे और सब स्त्रियों को सौरिगृह से निकाल कर प्रकाश को मन्दा कर दे तथा जरूरी हो तो द्वार पर पर्दा करदे, जिससे जच्चा को सुख की नींद आ जाय।

जब जच्चा सोकर उठे तो मूत्र करा दे। यदि मूत्र न आवे तो गर्मपानी मे कपड़ा भिगो भिगोकर और निचोड़कर पेडू पर रखती

जाय। मूत्र थोड़ी देर में उतर आयगा। यदि इस उपाय से भी मूत्र न उतरे तो डाक्टर से उपाय कराना चाहिये।

क्लोरोफार्म का प्रयोग—(११) धाय का काम करने वाली स्त्री के लिये क्लोरोफार्म बड़े ही महत्त्व की वस्तु है। प्रसव के समय डाक्टरों द्वारा क्लोरोफार्म का प्रयोग बिना संकोच के किया जा सकता है? हाँ, पर यह आवश्यक है कि प्रयोग अनुभवी, शान्त और विचारशील डाक्टरों द्वारा होना चाहिये।

क्लोरोफार्म सूँघने से थोड़ी या बिल्कुल बेहोशी आ जाती है और जितनी देर उसका नशा रहता है उतनीदेर प्रसव की वेदना का अनुभव नही होता। क्लोरोफार्म का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि एक बार मे कुछ मिन्टों के लिये बेहोश रखने योग्य क्लोरोफार्म सुंघाना चाहिये। हाँ, आवश्यकता पड़नेपर बार बार करके कुछ घण्टों तक स्त्री को उस नशे में रक्खा जा सकता है। साधारण प्रसव में क्लोरोफार्म का प्रयोग न करना चाहिये। प्रसव पीड़ायें कठिन होने पर इसका प्रयोग किया जा सकता है। क्लोरोफार्म का प्रयोग करने से एक लाभ और भी होता है कि प्रसव से जो बालक जन्मेगा, वह प्रायः हृष्ट पुष्ट होगा और उसपर माता को दिये जाने वाले क्लोरोफार्म के नशे का कोई प्रभाव न पड़ेगा। यह बात बड़े महत्त्व की है।

प्रसव के बाद बारूद आदि की आवाज—इससे जच्चाको बड़ी बेचैनी होती है। इस समय बन्दूक वा बारूद की आवाज से कोई लाभ नहीं। यदि प्रसव के समय ऐसी आवाज की जाय तो कुछ

लाभ भी है कि प्रसव में इसके शब्द से सहायता मिलती है। परन्तु प्रसव होने के बाद इन आवाजों से जच्चा को वृथा क्लेश देना है।

प्रसव के बाद बालक को घुट्टी देना—बालक को पैदा होने से ६ दिन तक दूध के अतिरिक्त गूला वा घूटी और देनी चाहिये। क्योंकि इनदिनों में माँ का दूध बहुत ही निर्बल होता है। गूला इसे कहते हैं कि एक तोला गुड़ में थोड़ी सी अजवाइन और पानी डालकर मिट्टी की कुल्हिया में आगपर औटावे, फिर छानकर बच्चे को पिलावे।

घूटी कई प्रकार की होती है। पर मुगलानी घुट्टी सबसे अच्छी है। इसमें सौंफ, बनफ्सा, मुनक्का, मुलहठी, अमलताश, तुरञ्जवीन, एक एक मासे और बूरा ४ तोले पानी में डालकर औटा लेवे और छानलेवे और बालक को पिला दे। जाड़े के दिनों में इसमें अजवाइन और गर्मी में गुलकन्द और डाल दे।

सौरिगृह में धूनी देना—सौरिगृह में राई, श्वेत सरसों और नीम के पत्तों की धूनी देनी चाहिये।

प्रसव के बाद प्रसूता को भोजन—प्रसूता भोजन कठिनता से पचा सकती है। इसलिये प्रसूता के लिये गाय का दूध सबसे अच्छा भोजन है। इस समय यदि सोंठ को पीस छानकर फँकी कराकर ऊपर से दूध पिला दे तो बहुत ही अच्छा है। परन्तु इस देश में रीति है कि हरीरा देते हैं, जो घी अजवाइन और गुड़ तथा चीनी को औटाकर बनाया जाता है। इस समय जच्चा को ऐसा भोजन

कराना चाहिये जो बहुत उत्तम, बलकारक, हलका और जल्दी पच जानेवाला हो ।

प्रसव के बाद स्नान—बहुधा स्त्रियों में यह रीति है कि जच्चा को चार वा पाँच दिन में ही स्नान करादेती हैं, जिसको "छठी" की रीति कहते हैं। यह बहुत ही हानिकारक है। यह रीति कम से कम दस दिन में होनी चाहिये, नहीं तो ६ दिन के पूर्व तो कदापि न होनी चाहिये। क्योंकि इसका नाम छठी है, जो छठवें दिन होनी चाहिये । परतु निर्बल प्रसूता को छठी के दिन भी सोच समझकर ही स्नान कराना चाहिये । क्योंकि निर्बलता की हालत पर स्नान कराने से जच्चा की जानपर आ बनती है।

चरुयें का पानी अथवा बत्तीसा—जच्चा, एक सप्ताह वा दस दिनतक चरुये का पानी पीवे, जिसको प्रायः सभी स्त्रियाँ जानती हैं । पंसारी के यहाँ से बत्तीस औषधि की पुड़िया लाकर पानी में डालकर औटालेवे। यही चरुये का पानी कहलाता है । यह बड़ा गुणकारी होता है। यदि दशमूल का काढ़ा दिया जाय तो और भी श्रेष्ठ है, क्योंकि यह पूर्व प्रसूत तक के उत्पन्न रोगों को दूर कर देता है।

दशमूल का काढ़ा—(१) शालपर्णी, (२) पृष्णिपर्णी, (३) दोनो कटेली, (४) गोखरू, (५) बेल की गिरी, (६) अरणी, (७) अरलू, (८) पाढ़, (९) कुमेर अथवा खँभारि और (१०) पीपल। इनसब की बराबर मात्रा है । यदि पहले से अर्क खिचवा

ले तो और भी अच्छा है, नहीं तो मिट्टी के बासन में काढ़ा बनाकर पीवे ।

प्रसव के बाद तैल मर्दन—प्रसूता को ४० दिनतक नित तैल मर्दन कराना चाहिये क्योंकि इससे शरीर की वायु नहीं बढ़ने पाती। तैल मर्दन कराके प्रातःकाल गर्मजल से स्नान कर डालना चाहिये।

प्रसव के बाद हवा खोरी—जाड़े के दिनों में सूतिका को एक महीने के पहले बाहर न निकलना चाहिये । एक महीने के बाद भी इसबात का ध्यान रखना चाहिये कि साधारण प्राकृतिक अवस्था अनुकूल तो है । यदि ऐसा न हो तो बाहर निकलने की भूल न करनी चाहिये । यदि ग्रीष्म ऋतु हो तो प्रसूता दो या तीन सप्ताह बाद हवाखोरी के लिये बाहर निकल सकती है। यदि जच्चा स्वच्छ वायु का सेवन करना आरम्भ करेगी तो बहुत शीघ्र स्वास्थ्य लाभ करेगी और अपने पूर्वबल को प्राप्त करलेगी । यदि स्त्री का स्वास्थ्य विशेष अच्छा हो तो उपयुक्त समय के कुछ पहले भी हवाखोरी के लिये बाहर निकल सकती है ।

प्रसव के बाद बालक को दूध पिलाना और न पीनेपर उचित उपाय—बालक जब उत्पन्न हो ले, उसके चार या पाँच घण्टे पीछे माता को अपना स्तन बालक के मुँह में देना चाहिये, जिससे बालक को पीनेकी टेव पड़े । यदि दूध न उतरे जैसा कि पहलौठी की जच्चा के बहुधा होता है, तोभी दो तीन बेर बालक के मुँह मे स्तन दे। उसके चचोरने से दूध उतर आवेगा । कभी २ ऐसा भी होता है कि बहुत बेर की प्रसूता स्त्री के स्तनो मे दूध नहीं उतरता । कभी २

बालक ही स्तन को नहीं दाबता और न चचोरता है । इसके दो कारण है—(१) स्तन में दूध ही न हो, (२) या बालक से स्तन चचोरा नहीं जाता हो।

पहले का उपाय तो यह है कि गर्मपानी करके फलालैन का टुकड़ा उसमें भिगोकर निचोड़ डाले और स्तनपर रक्खे इससे सेंक पहुँचकर स्तन ढीले पड़ जायँगे। जब कुछ ढीले पड़ें तो पहिले किसी सियाने बालक को पिलाकर उनका दूध निकलवा दे, जिससे ढेपुनी उठ आवें और स्तन ढीले होकर दूध निकलने लगे। अथवा मीठेतैल मे कपूर पीसकर मिला ले और स्तनोंपर तीन तीन घराटे पीछे कई-वेर मले। इससे स्तन नर्म होकर बालक दावने लगेगा।

दूसरे का उपाय यह है कि—प्रथम यह देखे कि बालक की जीभ मुख के भीतर किसी दूसरे अङ्ग से जुड़ीहुई तो नहीं है। यदि जुड़ी प्रतीत होवे तो तत्काल डाक्टर को बुलाकर नश्तर से चिरवाकर अलग करवादेनी चाहिये । अलग करवाते ही बालक स्तनपीने लगेगा। चिरवाने से न डरना चाहिये। इसकार्य में जितना विलम्ब होगा उतनी ही हानि होगी । क्योंकि जीभका मास कड़ा होता जायगा। यदि बालक की जीभ जुड़ीहुई न हो और वह अन्य किसी कारण से दूध न पीता हो तो उसका उचित प्रबन्ध कराना चाहिये।

जब माता बालक को दूध पिलावे तो पहिले थोड़ा सा चार पाँच बूँद धरती मे गिरा दे । क्योंकि, इन बूँदों मे विष होता है, जो बालक को हानि करता है। जब दूध पिलाचुके तब स्तनको धो पोंछ डाले, इससे स्तन फटते नहीं हैं। दूध पिलाते समय दोनों

दूध पारी पारी से पिलाना चाहिये, नहीं तो दूसरे स्तन में दूध भरा रहने से दुख उत्पन्न हो जायगा। और स्तन में बालककी टक्कर न लगने दे, क्योंकि इससे स्तन में गाँठ पड़कर स्तन पकजाने का और थनैला रोग हो जाने का भय रहता है।

दूध से भरे और कड़े स्तनों की औषधि---यदि स्तन दूध से खूब भरे हों और कठोर हो तथा गाठें पड़ गयी हों या कुछ दर्द हो तो स्तनों पर हर चौथे घण्टा तैल से मालिश करनी चाहिये। तैल को आग पर रख गुनगुना लेना चाहिये। तैल के अतिरिक्त यू डी कोलोन (Eau-de-cologne) नामक एक जल से भी स्तनो को मलने से लाभ होता है।

बालक को स्नान कराना---बालक को नित कडुवा तैल लगा कर गुनगुने पानी से उचित समय पर (अर्थात् जाड़े में १०-१२ बजे और गर्मी में प्रातःकाल) नहला देना चाहिये। यदि बच्चा २० दिनके लगभग हो तो नहलाने के प्रथम चून की लोई से तैल को सुखा लेना चाहिये। लोई के फेरने से व्यर्थ के रोंगटे झड़ जाते हैं। नहाने के समय बगल, रान, कान के पीछे, चॉदी में, जांघों में अथवा जहाँ खाल के चिपकने और मैल के इकट्ठे होने की सम्भावना हो, खूब मलकर गर्म पानीसे धो डाले। नहीं तो खाल सड़ जाती है और शरीर में फोड़े फुन्सी हो जाते हैं। इन स्थानों पर लोई भी खूब करनी चाहिये। बालक को स्नान करा के सूखे कपड़े से तत्काल पोंछ देना चाहिये और यदि जाड़ा हो तो तुरन्त गर्म कपड़ा और गर्मी हो तो पतला और हलका कपड़ा पहना देना चाहिये।

माता के दूषित दूध से हानि और दूध के दोष दूर करने के उपाय—पैदा होने के बाद सर्व प्रथम बालक माँ की गोद में पलता । बालक का आहार उस समय केवल एक मात्र दूध पर ही निर्भर रहता है, जो उस बालक की उदर पूर्ति के लिये परम पिता परमात्मा ने माता के स्तनो में पहिलेही से दे रक्खा है । परन्तु कितनी स्त्रियो का दूध उन्हीं के बालको को हानि करने लगता है और यह दूषित दूध पीने से उन्ही के बालक रोगी होकर मर जाते हैं। इसलिये ऐसी स्त्रियो का दूध बालका को न पीने देना चाहिये । दूषित दूध की पहिचान यह है कि जिस स्त्री का दूध पानी में न डूबे, खट्टा, हो, कडुवा हो, रंग जिसका काला व पीला हो अथवा जिसको निकाल कर रख देने से उसमें मलाई सी न पड़े तथा यदि उसमे चींटी डाली जावे तो मर जावे, जीती तैर कर न निकल सके । ऐसा दूध दूषित होता है । निर्दोष दूध—पतला, निलाई लिये, मीठा और जिसमें मलाई पड़ती हो, होता है ।

जिस स्त्री के दूध मे दूषित दूध के लक्षण पायेजाय, उसका दूध उसकी सन्तान को न पीने देना चाहिये । सन्तान के लिये कोईधाय रखलेनी चाहिये और उस स्त्री का दूध जिसके दूध में विकार है, निकलवाकर धरती मे गिरवादेनी चाहिये स्तन मे न रहने देना चाहिये। कारण ? रोग होनेका भय रहता है, स्त्री के स्तन दुखने लगते हैं और कभी कभी पक भी जाते हैं । यदि स्त्री के दूध में थोड़ा ही दोप हा तो औपधि देने से शुद्ध हो सकता है । परन्तु यदि माँ का दूध बहुत ही दूषित हो तो बिना धाय के काम नहीं चलसकता ।

निम्नाङ्कित औषधि करने से स्त्री के दूध का साधारण दोष दूरहो सकता है।

(१) मूँग का जूस पीवे, (२) भारंगी, दारुहल्दी, वच, आत्तीस—तीन तीन मासे घोटकर पानी में पीयाकरे, (३) पाढ़, मूर्वा, मोथा, चिरायता, देवदारु, इन्द्रजौ, कुटकी—इनका काढ़ा पीया करे, (४) जायफल को फाल खिलावे।

यदि दूध पिलानेवाली स्त्री को प्यासलगे तो प्रातःकाल दूधकी लस्सी पी लेनी चाहिये।

धाय की नियुक्ति—यदि माँ का दूध बहुत ही दूषित हो वा दूध बिल्कुल ही न होता हो, तो धाय इस प्रकार की रखनी चाहिये जितने दिनो का वालक हो, उतने ही दिनो का वालक उस धायकी गोद में भी हो। दो चार दिन की न्यूनाधिकता का तो कुछ विचार नहीं है, परन्तु यदि थोडेदिन का वालक उसकी गोद में होगा तो धाय का दूध पतला और यदि वालक अधिक दिनका होगा तो दूध गाढ़ा होगा। इस अवस्थापर वालक के दूध पचने में अन्तर पड़ जाता है। धाय रखते समय इन वातो को देखलेना चाहिये कि—इस धाय की सन्तान मर तो नहीं जाती है, उसको कोई रोग तो कुष्ठ, दम्मा, खाज इत्यादि का नहीं है, गर्भवती तो नहीं है, कभी कोई बुरा रोग तो उसको नहीं हो गया है जो वहुधा खोटी स्त्रियों को हो जाता है और फिर उनका दूध पीने से वे रोग उस वालक को भी हो जाते हैं।

धाय ऐसी रखनी चाहिये जिसका स्वभाव सुशील हो, प्रसन्न-

सुख हो, सन्तोषी हो, बहुत मोटी व दुर्बल न हो; स्तन,—उसके लम्बे और कड़े हो, पहलौठी सन्तान जनीहुई न हो तथा जो बालक को प्यार करनेवाली हो।

दूध *पिलानेवाली* का आहार और दूध बढ़ानेका उचित उपाय।

दूध पिलानेवाली स्त्री का आहार अच्छा होना चाहिये। उसको ऐसा पुष्ट आहार दियाजाना चाहिये, जिससे दूध शुद्ध हो और बढ़े। जैसे,—जीग, दलिया और दूध। परन्तु इतना दे, जितना वह पचा सके। अधिक न दे, क्योंकि अजीर्ण होकर दूध दूषित हो जाता है और बालक को भी अजीर्ण करता है।

दूध पिलानेवाली को गरिष्ठ व सूखा भोजन न देना चाहिये। दूध बढ़ाने की यह भी रीति है कि, जब बलिष्ट भोजन देने से दूध न बढ़ता देखे, तब इससे उल्टा करे अर्थात् रूखा भोजन दे। यदि दूध पिलानेवाली स्त्री के स्तनोंमे दूध कम होतो यह उपाय करे।

(१) भाड़ मे गेहूँ भुनवा (एक बालू से भुनवाना चाहिये, जिसमें आधे भुने हो जावें) और अखरोट के पत्ते, बराबर लेकर गौ के घृत मे पूरी उतारे और गौ के घृत ही से सात दिन खावे तो बाँझ को दूध उत्पन्न हो सकता है।

(२) गौ के दूधमे थोड़ी शतावर डाल मिश्री मिला पीयाकरे।

(३) ४ मासे तालमखाने के चूर्ण की फँकीकर ऊपर से दूध पी लेवे।

(४) जीरा सफेद और साँठी के चावलों की खीर पकाकर खावे।

(५) श्लेष्म प्रकृत वाली को दो पीपर दूध में पकाकर पी लेनी चाहिये तथा गेहूँ के दलिये को दूध में पकाकर खा लेना चाहिये।

यदि स्तनों के कड़े होने से दूध कम हो तो किसी सियाने बालक को पिलाकर स्तनों को ढीले करवा लेना चाहिये तथा स्तनों पर पुलटिस बांध दिया करे अथवा अरण्य के पत्तों को डुँठले समेत पानी में पीसकर और छानकर दूध पिलाने वाली को पिला देवे और इसके पत्तों का रस निकाल कर स्तनों पर मले।

माँ व धाय का दूध न मिलने पर बकरी व गाय का दूध देना।

यदि माँ व धाय दोनो में से किसी का दूध किसी कारण से न मिल सके तो बालक को गाय वा बकरी का दूध, पानी और खाँड मिलाकर पिलाना चाहिये। यह बात बहुत याद रखने की है कि बिना पानी मिला हुआ दूध बच्चे को कभी न पिलावे, क्योंकि खाँटी दूध वह हजम नहीं कर सकता। खाँटी दूध पीने से बच्चा कै करने लगता है और उसे अनपच दस्त आने लगता है तथा पेट के दर्द के मारे रें-रें करता रहता है।

ज्यो ज्यो बालक बढ़ता जावे त्यो त्यों दूध में पानी कम करते जाना चाहिये अथवा फिर केवल निरा दूध ही पिलाना चाहिये, जब वह निरा दूध हजम करने योग्य हो जाय। परन्तु दूध जब जब पिलाया जावे तब गुनगुना कर पिलाना चाहिये, ठण्ढा कभी नहीं। यदि यह दूध न पचता होवे अथवा बादी करता होवे तो चूने का पानी मिला कर पिलावे और यदि इस दूध से दस्त न आता होवे तो सवेरे उठते ही थोड़ा सा ठण्ढा पानी पिला दे, परन्तु जाड़े

में नहीं, अथवा थोड़ा शहद चटा दे । यदि गाय का दूध पिलाया जावे तो केवल एकही गाय का दूध पिलावे । दो तीन गाय का मिलाकर कभी न पिलावे । जिस बासन में दूध निकालकर रक्खा जाय वह हमेशा साफ सुथरा रहना चाहिये और दूध में मलाई न रहने देनी चाहिये तथा गाढ़ा दूध न पिलाना चाहिये ।

दूध पिलाने का नियत समय और दूध छुड़ाने की तरकीबें ।

दूध वालक को नियत समय पर पिलाना उचित है और उसका इस प्रकार समय निर्धारित कर लेवे ।

एक मास के वालक को एक एक घण्टा के पीछे ।

तीन महीने के वालक की दो दो घण्टे के पीछे ॥

६ महीने के वालक को तीन तीन घण्टे के पीछे ।

९ महीने के वालक को चार चार घण्टे के पीछे ॥

नौ महीने की अवस्था तक वालक को निरा दूध पिलावे, अन्य कोई वस्तु खाने को न दे । क्योंकि कहावत है कि "नौ महीने भरे और नौ महीने धरे" अर्थात् पहिले नौ महीनों में निरा दूध पिलावे और पीछे नौ महीने आहार देकर दूध छुड़ा दे । जब वालक नौ महीने का हो जाय तब धीरे धीरे दूध छुड़ाने का उपाय करे । दूध छुड़ाने का उपाय यह है कि वालक को कभी कभी खीर, खिचड़ी, अरारोट वा साबूदाना आदि देती रहे । जिस वालक को जो रुचे और पचे वही उसको खिलावे, क्योंकि किसी वालक को कोई वस्तु और किसी को कोई वस्तु रुचती और पचती है । सुगमतर उपाय दूध छुड़ाने का यह है कि—माता वालक से कुछ दिनों

के लिये अलग हो जावे वा रात को अपने पास न सुलावे, दूसरी स्त्री के पास सुला दिया करे। यदि माता पिला सके तो अपना दूध सन्तान को तबतक बराबर पिलाती रहे जबतक कि गर्भ न रह जाय। माँ के दूध से अधिक गुणदायक और बलदायक सन्तान के लिये कोई दूसरी वस्तु नहीं है।

जब माता के स्तनों में दूध न रहे, कानों में सनसनाहट जान पड़े, आँखो में अँधेरा सा मालूम होने लगे, मस्तक में धमक और चित्त में व्याकुलता हो, देह कांपे, भूख न लगे—इत्यादि लक्षण हो जाने पर बालक को अपना दूध पिलाना अवश्य छुड़ा देना चाहिये और गर्भिणी माता को तो भूलकर भी अपना दूध कभी बालक को न पिलाना चाहिये।

बालकों को बैठाने, उठाने और सुलाने सम्बन्धी बातें अथवा अंग परिचालन—(१) जबतक बालक ६ महीने का हो तब तक सदा उसकी नार को हाथ लगाकर सहारे से रखे। क्योकि इस समय तक नार ठहरी हुई नहीं होती है। ऐसा न करने से झटका लगने का भय रहता है और नार टूटकर कभी कभी बालक मर भी जाता है।

(२) बालक को बिना सहारे कभी न बिठावे। इन दिनों मे बालक को सीधा भी न लेवे। क्योंकि सीधा लेने से पीठ का कूब निकल आता है। कारण ? इस समय बालक की रीढ़ की हड्डी बहुत नरम होती है, बोझ से नव जाती है।

(३) एक वर्ष की आयु से पूर्व बालक को कभी पैरों से खड़ा

न करे। इससे पाँव चिथड़ा जाते हैं। जब बालक स्वयम् खड़ा हो सके तभी खड़ा करे वा होने दे। बालक की टाँग चिथड़ाकर भी गोद में न रक्खे।

(४) बालक को अपनी नींद सोने दे और अपनी ही नींद उठने दे। अपने से कभी न जगावे और न अचानक जगावे। बालक को औंधा कभी न लिटावे। दूध पिलाकर वा भोजन करा कर तुरन्त ही बालक को न सोने दे। इससे दूध व भोजन पचता नहीं है। तीन वर्ष की आयु तक बालक को दिन में सोने दे, पीछे केवल रात्रि को ही सोने की टेव डाले। दिन मे सोने की टेव छुड़ा दे।

(५) अफीम आदि खिलाकर बालको को सुलाने की टेव न डाले। ऐसा करने से बालको के मस्तक बचपन से ही निर्बल और शुष्क हो जाते हैं। मूर्ख स्त्रियाँ अपने सुख के लिये ऐसा करती हैं। अफीम आदि खिलाकर सुलाने से बालक अचेत होकर पड़ जाता है, परन्तु इसका बालकके स्वास्थ्य पर बड़ा भारी धक्का लगता है।

(६) बालकों को तंग कपड़े न पहिनावे। इससे फेफड़े, पाकाशय और हृदय को हानि पहुँचती है। सोते मे बालकों के मुखको न ढाँपे, नार तक कपड़ा उढ़ावे, जिससे साँस भीतर न भरा रहे, वरन बाहर निकलता रहे।

(७) बच्चो को जाड़े में गरम और काले कपड़े, गर्मी और वर्षा ऋतु में ढीले और श्वेत रंग के कपड़े पहिनावे और वसन्त ऋतु में दुहरे और हलके रंग के, जैसे—गुलाबी वा वसन्ती।

(८) बालक के वस्त्र कभी मैले कुचैले न रहने दे। सदा स्वच्छ वस्त्र रक्खे। उनके शरीर को मिट्टी में मैला न होने दे। उनके सियाने हो जाने पर उन्हें दाँतुन भी करा दिया करे। रात्रि को सोते समय नीम व सरसों के तैल का काजल आँखों में लगा दिया करे।

(९) बचपन ही से अङ्ग का परिचालन स्वास्थ्य के लिये अवश्यक है। यही कारण है कि ईश्वर ने बच्चे को जन्मते ही उसकी प्रकृति हाथ पैर सकेलने और फेकने की कर दी है। अतः उचित है कि छोटे छोटे बच्चों को एक छोटे खटोले या चौरस जमीन पर गुलगुला और स्वच्छ बिछौना बिछा उतान लिटा दिया करे, तब देखिये बच्चा कैसा हर्षित और प्रफुल्लित हो हाथ पैर ऐंचता और फेंकता है तथा खिलखिला कर हँसता है कि देखते ही बनता है। उक्त क्रिया (परिचालन) से बच्चे की आभ्यान्तरिक पेशया बढ़ती हैं और पीठ की रीढ़ एवं हाथ पाव बलवान होते हैं और विशेष बात यह है कि बच्चे का खाना हज़म हो जाता है।

(१०) प्रायः कितने गँवरदल मर्द और औरतें बच्चो को गोद में लेना बिल्कुल नहीं जानती। यहाँ की बेवकूफ स्त्रियाँ बच्चे की जाघ फाड़ अपनी कमर पर बिठा कर ले चलती हैं, सो यह चाल बहुत ही बुरी है। इस प्रकार गोद मे लेना बच्चो के स्वास्थ्य मे बड़ा हानि पहुंचाता है, यहाँ तक कि फोते के नीचे की नस मे अति रगड़ पड़ते पड़ते वही युवावस्था मे नपुंसकत्व का रूप धारण कर लेता है।

(११) ईश्वर की कृपा से प्रथमतः बच्चे अनायास स्वभाव ही से बेकैयां चलने लगते हैं और फिर स्वभाव ही से क्रमशः कुछ थाम खड़े भी होने लगते है और इसके बाद उनमें चलने फिरने की शक्ति हो जाती है। भगवान ने जो कुछ चमत्कारी और प्रवीणता की है, वह धन्य है। कितनी स्त्रियाँ बच्चो को बकैयां चलने से रोकती हैं, इसलिये कि कपड़ा मैला हो जायगा। परन्तु वे यह नही जानतीं कि बकैयाँ चलने से जाघ, हाथ पाव और समग्र नसें रोज बरोज बली होती जाती हैं।

(१२) बालकों को पांव पर पांव रखकर सोने बैठने न दे। खाट पर वा कुर्सी पर बैठकर उनको पांव हिलाने भी न दे। क्योंकि ऍडी के पीछे ऊपर को जो एक पतली नली सी है वह जाघों से मिली हुई है। पांव पर पाव रखने से वह दबती है, जिससे शरीर में हीनता आती है और बालकों का पुरुषार्थ मारा जाता है। हिलाने से जांघो की नसों पर बल पड़ता है, उनसे हीनता आती है और पुरुषार्थ कम होता है इसलिये कुर्सी, मोढ़े, चौकी आदि पर पाव लटका कर कभी बालकों को बैठने ही न दे और यदि बैठने दे तो पाव न हिलाने दे।

(१३) बालकों को ऐसे खेल कूद करने दे जिनमें उनकी बुद्धि बल आदि बढ़े तथा मन भी बहले और चित को अरुचि भी न होने पावे। इसका सहज उपाय यह है कि जैसे—किसी वस्तु को ऊँचे स्थान पर रखदे और बालकों को कहे कि देखे. इस वस्तु को उछल कर कौन ले सकता है,? जैसे, किसी स्थान को निर्धारित करके

दौड़ावे कि देखें सबके आगे कौन निकलता है ? इसी प्रकार क
वालकों में होड़ बांधकर परिश्रम करावे और उनमें से जो जी
उसको कुछ पुरस्कार भी दे। ऐसा कराने से भोजन पचकर बालक
को भूख भी लगती है, साधारण व्यायाम भी हो जाता है औ
बुद्धि भी बढ़ती है।

(१४) बालकों के पाँव के नख भी न कटवावे । इनके कट
वा ने से आँखों की दृष्टि में अन्तर पड़ जाता है । चौर करा क
बालकों को अच्छे प्रकार से स्नान कराकर देह में से वाल छुड़
देना चाहिये। नहला कर शरीर को सूखे कपडे से तुरन्त पोछ देन
चाहिये। निर्बल बालक थोड़े ही दिनों के स्नान में बलवान् तथ
पुष्ट हो जाते हैं। परन्तु जब बालक को ज्वर हो, कफ और खासी
हो, शर्दी हो, अतिसार हो वा कही फूलन आदि हो तो ऐसी दशा
में स्नान न करावे। आवश्यकता पड़ने पर गर्म पानी कर मुलायम
कपड़े से हाथ पैर धीरे धीरे पोंछ दिये जा सकते हैं।

(१५) नन्हे नन्हे बालकों के चाँद में प्रायः मैल जम जाया
करता है, सो उसको भी धोकर निकाल देना चाहिये। पीछे तैल
डालना चाहिये। इससे मस्तक में तरी रहती है और बाल भी जल्दी
बढ़ आते हैं तथा चाँद में किसी प्रकार की फुन्सी और फोड़ा नहीं
होने पाता। चाँद का मैल नहीं धोने से बालक बहुधा मस्तकशून्य
और मूर्ख हो जाया करता है।

(१६) बालकों को कभी न डराना चाहिये, जैसा कि मूर्ख
माताये यह कहकर डराया करती हैं कि देखो—हउआ आया, बुआ

आया, इत्यादि इत्यादि। बचपन का भय उनके हृदय से जन्म भर नहीं निकलता। कभी २ उन्हीं बातो का स्वप्न देखकर वे डर बैठते हैं, उनका हृदय निर्बल हो जाता है और वे उन्हीं बातों को यादकर नींद में भी रो उठते हैं, यहाँ तक कि मल मूत्र त्याग कर देते हैं। यदि बालक किसी प्रकार से डर गया हो तो उसका उपाय यह है कि उस दशा में बालक को कभी कड़ा वा डराकर न बोले, घुड़की आदि न देवे, चिल्लाकर न बोले, वरन बहुत ही प्यार और स्नेह से बोले। यदि रात्रि में बालक सोते सोते चौंक पड़ता होवे तो उस बालक को रात्रि में कभी अकेला न छोड़े और अँधेरे मे न रक्खे तथा बालक को साथ लेकर सोवे।

(१७) छोटे छोटे बच्चों को मिट्टी खाने की टेव पड़ जाया करती है। इससे उनकी चौकसी और सावधानी रखनी चाहिये, जिससे वे मिट्टी न खाने पावें।

(१८) बालकों को कुछ गानेका अभ्यास भी कराना चाहिये इससे बालको की छाती चौड़ी होकर शरीर सुडौल हो जाता है और स्वर भी गम्भीर हो जाता है।

यन्त्र, मन्त्र और झाड़ फूँक आदि पर अन्ध विश्वास—यहाँ की स्त्रियों मे एक अनोखी बात और देखो जाती है कि बालक यदि अधिक सुन्दर हुआ तो नहला धुलाकर तथा शृङ्गार कर झट उसकी माता उसके मस्तक पर कज्जल का टीका लगा देती है, जिसका अभिप्राय यह है कि नजर न लगे। यह एक अन्ध विश्वास है।

ऐसी माताओं की सन्ताने क्या कभी वीर हो सकती हैं ? अंग्रेजों के बालक तो हमारे यहाँ के बालकों से भी सुन्दर होते हैं और उनके यहाँ कज्जल का टीका भी नहीं लगाया जाता है। फिर क्या कारण है, जो उन्हे नजर नही लगती ? हमारे यहाँ यह केवल माताओं के हृदय की कमजोरी है और जिसके कारण उनके बालक कभी बलवान और बलिष्ट नहीं बन सकते। जिन माताओ के ऐसे विचार हैं, उनकी सन्तान कभी भीम, अर्जुन और अभिमन्यु ऐसी बलिष्ठ नही बन सकती। उनकी सन्तान तो कायर और बुजदिल होगी। इसलिये इस अन्ध विश्वास को दूरकर बचपन से ही बालको के हृदय में वीरता की भावनायें कूट कूटकर भर देनी चाहिये।

बच्चो के रोगादि होने पर भी प्रायः यह देखा जाता है कि कही तो मन्नतें मानी जाती हैं, कही झाड़ फूँक करवाई जाती है, कहीं व्रत अनुष्ठान किया जाता है और कही गलो में गराडे, यन्त्र इत्यादि पहनाये जाते हैं। परन्तु क्या उपरोक्त विचार वाले माता पिता कह सकते हैं कि उनके बच्चे रोगी नही होते वा नहीं मरते ? वरन ऐसे ही बालक अधिकांश मे रोगी देखे जाते हैं और ऐसे ही बालक अधिक मरते भी हैं। क्योंकि इन झाड़-झंखारों के कारण रोगी बालक का उचित प्रबन्ध नहीं होता और फलस्वरूप बालक की मृत्यु हो जाती है। यह कोरा अन्ध विश्वास है। यदि झाड़-फूँक और यन्त्र-मन्त्र वाली बात ठीक होती तो इङ्गलैण्ड की अपेक्षा बाल-मृत्युयें यहाँ कम होती। परन्तु यहाँ इंगलैण्ड की अपेक्षा बाल-मृत्युयें अधिक होती हैं। इस समय इङ्गलैण्ड में प्रति-

शत बच्चों की मृत्यु संख्या जन्म से लेकर एक वर्ष तक १० के लगभग है, परन्तु हमारे भारत में प्रतिशत मृत्यु संख्या ४० है। अब प्रत्येक माता पिता यह निर्णय कर सकते हैं कि वास्तव में बालकों का उचित रूपेण पालन-पोषण और सुस्वास्थ्य ही बालकों के लिये हितकर है। जितना देवी देवताओं, पीर-पैगम्बरों और झाड़ फूँक आदि पर विश्वास किया जाता है यदि उतना ही बालक का उचित प्रबन्ध किया जाय और रोगी होने पर उचित औषधि आदि की व्यवस्था की जाय तो निश्चय ही हमारे यहाँ भी बाल-मृत्यु कम होने लगे। परन्तु यहाँ तो अन्ध विश्वास का साम्राज्य फैला हुआ है। भगवान् जाने कब इस अन्ध विश्वास से भारत का उद्धार होगा?

बालकों को गहने पहनाने से हानि—कितनी बहनें बालकों के हाथ पाव में कडे, छड़े वा अन्य कड़ी वस्तु गहने को पहिना देती हैं, सो कदापि न पहिनानी चाहिये। इससे भी अत्यन्त हानि होती है, क्योंकि रक्तवाहिनी नसों मे बाधा पड़ती है और प्रायः बहुमूल्य भूषणादि के लोभ में पड़कर कितने धूर्त्त मक्कार और चोर लड़के को उठा ले जाते हैं और लड़के का भूषणादि उतार और मार किसी तालाब कूए आदि में गिरा देते हैं, जिससे माता पिता को लड़के से भी हाथ धो लेना पड़ता है। इसलिये भूल-कर भी बच्चों को गहने आदि न पहनना चाहिये। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी गहने बच्चों के लिये हानिकर हैं।

दांत निकलने का सुगम उपाय—दूध के दांत निकलने के समय अक्सर बच्चों को ज्वर, खांसी और पतला दस्त होने लगता है। खासकर इन दिनों में बालक को हरे, पीले और फटे से दस्त होते है। बालक अपनी उँगलियों को चबाता है, प्यास अधिक लगती है और इसी कारण इन दिनों में दूध जल्दी जल्दी पीने को करता है, पर पीता नही। इस समय बालको की मल परीक्षा से उनके दूध पिलानेवाली का पथ्यापथ्य बदल देना चाहिये। परीक्षा यह है कि अच्छी अवस्था में मल हर्दी वा पकी नारंगी के रंग का सा होता है और चावल के गाढ़े मॉड़ का सा जमा होता है अर्थात् न बहुत पतला और न बहुत गाढ़ा। पर जब उपर में विकार होता है, तभी रंग में अन्तर होता है अर्थात् फटे दूध की सी फ्टिकें अथवा ऑव मिला हुआ होता है; या तो बहुत पतला या बहुत गाढ़ा होता है और चिकना तथा महादुर्गन्धि लिये हुए होता है।

दन्तोत्पन्न के *लक्षण*—जब देखे कि उक्त बीमारियाँ दाँत के कारण हैं और दाँतों की जड़ का मांस फूला एवं छूने मे गर्म और पीड़ा बोध हो तो मस्कुर के उस स्थान को जहाँ पर दाँत विंधे रहते हैं, सूक्ष्म छुरी से चीर देना चाहिये। लेकिन ख्याल रखना चाहिये कि यदि मस्कुर फूला और गर्म न मालूम हो तो कदापि न चीरें और न उँगली से दबावे, क्योंकि प्रायः स्त्रियाँ चीरा न देकर उँगली से फूले हुए मस्कुर को दबा देती हैं ताकि चमड़ा फटकर दाँत आसानी से निकल आयें, पर इससे चीर देनाही अच्छा होता है।

सुगमता से दाँत निकलने का यह उपाय भी है कि शहद में सुहागा, नमक अथवा शोरा पीसकर मिलावे और मसूढ़े पर दिन में कई वेर चुपड़ दिया करे; मुलहठी की डंडी को छीलकर बालक के गले मे डोरे से बाधकर लटका दे और उसको चूसने दे अथवा रबड़ के खिलौने चूसने को दे । एक उपाय यह भी है कि बिजली की बनी हुई एक प्रकार की पट्टी सी जो बाज़ार में बिकती है, बालक की नार में बाधने से दांत बहुत सुगमता से निकल आते हैं और बालक को पीड़ा भी कम होती है ।

दांत निकलने के समय सावधानी—दाँत निकलने के समय बच्चा जो चीज हाथ में थाँमता है उसे मुँह में डाल मस्कुर के नीचे दाँतों की जड़में रख चाभने लगता है । लेकिन यदि वह वस्तु कड़ी हुई तो उसके दर्रे से दाँत आने मे अधिक बाधा होती है । इससे छोटी और कड़ी वस्तु बालक को भूलकर भी न देनी चाहिये । एक बात और भी देखने मे आती है कि प्रायः बच्चे दाँत निकलने की दशा में अपना अँगूठा मुँह मे डाल पीया करते हैं, सो उसे न छुड़ाना चाहिये । कारण ? एक तो दाँत निकलने की व्यथा शान्त रहती है, दूसरे दाँत निकलने में हित होता है, तीसरे मुँह से लार बहने लगती है जो उस अवस्था में बहुत अच्छी होती है । क्योंकि लार के बहते रहने से बच्चे की पाचन शक्ति बढ़ती रहती है । इस समय लड़के के गले में एक रुमाल वा अँगोछा बाँधे रक्खे और जब वह लार से भींगकर गीला हो जाय तब दूसरा सूखा बदल दे । इस प्रकार हर घड़ी गले में सूखा कपड़ा बँधा रक्खे । ऐसा न

बालक की छाती पर ठण्ड नहीं पहुँचने पाती। छाती में ठण्ड पहुँचने से अनेक रोग खाँसी आदि उत्पन्न होकर महादुःख देते हैं।

मुखश्राव और उसका उचित उपाय—दाँत निकलने के समय बच्चे की माँ को यह भी सदा ख्याल रखना चाहिये कि लड़के का मुँह तो नही आ गया है, क्योंकि मुँह आने का लार सिवाय हानि के कुछ भी फायदा नही दे सकता। माता के दुग्ध विकार से प्रायः बच्चों का मुँह आ जाया करता है। यह दो प्रकार का है। जो बच्चे के मुखमें सफेद मलाई सी जमी और फटी फटी सी दीख पड़े, वह मुख-श्राव है। इसमें मुँह से लार बहुत बहती है। और यदि बालक के मुँह में लाल लाल दाने या छाले पड़ जायं तो उसे मुखपाक अथवा लाल मुँहा कहते हैं।

मुखश्राव की मुख्य औषधि यह है कि पीपल की छाल और पत्र दोनों सुखा बराबर बराबर ले, कूट कपड़ छानकर दो रत्ती के अन्दाज दिनमे ४ वेर शहद के साथ चटावे, निश्चय ही लाभ होगा।

लालमुँह की मुख्य औषधि यह है कि सफेद कत्था ६ मासे, शीतल चीनी १० दाने, कपूर १ रत्ती-तीनो को पानी मे पीस उँगली से मुख के भीतर लेप करे, निश्चय लाभ होगा।

निष्क्रमण संस्कार—दांत आने के समय बच्चों को शुद्ध वायु सेवन कराना चाहिये। इसीसे हमारे शास्त्रो मे निष्क्रमण संस्कार रक्खा है, जो इन्हीं दिनों में होना है और जिसका अभिप्राय समीर सेवन ही का है। समीर सेवन, यदि बच्चे को तीन चार महीने का

होने पर ही आरम्भ करा दिया जाय तो बहुत अच्छी बात है। दोनो समय बच्चे का पाँव अच्छे कपड़े से ढाँप बाहर किसी उत्तम हवादार स्थान मे घुमा ले आना लड़के के जीवन रूपी वृक्ष की जड़ में अमृत का सीचना है। प्रायः देखने मे आता है कि जहाँ बालकों को गोद मे लिया वहाँ बालक खुद प्रसन्न हो बाहर ले चलनेके लिये चेष्टा प्रकाश करता है और बाहर ले जाते ही बच्चा बहुत प्रफुल्लित देख पड़ता है। परन्तु जिस दिन विशेष ठण्डी हवा चलती हो या गरद गुब्बार हो तो छोटे बच्चे को कदापि न ले जाना चाहिये। बड़े बच्चो को अर्थात् जो पैदल चलते हो, गोदमे न लेकर पैदल ही हवा खिलानी चाहिये और हवा खिलाते समय उन्हे मन्द मन्द गति से दौड़ाना चाहिये। ऐसा कराना बच्चों के स्वास्थ्य के लिये बहुत ही लाभदायक है।

शीतला अथवा माता—शीतला कोई देवी नही है, जैसा कि लोगो ने विश्वास कर रक्खा है। यह केवल एक प्रकार का रोग है। यदि यह देवी होती तो अपने न मानने वालों की सन्तानों को कभी जीता ही न छोड़ती, सबको मार डालती और अपने पूजनेवालों की सन्तान मे से एक को भी न मारती, वरन सबको ही चिरञ्जिवी रखती। सो यह बात कदापि नहीं होती। शीतला को देवी मानकर पूजने वालों के बालक और न पूजने वालों के बालक दोनो ही मरते हैं। क्योंकि सिवाय हिन्दुओंके अन्य देश के वासी इसको नहीं पूजते। यदि पूजने वालो के बालक न मरते तो सम्भव था कि इसे देवी मानकर पूजने के लिये दूसरे देश के भी

को भी बाध्य होना पड़ता। अतः यह रोग ही है, जिसके कारण कितने मर जाते हैं और कितने बच जाते हैं।

यह रोग प्रायः सब बालकों को होता है। इससे न कोई बचा है और न बच सकता है। शायद ही कोई विरला बालक बचा हो। माता के उदर में बालक जो रुधिर खाकर पलता है, यह उसका विकार है। उसी की गर्मी जब फूटकर निकलती है तब लोग उसे "शीतला" कहते हैं और इसीसे इस रोग का नाम "माता" भी है। यह रोग उड़ना है, क्योंकि जहाँ एक बालक को घर में हुआ कि अन्य सब बालकों को हो जाता है। शनैः शनैः महल्ले-टोले में भी फैल जाता है। इसके रोकने का सहज उपाय तो यह है कि गर्भाधान रजोदर्शन आठ दिन बाद किया जाय, क्योंकि इन दिनों में रज निपट शुद्ध रहता है। दूसरा उपाय यह है कि जिस समय बालक का नार काटा जावे उसी समय बालक के पेट का खराब पानी सूँतकर निकाल दिया जाय। परन्तु अच्छा पानी तनिक भी न निकलने दे, नहीं तो बालक मर जावेगा। तीसरा और सब से अच्छा उपाय टीका लगवा देने का है। इसके लगवा देने से शीतला जोर से नहीं निकलती और यदि निकलती भी है तो बहुत जोर नहीं करती। एतद्देशीय लोग अपनी बुद्धि विहीनता के कारण इससे डरते हैं परन्तु यह कोई नयी बात नहीं है। जब सरकार की ओर से टीका लगाना नहीं जारी हुआ था तब हमारे यहाँ माली वगैरह टीका लगाते थे और उससे बड़ा लाभ होता था।

यदि बालक आरोग्य और सबल हो तो तीन ही मास की

अवस्था में टीका दिलादेना चाहिये, क्योंकि बच्चे की अवस्था जितनी अधिक होती जायगी उतना ही बच्चा टीके के स्थान को निखोर विखोर करेगा। इस समय एकबार टीका लगवादेने के बाद यदि सात वर्ष बीतनेपर फिर टीका लगवा दिया जाय तो फिर माता अथवा शीतला निकलने का खटका नही रहता।

टीका लगवाने के प्रथम यह जांचलेना चाहिये कि इस सूई से कोई रोगी बच्चे तो नही गोदे गये हैं। टीका देने के बाद तीन चार दिनतक बच्चों को बहुधा धीमाज्वर, दस्त पतला और मुँह शुष्क रहता है तथा रात्रि मे निद्रा भी कम आती है। परन्तु तीन चार दिन के बाद आपही आराम हो जाता है, औषधि करनी उचित नहीं। यदि टीके के स्थान मे सूजन और दर्द विशेष मालूम हो तो मक्खन या गाय का घृत लगा देना चाहिये। टीका सूखजानेपर पपड़ी को हाथ से न उतारे, आप ही आप सूखकर गिरजाने दे तथा पानी से बचाव रक्खे।

यों तो शीतला कई प्रकार की होती हैं परन्तु मुख्य दो ही है। (१) विस्फोटक अर्थात् बड़ी माता, (२) मसूरिका अर्थात् छोटी माता वा खसरा। जैसे फफोले आग मे जलने से होते हैं, बड़ी माता मे वैसे ही फफोले समस्त देह में ज्वर सहित पड़जाते हैं। वाताधिक्य मे शिरदर्द, फफोलों में दर्द और कुछ कालापन ज्वर, प्यास और जोड़ों में दर्द होता है। पित्ताधिक्य मे ज्वर, दाह, अङ्ग दर्द, प्यास, फफोलों का जल्द पकना और बढ़ना और रंगलाल एवं पीला होता है। कफाधिक्य मे कै होना, अरुचि,

फफोलो में खाज, रंग पाण्डु, वेदना रहित और बहुत दिनों में पकता है। द्वन्दज में दो दोष के लक्षण मिलते हैं। परन्तु जो विस्फोट (बड़ी माता) त्रिदोषज होता है सो बीच में गहिरा, किनारे ऊँचे और कठिन, अधपका दाहयुत, ललामी लिये, बेचैनी, मूर्च्छा, पीड़ा, ज्वर और कम्पन युक्त होता है इन लक्षणयुक्त उक्त रोग बहुत कठिन है। उचित प्रबन्ध न होने से रोगी मर जाता है।

मसूरिका अर्थात् छोटी माता के ये लक्षण हैं कि ज्वर, खजुरी, शरीर मे ऐंठन, अरुचि, भ्रम, त्वचा में सूजन, अङ्ग और नेत्र लाल होते हैं। इसमें सरसों या राई के सरीखे दाने निकलकर पाँच ही चार दिन मे मुरझा जाते हैं। दोषों के अधिक कोप होने से अपने अपने दोषानुसार मसूर के सदृश सुर्ख, पीले, रूखे, तीव्र, वेदनायुक्त एवं देर में पकनेवाले होते हैं। त्रिदोष में छोटी माता नीले रंग की, चिपटी, बीच में गहरी और बहुत काल मे पकने वाली होती है।

जिस माता के निकलने में खाँसी, हुचकी, बेहोशी, तीव्रज्वर, प्रलाप, बेचैनी, मूर्च्छा, तृष्णा, दाह, घुमरी, मुँह नाक से रक्त गिरना नेत्र अति लाल, कण्ठ मे घुरघुर शब्द और श्वास हो तो जानना चाहिये कि यह निश्चय मर जावेगा।

रोगी का उपाय--(१) उपाय यह है कि रोगी को खूब ठण्डे माकान मे रक्खे, दरवाजे मे खस की टट्टी लगा दे और कुछ नीम की टहनियाँ बाँध दे, क्योंकि इस रोगमें शीतल उपचार एवं

निम्बपत्र का बन्दनवार बांधना अति हितकर है। रोगी का बिछौना सफेद और बहुत मुलायम होना चाहिये, एवं मैला होने पर शीघ्र ही बदल लेना चाहिये। माता में कृमि न पड़े इसलिये राल, लोहबान वगैरह का धूप कभी कभी रोगी के और समस्त घर मे देते रहना चाहिये। कोई मनुष्य सुर्ख वस्तु धारणाकर, पान खाकर, माथे में लाल टीका लगाकर या लाल वस्तु लेकर रोगी के गृह मे न जाय, कारण यह है कि सुर्ख वस्तु की चमक रोगी की आँखो में न पड़नी चाहिये, इससे आँखों मे फोला इत्यादि होने का भय रहता है। जबतक शीतला की बीमारी न आराम हो तबतक घर में पूरी, कचौरी, मसालेदार व्यञ्जन आदि न बनना चाहिये और न मद्य का प्रचार होना चाहिये, क्योंकि भूँजने, तलने के शब्द एवं गर्म महक से रोगी को रक्तकोप होता है।

(२) रोगी को अंधेरे घर में रखना चाहिये और किसी की परछाँही न पड़ने देनी चाहिये। परछाँही पड़ने ही से मुख व शरीर पर रन वा चिन्ह पड़जाते हैं। कभी खुजलाने से भी चिन्ह पड़जाते है। इसलिये बच्चे के हाथ मे कपड़े की थैली बाँध दे, ताकि वह खुजला न सके। यदि खुजली मारती होवे तो कबूतर के पर से मक्खन वा मलाई खुजली के स्थानपर लगा दे। दाहक पड़न के लिये ठण्डे पानी से देह धो दे। चूने के पानी में नारियल के तेलको मिलाकर लगा दे, इससे रन वा चिन्ह नहीं पड़ने पाते। जब खुरंट उतरने लगे तब गर्म पानी से नहला दे। आंखें नित्य धो देवे। रोगी को ऐसे स्थानपर रक्खे जिससे परछाँही न पड़ने पावे। ऐसा न करने

से बालक की आँखें मारी जाती हैं। जब शीतला के दाने फूटजाँय तो सिर्स, पीपल, लसोड़ा और गूमर की छाल को जलाकर और पीस छानकर घी में मिला लेवे और फफलोंपर लगादेवे। बाजे बच्चों के पैर के तलुवा और हथेरी में भी माता निकल आती हैं, जिससे तलवा अधिक जलता है, इसलिये इस समय चावल के धोवन से दिन में कई वेर तलुवे और हथेरी को सींच दे।

(३) शीतला निकलने के पहले दो वा तीनदिन ज्वर आता है और बच्चा अचेत पड़ा रहता है। इसलिये इस समय के ज्वर में कोई औषधि न देनी चाहिये। वरन जब जाने कि अब वच्चे को शीतला निकलने लगी है तो एक हिस्सा पोस्ता और दो हिस्सा कन्द का शर्बत वच्चेको दियाकरे और दूध पिलानेवाली स्त्री को ठण्ढीवस्तु खाने को दे अथवा रुधिर शोधक वस्तु, जैसे—शहद, चिरायता पिलावे। उड़द की दाल और मीठा न देवे। यदि वच्चा दो वर्ष का हो तो उसे गोला दो तोले खिलावे। गोला खिलाने से शीतला के दाने अधिक नही निकलने पाते। रुद्राक्ष के दाने पानी मे घिसकर देने से भी दाने अधिक नहीं निकलने पाते।

साधारण शीतला की वीमारी में औषधि न देनी चाहिये। परन्तु यदि कोई उपद्रव जैसे-अधिक ज्वर, बहुत रोना, वदन नोचना नींद का न आना, वारम्बार चौंक या अनर्थक बकना इत्यादि बातें हो तो अवश्य औषधि करनी चाहिये। प्रयोजन यह है कि यदि पथ्य बन पड़े तो विना औषधि के भी रोगी अच्छा होसकता है और पथ्य विगड़ जाय तो औषधि व्यर्थ हो जाती है। इसी अनुमान से

महात्माओं ने इस विस्फोटक वा शीतला रोग में पथ्य ही मुख्य रक्खा है, जैसा कि ऊपर लिख दिया गया है और परमेश्वर की उपासना का अवलम्ब बतला दिया है, जिसका अभिप्राय मातृभाव से ईश्वर को शीतला कहके पुकारा गया।

हमारे विचार में इसरोग के निवारण के लिये टीका दिलाना बहुत अच्छीबात है, पर जिनसे यह न हो सके उनको रोगीका उचित प्रवन्ध करना चाहिये, आवश्यकता पड़नेपर औषधि भी देनी चाहिये, परन्तु मुख्यतः पथ्यपर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। माता पुज जाने के बाद अथवा स्वास्थ्यलाभ हो जाने के बाद शीतलचीनी का चूर्ण दो दो घण्टे में जल के साथ तीन चार दिन तक पिलावे, जिससे आभ्यान्तरिक उष्णता साफ हो जाय। तत्पश्चात् कुछ दिन पर्य्यन्त शरबत अनार, शरबत शन्दल, शरबत बनफ्सा, अर्क गुलाब, अर्क धनियाँ, अर्क कासनी या कासनीके पत्तोंको कूटकर रस निकाल मिश्री मिलाकर पिलावे इससे रुधिर साफ हो जाता है और रुधिर साफ करने में इसके बराबर दूसरी औषधि नहीं है। परन्तु कासनी के पत्तों को धोना न चाहिये, क्योंकि धोने से असर जाता रहता है।

मुखसे बोलनेवाले बच्चोंके रोगकी पहिचान और उचित उपाय।

रोग की चिकित्सा केवल औषधि द्वारा ही हो सकती है। यन्त्र, मन्त्र, जप, तप और टोटके आदि से कदापि नहीं। वास्तव में यह निरा भ्रम ही है। सुश्रुत में लिखा है कि बालकों के रोग के हो जाने का कारण बहुधाकर अपवित्रता है। बात यह है कि बालकों का स्वभाव अति ही कोमल होता है। थोड़ी सी भी अपवित्र और दुर्गन्धि

उनको हानि करती है। इसलिये जहाँतक हो सके उनको इन दोनों से बचावे।

बाल चिकित्सा बहुत कठिन है। क्योंकि बड़े प्राणी के रोगों का तो निदान अच्छे वैद्यों से हो ही नहीं सकता, छोटे बालकों का जो मुख से कुछ कह नहीं सकते क्योंकर निदान होकर उचित औषधि हो सकती है? परन्तु जिसप्रकार रोगों के निदान अनेक प्रकार से किये गये हैं, उसीप्रकार बालकों के रोग पहिचानने के लिये बहुतसे उपाय निर्धारित किये गये हैं। बड़ा बालक तो अपना वृत्तान्त कुछ कह भी सकता है, परन्तु बहुत ही छोटा बच्चा जो मुखसे बोलना तो एक ओर रहा, सुनता समझता भी नहीं है, क्योकर अपना दुख दर्द जता सकता है? सो बालक का बराबर रोना और छटपटाना उनके रोग ग्रस्त होने की सूचना है, क्योकि रोग को जानने के लिये उनके पास कोई दूसरा द्वार है ही नहीं। पर बहुतसी मूर्ख स्त्रियाँबालकको भूखा जान उसको बारबार दूध पिलाने लगती हैं, जिसे बालक पीता भी नहीं है। यदि कुछ पी भी लेता है तो उलटा और कष्ट थोड़ीदेर पीछे उसे होने लगता है। जैसे,—पेट के दर्द और अजीर्ण आदि जब बालक दुःख के कारण दूध पीता नहीं और रोता ही चलाजाता है तब मूर्ख स्त्रियाँ इसका ठीक कारण तो निश्चय कर ही नहीं सकतीं, वरन झुझलाकर बालकों को मारने पीटने लगती हैं। सो ऐसा नहीं करना चाहिये। प्रत्येक स्त्री को चाहिये कि वह बालक के रोने का कारण खोजे, क्योंकि बिना कारण के बालक नहीं रोता।

पहिचान और उपाय—(१) यदि बालक रोता होवे और मुहं में झाग आते हों तो जानना चाहिये कि उसके कपड़ों में कोई जूँ, चींटी वा खटमल है, जो बालक को काटरहा है। अतः उसको खोजकर निकाल देना चाहिये और काटे हुए स्थान पर तनिक सा घी मलदेना चाहिये। तत्काल वालक चुप हो जायगा।

(२) यदि वालक बार वार अपने पैरों को पेट की ओर समेट और पेटको दवाने से खुश न हो, वरावर रोता ही रहे तो जानना चाहिये कि पेट में दर्द है। इसका उपाय यह है कि हाथको आगपर सेंककर अथवा रूई को आगपर दूर ही से गर्म करके वालक के पेटको सेंके, पर इस वातका ध्यान रक्खे कि रूई को इतना गर्म न करे कि वालक की खाल जो वहुत कोमल होती है, जलजावे। दूसरा उपाय यह है कि इलायची के दो वीज, सौंफ के दो दाने-माँ के दूधमे पीसकर पिला दे और रोगन गुलको गुनगुना कर पेटपर मल दे, निश्चय लाभ होगा।

(३) यदि वालक सोकर उठे और रोवे तथा जीभ निकाले और इधर उधर दूध की खोज में मस्तक को हिलावे तो जानना चाहिये कि भूखा है। दूध पिलाने से चुप हो जायगा।

(४ एक करवट देरतक सोने से वा किसी वस्तु के चुभने से यदि वालक रोता हो तो उस कारण को शीघ्र दूर कर दे, वालक चुप हो जायगा।

(५) जब वालकको मस्तकमें पीड़ा होती है, तब वालक अप

आँखें मूँद लेता है। ऐसी स्थिति में बकरी का मक्खन सिरपर मलने से खुश्की और शर्दी दोनो का सिरदर्द नाश होता है

(६) यदि बालक के गुदा में दर्द हो, प्यास अधिक लगे और मूर्च्छा आती हो तो जानना चाहिये कि यह दर्द मलकोष्ठ में होरहा है इसमें मल मूत्र रुकजाते हैं, मुख मलीन हो जाता है, सांस अधिक चलती है और आतें बोलती हैं। ऐसी स्थिति में किसी वैद्य या डाक्टर को दिखलाकर उचित उपाय कराना चाहिये।

(७) यदि बालक रोता ही चलाजावे, चुप न होवे तो जानना चाहिये कि कहीं दर्द है वा कोई दुख है। ऐसी स्थितिपर कारण जानने की चेष्टाकरनी चाहिये और उसका उचित उपाय करना चाहिये

बाल-चिकित्सा—बालकों को खाने की औषधि तीन प्रकार से दी जाती है। (१) जो बालक दूधपीते हैं, उनकी दूध पिलानेवाली को; (२) जो अन्न खाते हैं तो बालक को; (३) जो बालक दूध पीते हैं और अन्न भी खाते हैं तो बालक और दूध पिलानेवाली दोनों को उनकी माता के दूध मे अथवा शहद में घिसकर औषधि दी जाती है। बालकों के मुख्य २ रोग तथा उनकी उचित औषधि नीचे लिखी जाती है।

(१) दूध फेंकना—इसको बालक कई प्रकार से फेंकता है। (२) अपने पेट के विकार से, (३) माता के दूध के दूपित होने से अथवा जब माता का दूध गर्म अधिक होता है तो बालक उसको पीते ही फेंकदेता है। ऐसी स्थिति मे कारण जानकर उचित औषधि करानी चाहिये। यदि माता के अजीर्ण के वजह से ऐसा हो तो माता

को अल्पाहार देना चाहिये। पेटभर भोजन न देना चाहिये और कोई पाचन चूर्ण देना चाहिये । इस रोग की औषधि यह है कि (अ) काकड़ासिंगे, अतीस, मोथा और पीपल पीसकर शहद में चटावे, (इ) आम की गुठली, धान की खील और सेंधा नमक पीसकर शहद में चटावे । जब स्त्री रोटी करके, चक्कीपीस के वा शीघ्रता में कहीं से आई हो अथवा पसीने में हो तो अपना दूध बालक को न पिलावे। क्योंकि उस समय का दूध गरम हो जाता है और बच्चा उसे हजम न कर फेंक देता है अथवा गिरादेता है।

(२) *हँसली का आना*—यह नार की एक हड्डी है, जो हँसली की भाँति दोनो कन्धों से लगी हुई होती है और नार के आगे को होती है । बालक की नार में हाथ लगाकर न लेने से झटका लग जाता है, उसीसे दर्द हो जाता है । इसके रोकने का उपाय यही है बालक की नार में एक चाँदी की हँसली डाल दे । इसके ठिकाने बैठाने का उपाय यह है कि किसी चतुर दाई से सुतवा दे। नीब के पत्तों की धूनी दे और गुञ्जा की माला पहिनावे।

(३) *खाँसी*—यह बहुत ही बुरा रोग है और सब रोगों की जड़ है। यह कई प्रकार की होती है, जैसे (१) धाँस; (२) जुकाम होने से, जिससे छाती की कौड़ीमें दर्द होता है; (३) कुकुरखाँसी, जो सर्दी से वा छूत से होती है और जिसमें बालक बहुत देरतक खाँसते २ वमनतक करदेता है; (४) एक प्रकार की खाँसी और होती है जिसमें बालक की आवाज बैठ जाती है, यह और भी बुरी है। तथा और भी कितने ही प्रकार की खाँसी होती हैं। साधारण

खाँसी में तो घरेलू औषधि की जा सकती है, परन्तु कड़ी खाँसी होनेपर उचित उपाय कराना चाहिये । साधारण खाँसी होनेपर ये औषधियाँ की जा सकती हैं—(१) पोहकरमूल, अतीस, पीपल, काकड़ासिंगी को पीसकर शहद में चटावे, (२) बंशलोचन पीसकर शहद में चटावे, (३) अनार का छिलका और नमक पीसकर चटा दिया करे, (४) पान के रस में एक वा दो रत्ती जायफल घिसकर देवे, (५) एक कुल्हिया को गर्म करके साम्हर नमक उसमें भुनले और बालक को चार पाँचबेर दिन में चटा दिया करे, (६) यदि खुश्की से गले में फाँस पड़गयी होवे तो बिहीदाने के लुआब में मिश्री मिलाकर पिलावे वा शहद का शर्बत चटावे वा छाती और गले में तैल मले । बड़ी खाँसी तथा सब प्रकार की खाँसीपर अनुभूत योग तृतीय भाग में लिखे गये हैं । देखो, पृष्ठ १८५-८६

(४) *खांसी और ज्वर*—काकाड़ासिंगी, अतीस और पीपल पीस कर शहद में चटावे । (२) कटेली के फूलो की केसर को शहद में मिलाकर चटावे । (३) बादाम की भींगी पानी में घिसकर चटावे । यदि इनके संग दस्त भी हो तो काकड़ासिंगी, पीपल, अतीस और मोथा को पीसकर शहद मे चटावे ।

(५) *पेट चलना*—जिसको अतिसार भी कहते हैं । यह कई कारणों से होता है, जैसे—अजीर्ण से, सर्दी पाने से, गर्मी पाने से और दाँत निकलने के दिनों में तो बहुधा होता है । कारण जानकर उचित औषधि करानी चाहिये । सामान्य दस्तों के लिये ये औषधियाँ उपयोगी हैं—(१) बेलगिरी, कत्था, धाय के फूल,

बड़ी पीपल और लोध, इनको पीस कर शहद मे चटावे। दस्त के दिनों में दूध पिलाने वाली दूध को जल्दी जल्दी न पिलावे, देर में पिलावे। (२) यदि शर्दी से दस्त हो तो बालक और माता दोनों को शर्दी से बचना चाहिये तथा ठंडी वस्तु का भोजन न करना चाहिये। (३) यदि गर्मी से बालक को दस्त हो तो बालक और दूध पिलाने वाली दोनों गर्मी से रक्षित रहे, ठण्डी वस्तु का सेवन करें, चावल आदि भोजन करें अथवा वंशलोचन, छोटी इलायची और मिश्री पीसकर माता के दूध में बालक को पिलावे। अतिसार पर अनुभूत योग तृतीयभाग मे लिखे गये हैं। देखो, पृष्ठ १८५-८६

(६) *अतिसार और ज्वर*—यदि अतिसार के संग ज्वर भी होवे तो नागरमोथा, पीपल, सतीस, काकड़ासिंगी इनका चूर्णकर शहद में मिलाकर चटावे। इस औषधि से खासी और दूध गिरना भी बन्द होता है।

(७) *आंव अतिसार*—जिसमे दस्तों के संग आँव भी आते हैं। इसकी औपधि वायविडंग, अजमोद और पीपल महीन घिस कर चावलों के पानी मे दे। यदि बिमारी कड़ी जान पड़े तो वैद्य या डाक्टर से उचित उपाय करावे।

(८) *रक्तातिसार*—उसे कहते हैं, जिसमे दस्तों के साथ लोहू निकलते हैं। इसकी औपधि यह है कि सफेद चीग, कुंई के जल में पीसकर मिश्री मिलाकर दे या मोचरस, मंजीठ फूल, कमल के फूल, इनको पीसकर साठी चावलों के

कड़ी बीमारी पर उचित उपाय करावे। रक्तातिसार पर अनुभूत योग तृतीय भाग में लिखे गये हैं। देखो, पृष्ठ १८५-८६

(९) अफरा—उसे कहते हैं, जब पेट फूल जावे। यह वहुधा अजीर्ण से होता है। इसकी औषधि यह है कि हींग को भुनकर और पानी में घिसकर टूडी के चारों ओर लेप करदे।

(१०) कान बहना—(१) सुदर्शन के पत्ते का रस निकाल कर गुनगुना करके कान में डाल दें, (२) लोध को महीन पीसकर कानमें डाल दे, बन्द हो जावेगा और दर्दभी जाता रहेगा, (३) यदि कानमें दर्द हो तो लड़के वाली स्त्री के दूध की चार बूँदे डलवा दे।

(११) ततैया का काटना—काटे हुए स्थान पर गेंदे का पत्ता या मोथा और वास मल दे अथवा नौसादर और चूना मल दे।

कुत्ते का काटना—(१) लालमिर्च पीसकर घाव मे भर दे, कुत्ते की विष्ठा जलाकर भर दे, (३) चिरचिड़े की जड़ को पीसकर शहद में चटा दे।

बावले कुत्ते का काटना—एक पके केले की फली को लेकर वरावर के तीन टुकड़े करे उसमें सिंह की खाल (पर बाल खूब उखाड़कर) एक एक रत्ती भरकर एक एक घण्टे पीछे खिलावे। आराम हो जायगा। सबसे अच्छा उपाय यह है कि जिस अस्पताल मे इसका इलाज होता हो, वहाँ भिजवा दे।

बिच्छू का काटना—(१) जमालगोटा पानी मे घिसकर लगा दे, (२) फासफोरस वा गन्धक लगा दे, (३) नोसादर और चूना लगा दे तथा सुँघा दे, (४) मूली के पत्तों का रस लगा दे।

(१५) साँप का काटना—यह बड़ा ही दुष्ट जन्तु है । इसके अनेक प्रकार हैं, जिनमें से कोई कोई तो बहुत ही विषैले होते हैं। भारतवर्ष में २१८ प्रकार के साँप गिने गये हैं, जिनमें ३३ प्रकार के बहुत ही विषधारी हैं। विषधारी साँप के काटने की पहिचान यह है कि उसके काटने में दुहरे दाँतों के चिन्ह दीख पड़ते हैं। जिनमें विष कम है, उनके इकहरे दाँत होते हैं । जहाँ सर्प काटखावे वहाँ बन्द बाँधना बहुत ही आवश्यक है । कालासाँप बहुत ही विषधारी है। औषधि तो अनेक हैं, परन्तु हुक्मी कोई नहीं है। इसमें सबसे अधिक ध्यान इसबात का रक्खे कि काटे हुए मनुष्य को सोने न दे, जैसे बने वैसे उसको चैतन्य रक्खे। इसी कारण हमारे यहाँ थाली बजाने की प्रथा जारी है, जिसको "ढाँक धरना" कहते हैं। आँखों मे ठण्ढे पानी के छींटे देते रहना चाहिये और सब से प्रथम काटते ही कस के बाँध दे । पीछे सूई से जहाँ जहाँ साँप के दाँत लगे हों, वहाँ वहाँ देखे कि कहीं दाँत टूटकर तो नहीं रहगया है। यदि रहगया होवे तो पहले उसको निकाल डाले और फिर औषधि दे।

(१) सफेद कनेर की जड़ की छाल और सात कालीमिर्च बारहतोले पानी मे पीसकर शीशी मे भर ले । एक एक घण्टे पर खूब हिला हिलाकर एक एक तोला पिलावे । यदि मुख बन्द हो तो चमचे से पिला दे । एकबेर ही देने से दो घण्टे में आराम हो जावेगा पर पहिले चार घण्टे मे इस औषधि का गुण जान पड़ेगा और चार घण्टे पीछे देह हिलने लगेगी।

(२) चिरचिड़ा का कोई सा अंग (पत्ता, डंठी या जड़) पानी

में पीसकर काटेहुए स्थानपर लगा दे और उस समय तक पिलावे जबतक कड़वा स्वाद न जान पड़े। जब कड़ूवा लगने लगेगा, तभी विष उतर जावेगा।

(३) हुक्के की कीट (जो नहचे में जमती रहती है) घी में मिलाकर चने बराबर खिलावे। काले साँप का भी विष उतर जावेगा। यदि एकबार के देने से लाभ न हो तो थोड़ी थोड़ी देर बाद दो तीन बेर देवे, निश्चय लाभ होगा। इस कीट को काटे हुए स्थानपर भी लगा दे।

(४) रीठा घोटकर पिलावे और कमलगट्टे की मींगी पीसकर आँख में आँजे।

(१६)अफीम का विष—(१) हींग को पानीमे घोलकर पिलावे, (२) रीठे का जल पिलावे, (३) फिटकरी का चूर्ण और बिनौले का सत खिलावें और जिसने अफीम खाई हो उसको कदापि सोने न दे, वल्कि टहलावे।

(१७) मक्खी का काटना—लोहे से घिसकर लेप करदे अथवा मक्खी की वीट ही पानी में घोलकर लगा दे।

(१८) मकड़ी का रोग—जब बालक के अंग से मकड़ी रगड़ जाती है तब उसके विष से फुंसी हो जाती है; जिनमे जलन और खुजली होती है। औषधि उसकी यह है कि नींबू के रस में चूना पीसकर लगावे।

(१९) नकसीर वा नाक से रुधिर वहना—(१) फिटकरी के पानीको नाक में सूँघे, (२) अनार के फूल का रस और श्वेत दूब

हवे तो मोम का मरहम कपड़ेपर लगाकर वा कपड़े को कड़वे तैल में भिगोकर लगा दे ।

(२८) आँख दुखने की दवा–तृतीय भाग अनुभूत योगमें देखो।

(२९) बालकों की हांफी—जिसको लोग पसुली की बीमारी भी कहते हैं। इस बीमारी में लड़के खेलते २ एकाएक आखें उलट देते हैं और चेहरे का रंग बदल जाता है, मालूम होता है कि मानो खतम हो गये । मगर जब मुँहपर पानी डालाजाता है और बदन में हवा लगती है तो फिर होश में आ जाते हैं। कोई कोई इसरोग को हब्बा-डब्बा भी कहते हैं। यह रोग बहुत बुरा है, इसकी उचित औषधि करानी चाहिये।

ज्वर *चिकित्सा*—ज्वर वह रोग है जिसका अधिकार देश मात्र पर सर्वदा सब काल में बना ही रहता है । किसी २ वर्ष में सब देशो मे अथवा एक दो देशो मे ज्वर का इतना प्रचण्ड वेग बढ़ता है कि मनुष्य मात्र को जड़ीभूत कर देता है। यह ज्वर आठ प्रकार का है,--(१) वातज्वर, (२) पित्तज्वर (३) कफ ज्वर, (४) वात पित्त ज्वर, (५) वात कफ ज्वर, (६) पित्त कफ ज्वर, (७) त्रिदोपज, जिसको सन्निपात ज्वर कहते हैं और (८) आगन्तुक ज्वर। ज्वर रोकने के लिये विद्वानों ने अनेक उपाय और यन्त्र किये परन्तु कोई अत्यन्त उपयोगी तथा लाभदायक यन्त्र न निकला और न कोई ऐसी औपधि ही किसी ने निकाली जो मनुष्यमात्रके ज्वर को एकमात्र दूरकर दे। यही कारण है कि प्रत्येक खण्ड के चिकित्सकोंने ज्वर को ही सबसे बड़ा और

भयानक रोग समझ उसका वर्णन विस्तारपूर्वक लिखा है। इस छोटे से लेख में यद्यपि हम ज्वर का विस्तार पूर्वक वर्णन नही लिख सकते तौ भी प्रधान २ अंशों पर एक सरसरी निगाह डालने की चेष्टा करेंगें। सम्भव है हमारे इस छोटे से लेख से हमारी माताओं और वहनों का कुछ लाभ हो।

ज्वर होने का कारण—ऋतु की प्रकृति के विरुद्ध भोजन, विना भूख के खाना, भूख लगने पर न खाना, कच्चे फलों को खाकर पानी पीना, वासी भात खाना, तेल दूध या दूध दही अथवा दही मूली एक साथ में खाना, वहुत धूप मे या अग्नि के सन्मुख रहने के वाद पानी मे भींगना, वर्षा में वहुत वौछार में रहना, रास्ते से वहुत थके हुए आकर जल पी लेना या स्नान कर डालना, कभी छाया कभी ओस में सोना, जुखाम की रक्षा न करना, इन्हीं सव कारणों से आमाशय में स्थित वातादिक दोप विगड़कर इस धातु में मिलके जठराग्नि को वाहर निकाल ज्वर रोग को उत्पन्न करता है।

ज्वर के लक्षण—निम्न लिखित लक्षण यदि किसी व्यक्ति मे पाये जाय तो जानना चाहिये कि उसे ज्वर आने वाला है।

(१) विना चले फिरे थकाई मालूम होना (२) शरीर का रंग कुछ वदल जाना, (३) मुख वेस्वाद, (४) नेत्रमे आँसू, (५) जंभाई और शरीर मे दर्द, (६) देह भारी, (७) रोम खड़े होना या जाड़ा मालूम देना, (८) वदन गरम और आँख में गर्मी मालूम पड़ना।

विशेष लक्षण—अत्यंत जंभाई और शरीर में दर्द हो वा

ऐंठन हो तो जानना चाहिये कि इससे बात ज्वर होगा; नेत्रमें दाह और शिर दर्द हो तो पित्त ज्वर और अन्न पर अनिच्छा होने से कफज्वर होगा।

ज्वर का सामान्य रूप केवल इतना ही है कि पसीना का न आना, शरीर बहुत गर्म, सम्पूर्ण शरीर जकड़ा सा जान पड़े या दर्द करे और शीत लगना।

ज्वर पर लंघन विचार—तरुण ज्वर में प्रथम ही उपवास कराने से दोष पच जाते हैं और यदि ज्वर धीमा हो गया हो और दोष भी पच गये हों एवं रोगी भी खाने की इच्छा प्रकट करे तो साबूदाना, मूँग का जूस, बारली अथवा भेंट का लावा देना चाहिये। यदि ज्वर रहे और भूख लगे तब भी यही हलका भोजन देवें, क्योंकि भूख लगने पर भोजन न देने से रोगी कमजोर हो जाता है और मरने का भय रहता है।

लंघन निषेध—गर्भिणी स्त्री, बालक, वृद्ध, बहुत कमजोर, भय युक्त, कामज्वर, शोक ज्वर और पुराने बुखार में उपवास न कराना चाहिये। साबूदाना आदि हल्का भोजन देते रहना चाहिये। यदि दूध-साबूदाना दे तो और अच्छा है।

ज्वर रोगी के लिये निषेध बातें—दिन में सोना, स्त्री अथवा पुरुष प्रसंग, परिश्रम, शीतल जलपान (गर्म पानी पीवे), क्रोध, अधिक हवा का सेवन और भोजन नया ज्वर वाला रोगी त्याग करे।

ज्वरके रोगीको दूध देना—पुराने बुखारवालेको और जिसका

कफ सूख गया हो उसे गाय का दूध अमृत के समान गुण करता है और नये बुखार में दूध विषके समान रोगी को मार डालता है।

ज्वर मे औषध खिलाने का नियम—कच्चे ज्वर में औषध न दे, क्योंकि कच्चे ज्वर में औषध देने से ज्वर और भी बढ़ता है। जब देखे कि ज्वर कुछ धीमा हुआ है और शरीर हलका हुआ है तथा वातादिक दोष यथास्थित हुए हैं तब जानना चाहिये कि अब दोष पचा है। उस अवस्था मे दवा देने से ज्वर का नाश होता है। लेकिन डाक्टर, रोग के आरम्भ मे भी औषधि देते हैं।

औषधि—पित्तज्वर—मुनक्का और पित्तपापड़ा एक एक भाग, अमिलतास का गूदा आधाभाग, कुटकी आधाभाग, मोथा १ भाग, बड़ा हड़ आधाभाग, सुगन्धवाला १ भाग—सब दवाइयों को २॥ तोले ले अधकचराकर पावभर जल मे एकमृत्तिका पात्र में धीमी आंचपर चुरावे। जब डेढ़ छँटाक जल रहजाय तब मलकर छान ले और तीन मासा शहद उसी क्वाथजल मे डाल के दोनों समय पिलावे। पिलाने से बेहोशी, जीभ का सूखना, बारम्बार प्यास लगना, अनर्थक बात बकना इत्यादि आराम होता है।

वातज्वर—खस, पृष्टिपर्णी, सोंठ, चिरायता, मोथा, जवासा, दोनों कटाई, गिलोय, बड़ा गोखरू—सब औषधि को समान भाग २॥ तोला ले उपरोक्त विधि से बनाकर पिलावे, निश्चय लाभ होगा।

कफज्वर—नीम का छाल, सोंठ, गुरुच, देवदारु, कायफर, चिरायता, पुष्करमूल; भटकटैया की जड़ और छोटी पीपर—सब दवा-

इयो को समान भाग २ तोला ले काढ़ा बना ३ मासा डाल दोनो समय पिलावे। निश्चय लाभहोगा।

अन्य ज्वर होनेपर किसी अनुभवी चिकित्सक से चिकित्सा करावे, क्योंकि वैद्य की जरा सी भूल भी ज्वर रोगी के लिये हानि-कारक हो उठती है। इसीप्रकार ज्वर रोगमें रोगी भी कुपथ्यकर मौत को अपने पास बुला लेता है।

(१) स्त्री *चिकिसा*—प्रसूत—यह रोग जापे ही में स्त्री को हो जाता है। इसीसे इसका नाम प्रसूत है। जच्चावस्था में जो स्त्रियाँ अपना खान पान नियम से नही रखती और थोड़ी सी भी असावधानी कर बेठती हैं, वे जन्मभर कष्ट भोगती हैं। इस रोग के लक्षण ये हैं,—(१) भीतर ज्वर का अंश बना रहना, (२) शरीर का टूटना, (३) प्यास अधिक लगना, (४) पेट, पीठ, पसली, कमर, घोटूँ इत्यादि मे सदा अथवा चाहे जब दर्द होना, (५) हाथ, पाँव वा पेट पर सूजनहो आना, (६) वेर बेर उलटी का आना, (७) जी मिचलाना (८) कब्ज रहना (६) डकारों का वहुत आना, (१०) निर्बलता और (११) मर्मस्थान मे सूल का होना।

जिस स्त्री को यह रोग हो जावे वह इतनी वस्तुओं से बचे,—भात, दही, खटाई, शर्बत, ठण्ढा पानी और ठण्ढी वायु। इस रोग में पथ्य ये हैं—अरहर वा मूँग की दाल, रोटी, दूध और गरम शाक। इस रोग की औषधि यह है,—(१) गोखुरू २॥ तोले ले कर आधा सेर पानी में औटावे। जब छटांक भर रह जाय तब

छटाक भर बकरी का दूध मिलाकर सात दिन तक दोनो समय सांझ सवेरे पीवे, निश्चय लाभ होगा। (२) एक माशा लोहबानका सत और दो रत्ती कस्तूरी मिलाकर सात गोली बांधे। एक गोली नित प्रातः काल खावे, (३) दशमूल का काढ़ा बनाकर पीवे, निश्चय लाभ होगा। बनाने की विधि पृष्ठ २६३ मे देखो।

(२) मूर्च्छारोग—इस रोग के कुछ ऐसे रूप हैं कि यहाँ की अशिक्षित बहनें इसको भूत, प्रेत, चुड़ैल और भूतनी मानकर रोग का कुछ उपाय नहीं कराती। केवल गंडे, तावीज, यन्त्र, मन्त्र, और मिर्च भभूत इत्यादि कराती हैं और विचारी स्त्री को व्यर्थ का कष्ट देती हैं। कहीं कहीं तो इन कुप्रबन्धों से रोगी स्त्री की मृत्यु ही हो जाती है। इस रोग के लक्षण ये हैं—दाँत बैठ जाते हैं, देह ऐंठकर कमान सी हो जाती है, वायु आँतों में घुम घुमाकर छाती तक आ जाती है और कण्ठ रुकसा जाता है, कभी २ पेट भी फूल जाता है, छाती में बहुत कष्ट होता है, साँस छोटी और जल्दी जल्दी आती है, और देह में कोई जगह ऐसी नहीं बचती, जहाँ पीड़ा न जान पड़ती हो। इस रोग की औषधि यह है कि दूध के साथ पान का रस मिलाकर दिया जावे तो यह रोग दूर हो सकता है। परन्तु सबसे अच्छा उपाय यह है कि किसी अनुभवी वैद्य या डाक्टर से उचित औषधि करावे। यह रोग बाँझ, विरहिन और प्रसूता स्त्रियों को अधिकतर होता देखा गया है।

(३) गर्भिणी के लिये हल्का जुलाब—अरण्डी का तेल दूध में डालकर पीवे। परन्तु एक चम्मच से अधिक न डाले।

(४) *गर्भिणी का वायु*—पाँच या सात बादामकी मींगी और एक मासे गेहूँ की साफ भूसी खा लिया करे तो वायु का कोप गर्भिणी को नहीं होने पायगा।

(५) *गर्भिणी का अफरा*—बच, रसोत, हींग, काली नमक, इनमें दूध औटाकर पीवे।

(६) *मूत्र न उतरे*—तो दाभकी जड़, दूबकी जड़ और कास की जड़ थोड़ी सी ले दूध मे औटा कर पीवे।

(७) *गर्भिणी के रुधिर का बहना*—कभी २ किसी किसी स्त्री को किसी कारण से ऐसा हो जाता है कि रुधिर बहने लगता है, जिससे गर्भको बहुत ही हानि पहुँचती है, बालक दुबला पतला हो जाता है, वरन कभी २ तो बिना समय गर्भ गिर भी पड़ता है। जब ऐसी दशा हो तो अनार के छिलके का पानी पिचकारी लेने से यह "जरायुप्रवाह" रुक जाता है। इस पानी के बनाने की यह विधि है कि अनार के फल का छिलका एक छटाँक, लौंग और दालचीनी का चूरा आठ आठ माशे लेकर मिट्टी की हांड़ी में डेढ़ पाव पानी में १५ मिनट तक मन्दी आग से उबाल ले, पर हाँड़ी का मुख बन्द रक्खे। जब उबल जावे तब उतार कर छान ले और ठएढा कर काम मे लावे।

(८) *स्त्री के पेट का बढना*—फलालैन की पट्टी पेट पर न बहुत कड़ी और न बहुत ढीली, बांधे रक्खे।

(९) *योनिरोग*—बीस प्रकार का वैद्यक शास्त्र में लिखा है। किसी अनुभवी वैद्य या डाक्टर से इस रोग की चिकित्सा करावे।

(१०) सुख से प्रसव कराने वाली औषधियाँ—इन औषधियों के सेवन करने से, प्रसव बिना दुख और सुगमता से हो जाता है। कलिहारीकी जड़ पानीमें पीसकर गर्भवतीके दोनो पावोंपर लेप करे और चिरचिरी की जड़ कमर में बाँध दे। दूसरी औषधि यह है कि फालसा या अडूसा पीसकर टूडीपर लेप करे तथा साँप की काँचली को पुट देकर जलावे और उसका काजल शहद मिलाकर आँख मे लगावे।

(११) *थनैला*—जो स्त्रियाँ बालको को दूध पिलाती हैं, उनके स्तनों में कई कारणों से गाँठ पड़कर फोड़े हो जाते हैं और फिर स्तन पक जाते हैं। कभी २ बालकों के शिर की चोट लगजाने से गाँठ पड़ जाती है और स्तन गीले रहने से फट जाते हैं। इसको थनैला रोग कहते हैं। इसकी औषधि यह है कि नागरमोथा और मेथी को बकरी के दूध में पीसकर लगावे, अरण्डी की पत्ती का रस निकालकर उसमे कपड़ा भिगो भिगोकर बेर बेर लगावे और सहजने के पत्ते पीसकर लेप करे। इन क्रियाओं से निश्चय लाभ होगा। परन्तु यदि कुच तड़क गये हों वा स्तनों में पीड़ा हो तो ग्लेसरिन चुपड़ दे वा घृतमें मोम मिलाकर चुपड़ देवे। यदि दूध से भरे स्तन तर्राते हों अथवा बालक न पीता होवे तो ऐसी दशा में तैल मलवावे।

(१२) *सोमरोग*—जिस प्रकार पुरुष को बहुमूत्र रोग होता है और अधिक मूत्र द्वारा धातु जाते जाते मनुष्य मर जाता है, इसी तरह स्त्रियों को सोमरोग होता है और यह भी ऐसा दुष्कर रोग है

कि यदि प्रारम्भ में उपाय न किया जाय तो फिर आराम होना कठिन हो जाता है और कुछ दिनों में स्त्री गलकर मर जाती है। इसके होने का भी कुपथ्य वही है जो प्रदर रोग में लिखता हूँ। रोग होने के साथ ही किसी अनुभवी वैद्य या डाक्टर से इसकी चिकित्सा करानी चाहिये।

(१३) प्रदर *रोग*—स्त्रियों के योनि के द्वारा रक्त अथवा धातु का जाना प्रदर रोग कहाता है और यह रोग इन कुपथ्यों से होता है,-(१) प्रकृति के विरुद्ध अधिक रूखा और गर्म भोजन करना, (२) शराब पीना, (३) खाने पर तुरन्त फिर खाना, (४) कच्चे गर्भ का गिर जाना, (५) अति मैथुन करना, (६) अधिक शौच और उपवास, (७) असहन बोझा का उठाना इत्यादि कारणों से वातादि दोष करके चार प्रकार का प्रदर रोग हो जाता है।

इसका सामान्य रूप यह है कि चारों प्रकार के प्रदर रोग में शरीर ऐंठता है और खफीफ पीड़ा होती है। प्रदर रोग के बहुत बढ़ जाने से शरीर दुबला हो जाता है, बिना मेहनत किये शरीर थका सा जान पड़ता है, शिर मे घुमरी और नेत्र में गर्मी मालूम होती है, पियास अधिक लगती है, शरीर में जलन तथा जी घबड़ाता है और शरीर की रंगत पीली जान पड़ती है। इसमें श्वेत प्रदर की अत्युत्तम औषधि यह है कि रतालु लाल और शकरकन्द, इन दोनों को सुखा और बराबर लेकर कूट, पीस, छानकर आधी मिश्री मिला, ६ माशे लेकर उसमें चार बूँद बड़ का दूध डालकर खा लेवे और ऊपरसे गौका दूध पी लेवे। यह क्रिया १५ दिनकरे, निश्चय लाभ होगा

सब प्रकार के प्रदर की यह औषधि है कि सुपारी के फूल, पिस्ता के फूल, मँजीठ, सिरयाली के बीज, ढाक का गोंद, चार २ माशे लेकर पानी के साथ फाँके तो सफेद, पीला, स्याह और दुर्गन्धयुक्त सब प्रकार का प्रदर रोग दूर हो।

(१४) रक्त प्रदर—वह है, जब स्त्री के गुप्त अङ्ग से मासिक रुधिर बराबर बहता रहे और बन्द न होवे, जिसको 'पैर कटना' वा 'पैर जारी होना' कहते हैं। इसका उपाय यह है कि आम की गुठली का चूर्ण करके, घी और बूरे में मैदा मिला हुआ हलुवा बनाकर अथवा आम की गुठली को आग में भुन भुनकर खिलावे, निश्चय लाभ होगा। पीले प्रदर की यह औषधि है कि कायफल कूटकर दूध के साथ खिलावे। परन्तु जब रुधिर बराबर निकलता ही रहे, रुके नहीं, प्यास अधिक लगे, शरीर में ज्वर और दाह हो और शरीर अति दुर्बल हो तो दशा दुस्साध्य समझनी चाहिये और इसका उचित प्रबन्ध करना चाहिये।

षष्ठम भाग

बच्चोंके सुधार पर वैज्ञानिक दृष्टि

आज कल के लड़के ही भविष्य में मनुष्य होंगे, उन्हीं पर हमारे कुल, जाति व देशका भविष्य निर्भर है, इसलिये उसको सन्मार्ग पर लगाने का प्रयत्न करना प्रत्येक माता पिता का कर्त्तव्य है । परन्तु बहुतेरे माता पिता इस ओर ध्यान नहीं देते । बहुतों में सुधारने की भावना होते हुए भी वे इसके उपाय नहीं जानते । बहुतेरे माता पिता ऐसे भी रहते हैं, जिनका आचरण स्वयम् ठीक नहीं रहता और जिनकी सन्तान बाल्य-कर इसी कारण बिगड़ जाती है । यदि माता पिता अपना

आचरण ठीक रखते हुए आरम्भ से ही बच्चों के सुधार की ओर ध्यान देना चाहिये। लकड़ी जब तक गीली रहती है तबतक उसे जिधर चाहो मोड़ सकते हो, सूखनेपर उसका मुड़ना कठिन ही नहीं असम्भव हो जाता है। जैसे मिट्टी के बनेहुए गीले पात्रपर यदि कोई चिन्ह बनादिया जाय तो वह जबतक पात्र मौजूद है तबतक कायम रहता है। उसी प्रकार बच्चों को भी जबतक उनका चित्त कोमल है तबतक जिस ओर चाहो लगा सकते हो। चाणक्य के कथनानुसार पन्द्रहवर्ष की अवस्था तक बच्चोंके हृदयपर सुसंस्कार डाले जासकते हैं। विगड़े हुए बच्चों को सुधारने के लिये सरकार ने जो रिफार्मेटरी स्कूल कायम किये हैं, उनमें भी इसी आयु तक के बच्चेलिये जाते हैं कारण यही है कि इसी वयस में बच्चों कासुधार या बिगाड़ हो सकता है। यही अवस्था उनको अधिकतर संभालने की है।

बच्चों के सुधार के लिये इस लेख में हम पहले उनके स्वभाव पर विचार करेंगे, क्योंकि बालक का स्वभाव जाने विना वास्तविक सुधार नहीं हो सकता। कारण ? जहाँ बच्चो को उपदेश की आवश्यकता, वहाँ वृथा दण्ड दिया जाता है और जहाँ लगाम खिंचीहुई रखनी चाहिये वहाँ ढीली छोड़ दी जाती है, जिसका परिणाम खेदजनक होता है। बालकों की अवस्था को हम तीन भागों में विभक्त कर उनके स्वभाव की ओर ध्यान दे सकते हैं।

(१) पहली शिशुता, जो कि जन्म से दो वर्ष पर्य्यन्त, अत्र तक कि दूध के सब दाँत निकल न आवें जब बच्चा पैदा होता है तब उसे इस ससार का बोध नहीं रहता। मनुष्य शरीर मे बाह्यज्ञान

होने के पाँच साधन हैं, जिन्हें हम पञ्च ज्ञानेन्द्रिय कहते हैं। सबसे पहले पैदा होते ही बच्चे की त्वचेन्द्रियपर संस्कार होता है। फिर वह आसपास मे होनेवाले शब्दों को सुनता है, फिर उसकी आखे खुलती हैं, तदनन्तर धीरे धीरे उसे इस संसार का भान होने लगता है। वार वार भान होनेपर वह पदार्थों को पहचानने लगता है। जो पदार्थ उसके पास अधिक आता है, उसे वह जल्दी पहचानने लगता है। यही कारण है कि सवसे पहले वह अपनी माता की गोद पहचानता है। शनैः शनैः वह पिता तथा और और लोगो को पहचानने लगता है। इस आयुमें जैसी परिस्थितिमें वह रहता है, वैसाही उसका ज्ञान होता है। पाठिकाओं ने सुना होगा कि आदमी का वच्चा भेड़ियोंके साथ रहकर उनकी चालढाल सीख गया था। वह मनुष्य की वोली भी नहीं वोल सकता था। यही कारण है कि बच्चा अपनी मातृ-भाषा विना प्रयास ही सीखलेता है।

(२) सारी कुमारता, अर्थात् दो वर्ष से सात आठ वर्षतक जबतक कि दूध के समग्र दाँत झड़कर ठहराऊ दाँत न आ जाँय। इस समय वच्चा अनुकरणशील रहता है वह अपने माँ-बाप को जैसा करतेहुए देखता है, वैसा ही वह भी करने लगजाता है। माता-पिता के आचरण का प्रभाव वच्चोंपर बहुत जल्दी पड़ता है। इस आयु में बच्चों में भूलजाने की आदत विशेषरूप में रहती है। यही कारण है कि बच्चे आपस में लड़ने के बाद फिर फौरन ही साथ साथ इस तरह खेलने लगजाते हैं, मानों उनमें कभी झगड़ा हुई ही न हो। इस आयु मे बच्चों का चित्त चञ्चल हो रहता है। मैं २८

बातपर एकाग्र नहीं रहते और न एक जगह बैठे ही रह सकते हैं वे हमेशा चलते फिरते और कुछ न कुछ करते रहते हैं। चञ्चलत के कारण एक ही बातको बार बार देखते या सुनते रहनेपर औ कईबार भूलनेपर उसे वह हृदयङ्गम करते हैं । अतः यदि बच्च भूल भी जाय तो बार बार उसे स्मरण कराकर उसे सुधार की ओर अग्रसर कराना चाहिये। भूल जानेपर बच्चे के साथ डाँट-डपट और मारपीट का ूर व्यवहार ठीक नहीं।

इस आयु में बच्चों को खेल भी बहुत पसन्द आता है। छोटी छोटी कौतूहलपूर्ण कहानियाँ उन्हें अधिक रुचती हैं । उन्हें इस आयु में उपदेशपूर्ण छोटी छोटी कहानियाँ सुनानी चाहिये। फिर बच्चों को इस आयु में यदि किसी नवीन पदार्थों का ज्ञान कराना हो तो वह पदार्थ उसके सामने लाकर दिखादेना चाहिये या उसे उस नवीन पदार्थ के विषय में खूब अच्छे और सरल ढंग से समझादेना चाहिये। ऐसा करने से बच्चे की तर्कशक्ति बढ़जाती है। इस आयु में बच्चों के स्वभावमें कौतूहल भी विशेष रहता है। किसी बच्चे को आप अपने साथ जहाजपर ले जाइये तो देखेंगे कि वह इञ्जिन के पास खड़ा रहना विशेष पसन्द करेगा । फिर इञ्जिन चलाने का काम करतेहुए देखकर उसका ध्यान ड्राइवर और कलकी ओर जायगा । ऐसी आयु मे बच्चे कितने पदार्थों को आश्चर्यभरी दृष्टि से देखकर उसकी चर्चा करते हैं और उनके सम्बन्ध मे कई प्रश्न करते हैं। इन प्रश्नों का उन्हें यथोचित उत्तर देना चाहिये। इससे उनके ज्ञानकी वृद्धि होती है । इस आयु मे

बच्चों को हठ भी विशेषरूप में रहता है। वे अपनी इच्छा पूर्त्ति के लिये अड़जाते हैं। मनुष्य स्वभाव में इच्छाओं के दो भेद हैं। एक सदिच्छा और दूसरी असदिच्छा, इसलिये बच्चों की सदिच्छा पूर्ण करनी चाहिये और असदिच्छा के लिये उन्हें समझना चाहिये।

(३) तीसरी किशोरावस्था है, जो कि कुमारता बीतने के उपरान्त सोलह वर्षतक गिनीजाती है। इसआयु में बच्चोंपर संगीत का प्रभाव पड़ता है। यहाँ तक कि जो बात माँ-बाप मे नहीं रहती वह बच्चे में आ जाती है। बच्चों का हृदय बहुत ही कोमल होता है। जैसी संगतिमें वे रहते हैं वैसाही उनपर असरभी पड़जाता है।

बच्चों के पहले साथी मा-बाप, भाई बहन, कुटम्बी तथा घर के नौकर चाकर और शिक्षक हैं, फिर पड़ोसी और टोले मोहल्ले के, फिर स्कूलों के लड़को से उनका साथ होता है। यदि कहीं दुष्ट स्वभाव के नौकर चाकर, शिक्षक और स्वेच्छाचारी लड़कों से उनका साथ हुआ तो वे बच्चे निश्चय ही बिगड़जाते हैं और यदि सुसंगति मिली तो वे लड़के सुधरजाते हैं सद्गुण प्राप्त करते हैं, जिससे कुल भी गौरवान्वित हो उठता है।

इस आयु के उपरान्त बच्चों मे कुछ सोचने और समझने की शक्ति आ जाती है। अर्थात् १५ या १६ वर्ष की आयु मे बच्चे सोचने समझने लगजाते हैं। ऐसी दशा मे भी पिता माता और उसके अभिभावक को उचित है कि उसे ढीला न छोड़ें, बराबर उनकी देखभाल करते रहें। ऐसा न होनेपावे कि बच्चा बिगड़जाय। इस आयु मे बच्चे बुरी संगति के प्रभाव से ही बिगड़ते हैं। मोह

और प्रेम भी लड़के को बिगाड़ने में सहायक होते हैं। इकलौती संतान प्रायः बिगड़ जाती है। कारण बालक का पिता अथवा माता वा अभिभावक इकलौती संतान समझकर प्रेम के वशीभूत हो सुधारने की चेष्टा नहीं करता। संतान विशेष मार पीट और गाली-गलौज से भी बिगड़ती है। अपनी संतानो के ऊपर तो माता पिता का केवल एकमात्र सुधार सम्बन्धी प्रेम और डराने के लिये केवल आँखों का भय ही काफी है। इसके विपरीत करने से बच्चा सुधरने के बदले बिगड़ता ही है, यह प्रमाणिक बात है।

विधवाओं का धर्म और कर्त्तव्य—बड़े बडे प्रसिद्ध पहलवान अपने मन की वृत्ति को रोककर जितेन्द्रिय बनते हैं और तभी वे द्वन्दयुद्ध की शक्ति उत्पन्न करते हैं। इसके विरुद्ध रात्रिभर विषय करनेवाले दुर्बलेन्द्रिय मनुष्य एक रात्रिभर विषय की वेदनाको नहीं रोक सकते, कारण इसका यह है कि इनके मन की वृत्तियाँ दूषित हो गयी हैं और ये दूषित वृत्तियों के फन्दे मे पड़कर लाचार हो गये है। शतशः उद्योग करनेपर भी अब ये मनकी वृत्तियों को जीत नहीं सकते। संसार मे जितेन्द्रिय और विषयी होने का यह एक स्पष्ट उदाहरण है और इसी उदाहरण को लेकर धर्माचार्य मनु लिखते हैं कि—

न जातुकामः कामना-मुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णावर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते॥

अर्थात्, कभी भी विषय के भोग से काम की तृप्ति नहीं होती। क्या कभी अधिक हवि डालदेने से अग्नि शान्त हो जाती है? थोड़ी-

देर शान्त रहकर फिर वह अग्नि प्रबलरूप से बढ़ जाती है, इसी प्रकार विषय से कामेच्छा थोड़ीदेर शान्त होकर फिर वह उग्ररूप से बढ़जाती है।

अब सिद्ध हो गया कि व्यभिचार की न्यूनता भोग से नहीं होती, किन्तु पवित्र मनद्वारा इन्द्रियावरोध से होती है। अतएव यदि विधवायें पवित्र मनद्वारा इन्द्रियावरोध करें तो अपना समस्त जीवन ब्रह्मचर्य पूर्वक व्यतीत करना उनके लिये एक साधारण बात है। धर्मशास्त्रों मे ऐसी उच्च विचारो वाली दिव्यगुण युक्त विधवाओ की बराबर प्रशंसा की गयी है। वास्तव मे ऐसी परम धार्मिक महिलाएँ प्रशंसा के योग्य हैं। सिर्फ मनुष्य समाज ही नहीं प्रत्युत भगवान के दर्बार मे ऐसी उच्च महिलाएँ पूजा को प्राप्त होती हैं। धर्म उनके जीवित मार्ग को सदा सुगन्धित बनाये रखता है। स्मृतियों मे स्थान स्थानपर उन विधवाओं की बड़ी प्रशंसा की गयी है जो अपने पति की मृत्यु के बाद अपना जीवन भक्ति तथा मनुष्यमात्र के कल्याणके लिये व्यतीत करती हैं। ऐसी स्त्रियों के लिये स्मृतिकारोंने तरह तरह के कायदे और कर्त्तव्य लिखदिये हैं, जिनके अनुकूल विधवा को अपना जीवन बिताना चाहिये। जैसा कि मनु महाराज ने लिखा है कि—

संसर्ग मांसभक्षण, पलंगपर शयन तथा लालवस्त्रों का धारण नहीं करना चाहिये।

मनु महाराज ने ऐसी स्त्रियों की प्रशंसा करते हुए कितने उत्तम शब्दों में कहा है कि "जिस प्रकार कईहजार कुमार ब्रह्मचारी ब्राह्मणोंने बिना सन्तान उत्पन्न किये ही स्वर्ग पाया है उसीभाँति पतिव्रता स्त्रियाँ अपुत्र होनेपर भी स्वामी के मरनेपर एक ब्रह्मचर्यव्रत धारणकर स्वर्ग जाती हैं।

आजकल कितने स्त्री पुरुष यह प्रश्न किया करते हैं कि मनुष्यों से स्त्री का काम शास्त्र ने आठगुना कहा है। जब थोड़े कामवाले पुरुषही जितेन्द्रिय नहीं बनसकते तो फिर अधिक कामवाली स्त्रियाँ किस प्रकार जितेन्द्रिय हो सकेंगीं?

दोनों बातें विचार शून्य है। कौन कहता है कि पुरुष जितेन्द्रिय नहीं हो सकता? क्या ब्रह्मा के पुत्र नारद जितेन्द्रिय नहीं थे? क्या ब्राह्मणों के सहस्रो कुमार जिनका उदाहरण मनु ने दिया है जितेन्द्रिय नहीं हुए? क्या क्षत्रियों मे भीष्म आदि कईएक वीर क्षत्रीय जितेंद्रिय नहीं थे? जो मनुष्य चाहता है औरअपने मनद्वारा इन्द्रियावरोध करसकता है वही जितेन्द्रिय हो सकता है। फिर यह क्यों कहा जाता है कि मनुष्य जितेन्द्रिय नहीं हो सकते? अठगुना काम रहनेपर भी स्त्रियाँ ब्रह्मचारिणी बन सकती हैं। बीसवीं शताब्दी से पहिले इसी भारतवर्षमें लाखों विधवायें ब्रह्मचारिणियाँ बनकर रहती थीं। इस बीसवीं सदी में भी सहस्रों विधवायें ब्रह्मचारिणी वर्त्तमान हैं फिर कौन कहता है कि स्त्रियाँ ब्रह्मचारिणी नहीं रह सकतीं।

यह प्रश्न तो वे ही महोदय कर सकते हैं जो विवाह को कामपूर्ति का अङ्ग समझते हैं। हिन्दूधर्म मे अथवा वैदिकधर्म मे विवाह स्त्री और पुरुष के लिये ऋतुकालाभिगामी होकर सन्तान उत्पन्न करने के लिये और संसार बन्धन तोड़ने के लिये है, न कि विषय वासनाओं मे लिप्त होने के लिये अथवा काम वासना को शान्त करने के लिये। जो स्त्री पुरुष विवाह को कामपूर्ति का अङ्ग समझते हैं वे भूलते हैं, क्योंकि काम की तृप्ति कभी नहीं होती।

भारतीय स्त्रियों मे ब्रह्मचर्यपूर्वक जीवन व्यतीत करने की शक्ति सदा से रही है और है। माता सीता को ही देखिये, रावण के बन्दी गृह में कितने वर्षों तक कैद रहीं परन्तु किसी की क्या मजाल जो उनके धर्मको डिगा सके। दीन हीन भारत, गुलाम भारत, विदेशियों के पैरों के नीचे कुचला हुआ भारत स्त्रियों के एक मात्र पतित्वरूपी अलौकिक धर्म के कारण और उनके ब्रह्मचर्यमय जीवन व्यतीत करने के कारण आज भी ऊँचे को शिर उठा रहा है। परन्तु शोक है कि फिर भी आजकल कितने स्त्री और पुरुष स्त्रियों के ब्रह्मचर्यपूर्वक जीवन व्यतीत करने पर कितनी ही शङ्कायें प्रकट किया करते हैं।

भारतीय विधवाओं के प्रति इस प्रकार की शङ्कायें प्रकट करना लज्जा का विषय है। यदि हम विधवाओं के ब्रह्मचर्यव्रत पर इसी प्रकार शङ्कायें प्रकट करते रहें तो सम्भव है एक दिन ऐसा आयगा जब लोग माता सीता के सतीत्व धर्म पर यह कहकर शङ्का प्रकट करेंगे कि शत्रु के यहाँ इतने वर्षों तक कैद रहनेवाली एक असहाय स्त्री किस प्रकार अपने सतीत्वधर्म को सुरक्षित रख सकती है?

पुरुषों जरा दूरदर्शिता से काम लो। उस समय तुम्हारे हृदय की क्या दशा होगी ? यह स्वर्णाक्षरों में अंकित करने वाला अमूल्य यश गँवाकर फिर तुम कहीं के भी न रहोगे। बात वास्तव में यह है कि पर स्त्री को माता समान समझने वाला पुरुष समाज आज पतित हो चुका है और वह अपने कर्त्तव्य से गिरकर स्त्री समाज को भी उनके अखण्ड पतिव्रतधर्मसे गिरा देना चाहता है। परन्तु यह असम्भव है और सृष्टि के अन्त तक असम्भव ही रहेगा।

पतिव्रत धर्म ही स्त्रियो का भूषण है। जो स्त्रियाँ पति की मृत्यु के पश्चात् भी अनेक विपत्तियों के आ पड़नेपर भी ब्रह्मचर्य का अखण्ड पालन करती हैं, भगवान्‌का अक्षय प्रेम उनके दिव्य मस्तकपर वर्षाकी पावन धाराकी तरह बरसता है। वसुन्धरापर विचरने वाले अमृत पुत्र उसकी यशोगाथा पवित्र सुगन्ध की तरह विस्तृत कर देते हैं। इहलोक और परलोक दोनो ही असीम आनन्दके साथ उनका स्वागत करते हैं। इस एक अमूल्य सतीत्व रत्न की रक्षा के कारण संसार उसके भव्य चरणोंपर नतमस्तक होता है। इसलिये हे वैधव्यव्रत का अखण्ड पालन करने वाली देवियों ! तुम्हारा कल्याण हो ! तुम्हारे पतिव्रतहुताशन मे सब कुत्सित वासनाएँ जलकर भस्म हो जाती हैं। तुम्हारे सादगीव्रतकी उज्ज्वल चमकमें शृङ्गारकारी आभूषणोंकी आभा मन्द हो उठी है। तुम धैर्य्यपूर्वक इसी का अवलम्बन करो। यदि इस स्वर्गीयव्रत के पालन में संसार के क्षुद्रप्राणी विघ्न लेकर उपस्थित हों तो उन्हें भी अपने अनुभव उत्साह और आत्मिकबल से तिरस्कृत कर दो। यही तुम्हारा आदर्श

है। यही तुम्हारे कुलकी श्रेष्ठतम मर्यादा है। यदि तुम इस उच्चतम व्रतका पालन करने में अपने को असमर्थ पाओ तो व्रतपति परमात्मा से बारम्बार अपने को धर्मपर आरूढ़ रखने की प्रार्थना करो। इसपर भी यदि मानससुलभ अक्षमता के कारण तुम आत्मविजय न करसको तो कुमार्गपर आरूढ़ होनेकी चेष्टा कभी मतकरो और निम्नाङ्कित नियमो का पालन करो, अवश्यमेव तुम ब्रह्मचर्यव्रत मे सफलता प्राप्त करोगी।

(१) सर्वदा सादा, सूक्ष्म और सात्विक भोजन करो।

(२) भड़कीले वस्त्र भूलकर भी न पहनो और शृङ्गार से बराबर घृणा करो तथा कोमल शय्या पर हर्गिज न सोओ।

(३) चित्त को बराबर शान्त और स्वच्छ रक्खो और यदि हो सके तो नित्य प्रति भगवान का भजन और कीर्तन करो। ऐसा भी न हो कि लोक लज्जा के लिये तो भगवान का भजन किया जाय और अन्तस्तल शुद्ध नहीं।

(४) किसी से लड़ाई झगड़ा और द्वेष न करो।

(५) किसी के बहकावे मे भूलकर भी न आओ।

(६) उपन्यास, शृङ्गार रस की कहानियाँ और नौटंकी आदि की पुस्तकें कभी न पढ़ो।

(७) मन के द्वारा इन्द्रियावरोध करने की चेष्टा करो। काम की उत्तेजना होने पर उपवास, व्रत और भगवान का स्मरण करो तथा धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन करो।

(८) नित्य ठण्डे पानी से स्नान करो।

(९) यदि घर वाले तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार करें, भली प्रकार भोजन न दें, कपड़ा न दें, प्रत्येक क्षण भयंकर कोप से डाटा डपटा करें वा कभी कभी मार भी बैठें जैसा कि कितने नराधम स्त्री और पुरुष किया करते हैं तो इस व्यवहार से दुखित होकर घर से भाग निकलेने कि चेष्टा भूलकर भी न करो । समाज के किसी हितैषी पुरुष को घरवालों के राक्षसी कर्म की सूचना देकर अपने उचित प्रबन्ध के लिये उससे प्रार्थना करो ।

(१०) कितने कामी पुरुष विधवाओं पर बुरी दृष्टि करते देखे जाते हैं और कहीं तो पति के घराने के मनुष्य ही विधवा के धर्म को बिगाड़ने पर उतारू हो जाते हैं । विधवाओ को ऐसे ऐसे नीच पुरुषो की हरकतो से बचना चाहिये ।

(११) रुपयों का लोभ, धर्म में संकट उपस्थित कर देता है । इसलिये विधवाओ को इस लोभ के वशीभूत कभी न होना चाहिये ।

(१२) कितने साधु, फकीर, पण्डित, पुजारी, पण्डे और ब्राह्मण विधवाओं को इधर उधर के झूठे उपदेश सुना बहका डालते हैं और फिर उनके पवित्र धर्म पर आघात करते हैं, ऐसे नीच और पापाचारियो से विधवाओं को बचना चाहिये ।

(१३) भावज, ननद अथवा और किसी स्त्री के भोग विलास की चर्चा विधवा को अपने हृदय मे कभी न उठानी चाहिये ।

स्त्रियों के लिये उपवास और व्रत—आहारान् पचति शिखी, दोषान् आहारं वर्जितः । अग्नि से आहार पचता है और उपवास से दोष पचते हैं ।

हमारे हिन्दू धर्म-शास्त्रों मे उपवास का बहुत महत्व लिखा है। उपवास से शरीर, मन और आत्मा सब ही की उन्नति होती है। शरीर में दोषों के बढ़ जाने से इन्द्रियों का वेग बढ़ जाता है और मन काबू से बाहर होने लगता है। उपवास से सब दोष नष्ट हो जाते हैं और शरीर स्वस्थ और हल्का सा मालूम होता है। स्वस्थ शरीर के कारण मन भी चंगा रहता है।

स्त्रियों के लिये धर्म-शास्त्रों में गणेश-चौथ, वामन द्वादशी, हरछठ, प्रदोष, चन्दा छठ, शिवरात्रि, जन्माष्टमी, एकादशी, पूर्णमासी आदि कई तिथियों के दिन उपवास करने की आज्ञा है। धार्मिक महत्व के कारण बहुतेरी स्त्रियाँ इनका पालन भी करती हैं पर उपवास के इस रहस्य को न जानने के कारण कितनी स्त्रियाँ उपवास के पहले दिन पेट भरकर खूब मिष्टान्न आदि पदार्थ खा लेती हैं। कितनी बहनें फलाहारी उपवास करती हैं और उसमें भी ऐसे ही गरिष्ट पदार्थ खाती हैं। ऐसे नामधारी उपवास से तो न करना ही उत्तम है। वास्तव में उपवास के दिन कुछ भी न खाना चाहिये। दूसरे दिन हलकी चीज खानी चाहिये।

व्रत रख उपवास करने की प्रथा स्त्रियों में हद से ज्यादा दिखलाई पड़ती है, जो कि स्वास्थ्य की दृष्टि से उनके लिये हानिकर है। महीने में ज्यादासे ज्यादा दो या तीन दिन उपवास किया जा सकता है। फिर रोगिणी, गर्भिणी और दूध पीते हुए बच्चे की माता का उपवास करना विशेष ही हानिकर है। क्योंकि जो स्त्री उपवास करेगी वह दुर्बल तो होगी ही और स्त्री के दुर्बल होने से गर्भस्थ

स्त्री के स्वास्थ्य पर आघात होगा, गर्भस्थ बालक की शक्ति क्षीण होगी और माता के दूध में कमी होने से बच्चे को भूखों मरना पड़ेगा। अगर सच पूछा जाय तो व्रत का अर्थ किसी अच्छी बात को स्वीकार कर धारण कर लेना है। जैसे सत्य का व्रत, परोपकार का व्रत, पति सेवा का व्रत, देश सेवा का व्रत, छल कपट और मिथ्या के त्याग का व्रत। परन्तु मास में एक, दो वा तीन वेर व्रत रख उपवास करना स्वास्थ्य के लिये बहुत ही लाभदायक है।

महीने में एक वा दो वेर उपवास करने से बड़ी सहायता मिलती है। विधवायें भी इसकी सहायता से अपनी इन्द्रियों को वश मे रख सकती हैं। उपवास का दिन हँसी मज़ाक या खेल तमाशे में न खोना चाहिये, बल्कि वह दिन भगवद्-भजन, उत्तम ग्रन्थों का पठन व श्रवण आदि शुभ कर्मों में व्यतीत करना चाहिये। इस तरह के उपवास से ही वास्तव में शारीरिक और मानसिक लाभ हो सकता है, अन्यथा नहीं।

स्त्रीयों का क्या धर्म है—द्वार पर खड़े हुए हाय अन्न! हाय अन्न! कर छटपटाने वाले क्षुधा-पीड़ित अनाथ बालक को मुट्ठी भर अन्न न देकर धर्म के नाम पर पाखण्डियों को मुट्ठी भर भर रुपये देना धर्म नहीं। रोगग्रसित सास-श्वसुर को मृत्यु शय्या पर कराहते हुए छोड़कर तीर्थ क्षेत्रों और मन्दिरों में जाना धर्म नहीं। हृदय को शुद्ध न कर गंगा में गोते लगाना धर्म नहीं। पति के वचनों पर विश्वास न कर कथा और पुराणों का सुनना धर्म नहीं। धर्म तो भाव मे है, जिनका भाव शुद्ध नहीं वे मातायें और बहनें

हजारों मन मिट्टी और सैकड़ों घड़े जल से भी शुद्ध नहीं की जा सकती। जैसा कि कहा भी है:—

मृत्तिकाना सहस्त्रैस्तूदककुम्भ शतान्यपि।

न शुध्यन्तिदुरात्मानो, येपां भावोन निर्मलः॥

हजारों तरह के देवताओं को पूजना धर्म नहीं, पीर-पैगम्बरों के पास जाना धर्म नहीं, गंगा में जल्दी जल्दी गोते लगाना धर्म नहीं, गो-मुखी में हाथ डालकर भगवान् को वहकाना भी धर्म नहीं। धर्म शिवालय में नहीं, गंगा में नहीं, तीर्थ में नहीं, पुस्तकों में नहीं, धर्म हृदय के भीतर है। यदि तुम्हारे हृदय में दया और पतिव्रता है, पति भक्ति और सत्यता है तो तुम निश्चय ही धर्मात्मा हो और यदि इसके विपरीत चलती हो तो तुम्हारा तीर्थ-क्षेत्रों में जाना, कथा और पुराणों का सुनना, धर्म के नाम पर हजारों रुपये लुटाना और गंगा में गोते लगाना व्यर्थ है; तुम लोगों की आंखों में धूल झोंकती हो; धर्म पर कुठाराघात करती हो; आत्मगौरव को शंखिया देती हो और बड़ा भारी पाप करती हो।

अन्धपरम्परा तथा धर्मान्धता के अन्दर सीमित नहीं हो सकती। धर्म विशाल है। उसके सारे अवयव भी विशाल हैं। एतदर्थ उसकी परिभाषा भी विशालता शून्य नहीं है।

माताओं और बहनों! तीर्थक्षेत्रो में जाओ परन्तु आतिथ्य सत्कार करना सीखो धर्म है; मन्दिरों मे जाओ परन्तु सास-श्वसुर की सेवा भी करो धर्म है, कथा और पुराण सुनो परन्तु पति के बचनोपर विश्वास रखकर उनकी आज्ञाओं का अक्षरशः पालन भी करो धर्म है; मुट्ठी भर भर रुपये लुटाओ किन्तु क्षुधाजर्जरित और वस्त्रहीनो के प्रति हृदय में दया भी रक्खो धर्म है, साधु और महात्माओं के आगे नतमस्तक होओ परन्तु अपने गुरुजनों और वृद्धजनोंका भी सन्मान करो धर्म है, पाखण्डियो का भले ही सत्कार करो परन्तु विद्वानों का भी आदर करो धर्म है, गो-मुखी में हाथ डालकर माला गटकाओ परन्तु ईश्वर के प्रति सच्ची भक्ति हो धर्म है, गंगा मे गोते लगाओ परन्तु हृदय को भी शुद्ध रक्खो धर्म है। इससे बढ़कर स्त्रियों के लिये संसार में दूसरा धर्म ही नहीं।

सती महात्म्य।

पुरुषाणां सहस्रञ्च सतीनारी च समुद्धरेत।
पतिः पतिव्रताणाञ्च मुच्यते सर्वपातकात् ॥ १ ॥

एक सती स्त्री हजारों पुरुषों का उद्धार करसकती है। पतिव्रता का पति सबपापों से छूटजाता है।

नास्ति तेषां कर्मभोगः सतीनां व्रततेजसा ।
तया सार्धञ्च निष्कर्मा मोदते हरिमन्दिरे ॥ २ ॥

सती स्त्रियो के व्रत के तेज से उसके पति के कर्मभोग रहते ही नहीं। वे निष्कर्म (अर्थात् जिनके कर्म-भोग क्षीण हो गये हैं) होकर सती के साथ ही ईश्वर के धाम में विहार करते हैं।

पृथिव्यां यानि तीर्थानि सतीपादेषु तान्यपि ।
यत्तेजः सर्वदेवानां मुनीनाञ्च सतीषु तत् ॥ ३ ॥

पृथ्वी मे जो तीर्थ हैं वह सब सती स्त्रियों के चरणों में हैं। उसी तरह देवताओं और मुनियो का तेज भी सदा सतियो के अन्दर निवास करता है।

तपस्विनां तपः सर्वं व्रतिनां यत् फलं व्रते ।
दाने फलं च दातॄणां तत् सर्वं तासु सन्ततम् ॥ ४ ॥

तपस्वियों का सारा तप, व्रतियो के व्रत का फल और दाता के दान का फल यह सब स्त्रियो मे निरन्तर वास करते हैं।

स्वयं नारायणः शंभुर्विधाता जगतामपि ।
सुराः सर्वे च मुनयो भीतास्ताभ्यश्च सन्ततम् ॥ ५ ॥

स्वयं नारायण, शम्भु और जगत की सृष्टि करनेवाले ब्रह्मा और उसी तरह सारे देवता और ऋषि मुनि भी सदा उनसे डरते रहते हैं।

सतीनां पादरजसा सद्यः पूता वसुन्धरा ।
पतिव्रतां नमस्कृत्य मुच्यते पातकान्नरः ॥ ६ ॥

सतियों की चरण-रज से पृथ्वी तुरन्त पवित्र होती है । पतिव्रता को नमस्कारकर मनुष्य पापों से मुक्त होता है ।

त्रैलोक्यं भस्मसात् कर्तुं क्षणेनैव पतिव्रता ।
स्वतेजसा समर्था सा महापुण्यवती सदा ॥ ७ ॥

महापुण्यवती सती स्त्री अपने तेज से त्रैलोक्य को भी क्षणभर में भस्म करडालने की सदा शक्ति रखती है ।

सतीनाञ्च पतिः साध्वीपुत्रो निःशंक एव च ।
नाहि तस्य भयं किञ्चिद्देवेभ्यश्च यमादपि ॥ ८ ॥

सती साध्वी स्त्री का पति और पुत्र सदा निःशंक रहता है, देवताओं और स्वयं यमराज से भी उन्हे कोई भय नहीं ।

(वाराह-मिहिरकृत बृहत्संहिता)

पातिव्रत का प्रभाव—प्राचीन समय में कितनी ही भारतीय देवियो ने अपने पातिव्रत के प्रभाव से चमत्कारपूर्ण कार्यों को कर संसार को आश्चर्य में डालदिया था, लोगो की आँखो में चकाचौंध पैदा करदी थी और असम्भव घटनाओं को सम्भव वनादिया था । उन देवियो में से कुछ देवियो के उन चमत्कारपूर्ण कार्यों का वर्णन संक्षेप में लिखदेना आवश्यक प्रतीत होता है । आजकल की माताएँ और वहिनें भले ही उन घटनाओ को केवल कपोल कल्पित और मिथ्या समझैं परन्तु वास्तव में उन देवियों के लिये अपने पातिव्रत के प्रभाव से उन चमत्कारपूर्ण कार्योंका करना कोई बात नहीं थी । आज की माताएँ और वहिनें भी यदि पूर्णतया

पातिव्रत का पालन करसकें तो समय पड़नेपर वे भी असम्भव घटनाओं को सम्भव कर संसार को आश्चर्य में डालसकती हैं । यह प्रभाव तो पातिव्रत धर्म का है । जिसकी इच्छा हो वही देवी इस व्रतका पालनकर संसार में अपनी कीर्त्ति-कौमुदी का विस्तार करसकती है और अपने पातिव्रत धर्मका दीपक जलाकर प्रकाशहीन परिवार को प्रकाशमय करसकती हैं। पातिव्रत धर्मकी शक्ति मामूली नहीं है । इस शक्ति के आगे समस्त शक्तियों को शिर झुका देना पड़ता है। इसकी पुष्टि में हम आप के आगे कुछ इतिहास रखते हैं—

कौरव जननी गान्धारी—बहुत ही धर्मशीला और तेजस्वी स्त्री थी। जिस समय जन्मान्ध धृतराष्ट्र के साथ इसका विवाह हुआ था उस समय इसने अपनी आँखोंपर पट्टी बाँधकर देवताओं की आराधना करते हुए इसबात की प्रतिज्ञा की थी कि मैं कभी अपने पति को अन्धा समझकर उनपर अपनी भक्ति कम न होने दूंगी। गान्धारी जब कुरुराज के घर गयी तो इसके सदाचार और सुशीलता से कौरववंश के सभीलोग बहुत अधिक सन्तुष्ट हुए थे। गान्धारी ने कभी अपने पापिष्ट पुत्रों का समर्थन नहीं किया। बल्कि उनके उनके पापाचरणों का तीव्र विरोध करती थी।

कौरवों के अन्याय और अत्याचार के कारण पवित्र भारत में महाभारत का संग्राम छिड़ा। सत्रहदिन संग्राम होचुका था, उसीरात्रि को दुर्योधन शिविर से चल अपनी माता गान्धारी के पास आया, माता के चरण छूकर प्रणाम किया, माताने आशीर्वाद दिया। उस समय गान्धारी ने प्रश्न किया,—"बेटा ? कैसे आना [illegible] ? कौरव

बोला—"जननि ! मैं अन्तिम प्रणाम करने आया हूँ, कल महाभारत का अठारहवाँ दिन है, मेरा और भीम का गदा-युद्ध होगा, उसमें भीम मुझे मार लेगा, इसलिये मैंने यह उचित समझा कि मरने से पहले एकबार माता को और प्रणाम करलूँ ।"

गान्धारी ने समझ लिया कि दुर्योधन के सब साथी दिव्य पराक्रम दिखलाकर वीरगति को प्राप्त हो चुके हैं तथा दुर्योधन का कोई रक्षक नहीं है, यह समझ गान्धारी बोली—"बेटा ! मैं तुझे जीवित रहने का एक उपाय बतलाती हूँ, यदि तुम इस उपाय को करोगे तो फिर मर न सकोगे । उपाय यह है कि तुम युधिष्ठिर के पास जाकर अपने बचने का उपाय पूछो, वे तुम्हे अवश्य ही बचने का उपाय बतलावेंगे ।"

दुर्योधन, युधिष्ठिर के पास पहुँच उनके चरणों पर गिर मृत्यु से बचने का कोई उपाय पूछने लगा । युधिष्ठिर बोले—"दुर्योधन ! तुम जानते हो कि तुम्हारी माता गान्धारी सच्ची पतिव्रता है । विवाह के समय आपकी माता ने यह समझकर अपने नेत्रोंपर पट्टी बाँध ली कि जब मेरे पति संसार के किसी पदार्थ को नहीं देखते तो फिर मेरा भी कोई अधिकार नहीं कि मैं संसार के पदार्थको देखूँ । वह पट्टी आजतक ज्यों की त्यों बँधी है । उस उच्चश्रेणी की पतिव्रता स्त्रियों में अलौकिक शक्ति होती है । अतः यदि तुम सर्वथा नग्न होकर अपनी माता के सामने चले जाओ और वह एक दृष्टिसे तुमको देखले तो तुम्हारा शरीर वज्र से भी मजबूत हो जायगा । फिर एक भीम की कथा कौन कहे, सहस्रों भीम भी तुमको युद्ध में नहीं मारसकेंगे।"

युधिष्ठिर के इस कथन को सुन दुर्योधन वहाँ से माता के समीप चलदिया । मार्ग में 'कालिया' और 'कृष्णा' ने दुर्योधन से पूछा कि राजन् कहाँ गये थे ? दुर्योधन ने उत्तर दिया,—"युधिष्ठिर के पास मृत्यु से बचने का उपाय पूछने के लिये गया था ।"

कालिया ने कहा—युधिष्ठिर पागल होगया है । जो जी में आता है बकता रहता है । बतलाओ, उसने मृत्यु से बचने का क्या उपाय बतलाया ?"

दुर्योधन बोला—"मुझसे उन्होंने यह कहा कि तुम अपनी माता के सामने नग्न होकर चलेजाओ । यदि तुम्हारी माता एक दृष्टि से तुम्हें देख दे तो तुम्हारा शरीर वज्र का हो जाय और फिर तुम शत्रु के मारे न मरो ।"

इसको सुनकर कालिया बोले—"अरे राम राम ! दुश्मन पागल होनेपर भी शत्रुता ही करता रहता है, कैसी बेइज्जती कराना चाहता है, भला तू इतना बड़ा होकर जननि के सामने नग्न होकर कैसे जा सकेगा ?"

दुर्योधन ने उत्तर दिया—"इसमें बेइज्जती तो निश्चय है, परन्तु राजा युधिष्ठिर सच बोला करते हैं, सम्भव है उनकी यह बात भी सत्य हो । अतः हमारी इच्छा है कि हम माता के सामने नग्न हो कर जाँय ।"

कृष्णा बोले—"एक काम करो, वृक्षों के पत्तों का लँगोटा बनाकर और गुह्यस्थान को ढाँक कर तुम माता के सामने चले जाओ, तब कैसे बेइज्जती होगी ?"

दुर्योधन बहुत अच्छा कह चलदिया।

दुर्योधन माताके स्थानपर पहुँचा और फूलोंसे गुह्यस्थान को ढाँक माता के सामने गया और युधिष्ठिर का समस्त कथन सुनादिया। सुनकर माता ने कहा,—बेटा! राजा युधिष्ठिर ने तुमसे जैसे कहा, क्या तुम वैसे ही आये हो?" सुनकर दुर्योधन ने कहा—"हाँ।" गान्धारी ने बार बार अन्तःकरण में पति के चरणों का ध्यान किया और कुछ शोक करने लगी कि पुत्र के लिये आज हमको अपने नियम का उल्लंघन करना पड़ रहा है। अन्त में आँखसे पट्टीखोली और एक दृष्टि से दुर्योधन को देखकर फिर पट्टी को नेत्रों से बाँध दिया और कुछ विचारकर बोली कि क्या रास्ते में कृष्ण मिलगये थे और उन्होंने तुमसे क्या कहा?

इस कथन को सुन दुर्योधन चकित हो गया और विचार करने लगा कि कृष्ण के मिलने का ज्ञान माता को कैसे हुआ। विचार के पश्चात् दुर्योधन ने माता से कृष्ण का मिलना बतलाया और साथ ही साथ यह भी प्रश्न किया कि कृष्ण के मिलने का ज्ञान आप को कैसे हुआ? इस प्रश्न को सुनकर गान्धारी बोली कि जो शक्ति मनुष्यों को योग द्वारा प्राप्त होती है, वही शक्ति स्त्रियों को पातिव्रत धर्म से मिलती है। मैंने दिव्य दृष्टि से कृष्ण का मिलना जानलिया, तेरा और तो समस्त शरीर वज्र से भी मजबूत हो गया किन्तु जितने शरीरपर तुमने फूलों के गजरे लगाये हैं, वह कच्चा रहगया। यदि यहाँपर शस्त्र लगेगा तो तुम मर जावोगे। कृष्ण ने तुम्हारे मरने के हेतु से गुह्याङ्गोंपर मेरी दृष्टि का अवरोध करदिया।

इसको सुनकर दुर्योधन बोला कि माता! अब से सर्वथा नग्न हुआ जाता हूँ, आप समस्त शरीरपर दृष्टि डाल दें।

माता ने दुर्योधन से कहा कि बच्चा! अब वह भव्य शक्ति जाती रही, अब दृष्टि में इतना महत्व नहीं रहा कि उसके पात से मनुष्य शरीर वज्र सम हो उठे। दुर्योधन चुप हो गया, किन्तु गन्धारीको कृष्णपर क्रोध आया और शापदेने को तैयार हो गयी। क्रोध युक्त गान्धारी ने सव्यहाथ में जल लेकर कृष्ण को शापदिया कि मेरे पुत्रोंको तैने ही मरवाया है, यादरख! मेरे इस शाप से तेरे कोटि कोटि यादव परस्पर मे लड़कर नष्ट हो जावेंगे।

यह शाप किसी साधारण पुरुष को नहीं हुआ, यह उस भगवान कृष्ण को हुआ जिसके रोम रोम मे कोटि कोटि ब्रह्माण्ड घूमते हैं। यह पातिव्रत के प्रभाव का कैसा ज्वलन्त उदाहरण है?

सावित्री—मद्रदेश के राजा अश्वपति की कन्या थी। जब इसने युवावस्था मे पदार्पण किया तो उसके अपूर्वरूप को देखकर सबों की यह धारणा होती कि यह कोई मानवी नहीं, वरन देवी है। इसी कारण कई युवक सगाई करने आये, परन्तु सावित्री की देवी सी कान्ति देखकर उनके हृदय में प्रणय की जगह भक्ति का भाव पैदा हुआ और वे विवाह के प्रति अनिच्छा प्रकट कर वापस फिर गये। हार मानकर राजा ने कन्या को अपने योग्य वर ढूंढने की अनुमति दे दी।

अनुकूल वर निश्चय किया । सत्यवान भी सावित्री के गुणों तथा उसके असाधारण सौन्दर्य से मुग्ध हो गया था । किन्तु अपनी दरिद्रावस्था को देख उसे यह अभिलाषा करने का साहस न हुआ कि यह गुणवती राजकुमारी उसकी पत्नी बने ।

सावित्री ने अपनी इच्छा पितापर प्रकट की । वहींपर बैठे हुए नारदने भौंहें टेढ़ी कर कहा—"सावित्री ने यह काम ठीक नहीं किया । सत्यवान में सब गुणों के होते हुए भी वह बहुत ही कम उम्रवाला है । आज से ठीक एकवर्ष बाद वह मृत्यु के मुख में चला जायगा ।"

नारद की बातपर राजा अश्वपति ने सावित्री से कहा—"तुम अपने मन से सत्यवान का विचार एकदम निकाल दो और अपने लिये कोई दूसरा वर पसन्द करो ।"

प्रिय पाठिकाओं ! सावित्री ने इस समय पिता को जो उत्तर दिया वह आज भी तुम्हारे कानों में गूँजता रहना चाहिये । उसने कहा—"कन्या का दान केवल एक ही बार कियाजाता है औरकोई वस्तु दूसरे को केवल एक ही बार दी जाती है । इसलिये जब मैं सत्यवान को आत्मसमर्पण कर चुकी तब फिर वह चाहे अल्पायु हो या दीर्घायु, जबतक इस देह में प्राण है तबतक मैं किसी दूसरे का पाणिग्रहण नहीं करूँगी ।"

पाठिकाओ ! सुना आपने सावित्री का उत्तर ! आज से हजारों वर्ष पहले इस आर्यबाला ने स्नेह-बन्धन का कैसा उच्च आदर्श

उपस्थित किया था। इसपर जरा विचारकर देखिये और आर्योंकी पवित्र भावना की स्तुति कीजिये।

इसके बाद शुभ मुहूर्त्त मे ऋषि और ऋषि-पत्नियों के सामने पवित्र अग्निकी साक्षी में वेद के उच्चार सहित सवित्री का सत्यवान के साथ विवाह हो गया। पुत्री को तपोवन-ससुराल-में ही छोड़कर राजा अश्वपति अपनी राजधानी को लौट आये।

पिता के विदाहोने के बाद सावित्री ने राजकीय वेश का परित्याग करदिया और सत्यवान के भगवे वस्त्रधारण कर लिये। इस प्रकार सावित्री राजकुमारी से तपस्विनी बन गयी। सावित्री सच्चे हृदय से आश्रमधर्म का पालन करने लगी। स्वामी तथा अन्धे सास-ससुर की सेवा, अतिथि सत्कार तथा यज्ञ हवन आदि की सामग्री तैयार करना उसका नित्य प्रति का काम हो गया था।

एकबार सावित्रीने त्रिरात्र व्रत किया। सास-ससुरने सावित्री को समझाया—"इतना कठिनव्रत तेरे सुकुमार शरीर से हो सकेगा, तीन दिनतक निराहार और निर्जल रहने की तेरी शक्ति नहीं है।" सावित्रीने कहा—"आप सबों के आशीर्वाद से मैं इसव्रत का अवश्य उद्यापन करूँगी, इसमें आप किसी तरह का सन्देह न करें।" वधू की इतनी दृढ़ता देखकर फिर उन्होंने आपत्ति नहीं की।

से सावित्री विधाता के नियमको भी पराजित करने के लिये दृढ़ संकल्पकर तैयार हो गयी।

सायंकाल को सत्यवान यज्ञ-समाधि के लिये लकड़ी लाने के लिये कुल्हाड़ा लेकर घनेजंगल में जानेको तैयार हुआ। सवित्री भी सत्यवान के साथ जानेको तैयार हो गयी। वह बड़ी बिनय-अनुनय से सास-ससुर और स्वामी की आज्ञा लेकर स्वामी के साथ जंगलको रवाना हुई। वह हँसतेमुँह से स्वामीको जंगल की शोभा बताती हुई उनके साथ चलने लगी।

सत्यवान, जंगल में पहुँच लकड़ी काटने लगा। लकड़ी काटते काटते एकदम शिर में पीड़ा हो जाने से विह्वल होकर आह करता-हुआ सावित्री के पास आ पहुँचा। पास आकर उसने कहा—"प्रिये! शिर में असह्य पीड़ा हो रही है। ओह ! मुझे पकड़, मेरे प्राण निकलते हैं।" सावित्रीने पतिको पकड़कर अपनी गोद में शिर रख-कर पृथ्वीपर सुलादिया। सत्यवान की वेदना बढ़ने लगी और समूचा शरीर ठण्ढा पड़गया। सावित्री समझगयी कि नारद का भविष्य-कथन सत्य निकला। वन में सर्वत्र अन्धकार फैलगया, सूर्यदेव अस्ताचल में जा पहुँचे और सावित्री का सौभाग्य सूर्य भी इसीतरह अस्त हो चला।

यमराज स्वयं सत्यवान को लेने आये। उनका तेज देखते ही सावित्री खड़ी हो गयी और दोनोंहाथ जोड़कर प्रणामकर बोली—"अवश्य ही आप कोई देवता हैं, कृपाकर कहिये आप कौन हैं और किसलिये आये हैं ?"

यमराज ने कहा—"सावित्री ! तूँ पतिव्रता स्त्री है, इसलिये मैं तेरे प्रश्नो का उत्तर देता हूँ । मैं यमराज हूँ और तेरे स्वामी को लेने आया हूँ, तेरे स्वामी का समय पूरा हो गया ।"

सावित्री ने उत्तर दिया—"मैं अपने पति को गोद में से नीचे उतार दूं, उसके बाद आप इनके जीवन को ले जाना चाहे तो ले जा सकते हैं । परन्तु स्मरण रखिये जहाँ मेरे पति रहेंगे वहीं मैं भी जाऊँगी ।"

इतना कह सावित्री ने सत्यवान को गोद मे से नीचे उतारा और इतने मे तुरन्त यमराज उसके शरीर मे से सूक्ष्म प्राण निकाल कर चलने बने । सावित्री भी उनके पीछे पीछे जाने लगी । यम ने पीछे फिरकर देखा तो सावित्री को साथ ही आते पाया । उन्होंने उससे कहा—"सावित्री ! यह क्या है ? मेरे साथ क्यों आती है, मरा हुआ मनुष्य फिर वापस हाथ नहीं आता । तूँ बुद्धिमती है, घर जा और पति का दाह-संस्कार कर ।"

सावित्री के नेत्रों से टपाटप आँसू गिरने लगे । वह सिसकती हुई बोली—"आह ! स्वामी रहित अबला स्त्री मैं कैसे रहूँगी ? यमराज ! आप विचार कर देखिये कि स्वामी बिना कोई स्त्री कौ अपना जीवन किस तरह व्यतीत कर सकती है ? आप मेरे स्वामी को जहाँ ले जायगें, वहाँ मैं भी चलूँगी ।"

अश्वपति को सौ पुत्र होने का वरदान लिया। इसके बाद चौथा बरदान मागने की वारी आई। सावित्री ने अपने हृदय की सच्ची वात प्रकट की। उसने कहा—"सत्यवान के शरीर से मेरे सौ पुत्र हों और वे मेरे कुल को उज्ज्वल करें, यही मेरी अन्तिम प्रार्थना है।" यमराज ने इसपर भी कह दिया—"तथास्तु।"

सावित्री का मनोरथ सिद्ध हो गया। उसने नम्रतापूर्वक यमराज से कहा—देव! "आपने कृपा कर सत्यवान के शरीर से सौ पुत्र होने का वरदान तो दिया है, तब पति को किस लिये ले जाते हैं? अब तो कृपाकर मेरे पति के प्राण वापस दीजिये, इसी से आप का वचन सत्य होगा।"

वचन से बँधे हुए यमराज क्या करते? उन्होंने कहा—"सावित्री! तू धन्य है! तेरे जन्म से स्त्री-जाति धन्यवाद की पात्री हुई है। ले, यह तेरे स्वामी का प्राण वापस देता हूं। तू तुरन्त जंगल को वापस लौट जा, तेरा पति सत्यवान फिर जीवित हो गया है। अब विलम्ब न कर।"

जायगा ? इसलिये तूँ समझदार होते हुए भी मरे हुए मनुष्य के लिये क्यों विलाप करती है ? मेरा कहा मानकर वापस लौट जा।"

यम की बात सुनकर सावित्री ने जो जो उत्तर दिये, वह सुनकर यमराज आश्चर्य-चकित रह गये। धर्म क्या है, अधर्म क्या है, शुभ और अशुभ कर्म किसे कहते हैं, इन सब विषयों पर सावित्री ने अत्यन्त गम्भीर प्रश्न करने शुरू किये। इन प्रश्नों को सुनकर यमराज हैरान हो गये। सच कहिये तो सावित्री की असाधारण प्रतिभा तथा एकनिष्ट पतिभक्ति देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। यमराज ने कहा—"देवी ! मैं तेरे प्रश्नों से बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ। सत्यवान के जीवन के सिवाय दूसरी जो वस्तु चाहे माँग, मैं वही तुझे दूंगा।"

सावित्री ने कहा—"यदि आप मुझपर प्रसन्न हुए हैं तो मुझे ऐसा वरदान दीजिये कि मेरे वृद्ध सास-ससुर का अन्धापन दूर हो और वे सूर्य के समान तेजस्वी बनें।"

यमराज ने कहा—"तथास्तु, तूँ बहुत थक गयी है, अब घर को वापस लौट जा।"

सावित्री ने कहा—"पति के साथ जाने में मुझे थकावट किस तरह आ सकती है। पति की जो गति होगी वही मेरी भी होगी। आप कृपा कर मेरी दो एक बातें सुनते जाइये।"

इसके बाद सावित्री ने हृदय-स्पर्शी कई धार्मिक-बातें सुनाकर यमराज को सन्तुष्ट किया और उनसे अपने सास-ससुर को छिनसे गया हुआ राज्य प्राप्त होने का वरदान लिया तथा अपने पिता

अश्वपति को सौ पुत्र होने का वरदान लिया। इसके वाद चौथा वरदान मांगने की वारी आई। सावित्री ने अपने हृदय की सच्ची वात प्रकट की। उसने कहा—"सत्यवान के शरीर से मेरे सौ पुत्र हों और वे मेरे कुल को उज्ज्वल करें, यही मेरी अन्तिम प्रार्थना है।" यमराज ने इसपर भी कह दिया—"तथास्तु।"

सावित्री का मनोरथ सिद्ध हो गया। उसने नम्रतापूर्वक यमराज से कहा—देव! "आपने कृपा कर सत्यवान के शरीर से सौ पुत्र होने का वरदान तो दिया है, तव पति को किस लिये ले जाते हैं? अव तो कृपाकर मेरे पति के प्राण वापस दीजिये, इसी से आप का वचन सत्य होगा।"

वचन से वँधे हुए यमराज क्या करते? उन्होंने कहा—"सावित्री! तू धन्य है! तेरे जन्म से स्त्री-जाति धन्यवाद की पात्री हुई है। ले, यह तेरे स्वामी का प्राण वापस देता हूं। तू तुरन्त जंगल को वापस लौट जा, तेरा पति सत्यवान फिर जीवित हो गया है। अव विलम्ब न कर।"

लिये विधाता ने अपने नियम को भी अपवाद बना कर सावित्री की प्रार्थना पूरी की। उसी की कृपा से अथवा पतिव्रत धर्म के प्रभाव से सत्यवान फिर जीवित हो गया और यमराज के दिये हुए वरदान के मुताबिक सारी बातें हो गयीं।

सावित्री व्रत द्वारा भारत ललनाओ ने सावित्री का वह उच्च आदर्श अभी तक जीवित कर रक्खा है। जिस दिन सावित्री ने पतिव्रत धर्म के बल से अपने मृत-पति सत्यवान को फिरसे जीवित किया था, उस पुण्य-तिथि ज्येष्ठ मास के अँधेरे पक्ष की चतुर्दशी को भारत की गृह-लक्ष्मियाँ अपने पति के दीर्घायुष्य की इच्छा से बड़ा कठिन व्रत करती हैं और वह व्रत सावित्री व्रत कहा जाता है।

भारत भगनियो! तुम भी सावित्रीके समान दृढ़ और पतिव्रता बनो। प्रेम-बन्धन एवं प्रेम-विवाह की महिमा का फिर से भारतवर्ष में प्रचार करो। मनुष्य की आध्यात्मिक शक्ति और उनका संकल्प-वय बड़ा प्रबल होता है और पतिव्रत धर्म के बल से स्त्री के लिये कुछ भी असाध्य नहीं है।

अरून्धती—दक्ष की कन्या और महामुनि वशिष्ठ की साध्वी पत्नी थी। अपने समय में वह सर्व-श्रेष्ठ सती मानी जाती थी। एक दिन की बात है कि मुनि-पत्नियो के साथ विहार करने के विचार से साधु वेश में भस्म आदि लगाये हुए महादेव ने देवदार के वन मे प्रवेश किया। कितनी ही मुनि-पत्नियाँ उनको देखते ही आसक्त हो गयीं और अपने अपने पति के समझाने पर भी उन्मत्त सी होकर उनके पीछे पीछे फिरने लगीं। इसी वेश में महादेवजी

वशिष्ठ मुनि के दर्वाजे पर भी गये और देवी अरुन्धती से कहने लगे—"देवी ! भिक्षा दो ! मैं शङ्कर तुम्हारा अतिथि होकर आया हूँ । इस जङ्गल में मुनियों ने तो मुझे मार कर निकाल दिया है, पर मुनि-पत्नियाँ मेरी टहल करती हैं । देवी ! तुम भी मेरा मन-मोहक स्वरूप देखो । देखो तो सही, मुनियों ने मुझे कैसा लहू-लुहान कर दिया !" इस प्रकार कह कर धीरे धीरे महादेवजी ने अपना तमाम अङ्ग देवी को दिखाया । देवी अरुन्धती ने महादेवजी को अपने पुत्र के समान समझ कर मातृ-भाव से उनके तमाम अङ्गों को धोकर साफ़ कर दिया और तमाम शरीर में (कामधेनु) गाय का घी मला । तदुपरान्त शुद्ध जल से स्नान करा नाना प्रकार के सुगन्धित लेपों और फूलों से उनके शरीर को विभूषित किया । इसके बाद विभिन्न प्रकार से उनकी पूजा करके कन्द-मूल और फल-फूलादि का स्वादिष्ट भोजन कराकर अरुन्धती बोलीं—"भगवान् नमस्कार ! पुत्र ! अब तुम्हें जिस देश में जाना हो, वहाँ जाओ !"

लिये विधाता ने अपने नियम को भी अपवाद बना कर सावित्री की प्रार्थना पूरी की। उसी की कृपा से अथवा पतिव्रत धर्म के प्रभाव से सत्यवान फिर जीवित हो गया और यमराज के दिये हुए वरदान के मुताबिक सारी बातें हो गयीं।

सावित्री व्रत द्वारा भारत ललनाओं ने सावित्री का वह उच्च आदर्श अभी तक जीवित कर रक्खा है। जिस दिन सावित्री ने पतिव्रत धर्म के बल से अपने मृत-पति सत्यवान को फिरसे जीवित किया था, उस पुण्य-तिथि ज्येष्ठ मास के अँधेरे पक्ष की चतुर्दशी को भारत की गृह-लक्ष्मियाँ अपने पति के दीर्घायुष्य की इच्छा से बड़ा कठिन व्रत करती हैं और वह व्रत सावित्री व्रत कहा जाता है।

भारत भगनियो ! तुम भी सावित्रीके समान दृढ़ और पतिव्रता बनो। प्रेम-बन्धन एवं प्रेम-विवाह की महिमा का फिर से भारतवर्ष में प्रचार करो। मनुष्य की आध्यात्मिक शक्ति और उनका संकल्प-बय बड़ा प्रबल होता है और पतिव्रत धर्म के बल से स्त्री के लिये कुछ भी असाध्य नहीं है।

अरून्धती—दक्ष की कन्या और महामुनि वशिष्ठ की साध्वी पत्नी थी। अपने समय में वह सर्व-श्रेष्ठ सती मानी जाती थी। एक दिन की बात है कि मुनि-पत्नियो के साथ विहार करने के विचार से साधु वेश मे भस्म आदि लगाये हुए महादेव ने देवदार के वन में प्रवेश किया। कितनी ही मुनि-पत्नियाँ उनको देखते ही आसक्त हो गयीं और अपने अपने पति के समझाने पर भी उन्मत्त सी होकर उनके पीछे पीछे फिरने लगीं। इसी वेश में महादेवजी

वशिष्ठ मुनि के दर्वाजे पर भी गये और देवी अरुन्धती से कहने लगे—"देवी ! भिक्षा दो ! मैं शङ्कर तुम्हारा अतिथि होकर आया हूँ । इस जङ्गल मे मुनियों ने तो मुझे मार कर निकाल दिया है, पर मुनि-पत्नियाँ मेरी टहल करती हैं । देवी ! तुम भी मेरा मन-मोहक स्वरूप देखो । देखो तो सही, मुनियो ने मुझे कैसा लहू-लुहान कर दिया !" इस प्रकार कह कर धीरे धीरे महादेवजी ने अपना तमाम अङ्ग देवी को दिखाया । देवी अरुन्धतीने महादेवजी को अपने पुत्र के समान समझ कर मातृ-भाव से उनके तमाम अङ्गों को धोकर साफ कर दिया और तमाम शरीर में (कामधेनु) गाय का घी मला । तदुपरान्त शुद्ध जल से स्नान करा नाना प्रकार के सुगन्धित लेपों और फूलों से उनके शरीर को विभूषित किया । इसके बाद विभिन्न प्रकार से उनकी पूजा करके कन्द-मूल और फल-फूलादि का स्वादिष्ट भोजन कराकर अरुन्धती बोलीं—"भगवान् नमस्कार ! पुत्र ! अब तुम्हें जिस देश में जाना हो, वहाँ जाओ !"

भारतवर्ष में लक्ष्मी, सरस्वती, सीता, अनसूया, सुलोचना, दमयन्ती आदि अनेक सती स्त्रियाँ हो गयी हैं। यदि इनके पातिव्रत के प्रभाव का इतिहास लिखा जाय तो एक मोटा सा ग्रन्थ ही बन जाय। इसलिये भारत की ललनाओं सती और आदर्श स्त्रियों का अनुकरण करना सीखो। यह बात मिथ्या है कि— "आदर्श स्त्रियाँ केवल प्राचीन समय में ही हुआ करती थीं। कलियुग में सती और आदर्श स्त्रियों का आविर्भाव होना ही असम्भव है।" आत्मोन्नति करने की प्रबल इच्छा रखने वाली देवियों के लिये आज भी सतयुग विद्यमान है। वर्तमान समय में भी भारत में कितनी ऐसी श्रेष्ठ महिलाएं हैं, जो अपने नाम चरित्र का दिव्य प्रकाश चारों ओर फैला रही हैं। मैं चाहता हूँ भारत का समस्त स्त्री-समाज इसी प्रकार उच्च सद्गुणों से अपनी आत्मा को विभूषित करे और स्वच्छ हृदय से विदुषी, परोपकारी और पति-व्रता बनने का संकल्प करे। इसी से मिलती जुलती सम्मति संस्कृत भाषा के श्रेष्ठ कवि वाल्मीकि मुनि देते हैं—

काम पड़ने पर उसके प्रति मातृभाव अथवा भगनी भाव धारण करने से अपना मन चञ्चल नहीं होने पाता और उस पुरुष पर उसका अच्छा प्रभाव पड़ता है।

अरुन्धती के ऐसे अपूर्व पातिव्रत के कारण ही विवाह संस्कार में उनकी स्तुति की जाती है। पुरोहित कन्या से कहते हैं कि— "इन वशिष्ठ पत्नी के दर्शन करो, जो अपने पातिव्रत के महात्म्य से चाहे जो कर सकती हैं। इनके दर्शन से तुम महासाध्वी बनोगी और दर्शन न करोगी तो असाध्वी।" इसी पर यह रीति प्रचलित है कि विवाह की रात को कन्या को अरुन्धती नक्षत्र का दर्शन कराया जाता है। क्योंकि प्राचीन आर्य्य अपने महापुरुषों और स्त्रियों की स्मृति को नई रखने के विचार से उनके नाम पर किसी मुख्य तारे या नक्षत्र ही का नाम डाल दिया करते थे, जिससे उनकी सन्तानों को उनके सद्गुणों का स्मरण सदा होता रहे। अरुन्धती देवी के तारे का जो कन्यायें दर्शन करती हैं वे विद्वान पतिको पाने और उसकी प्रियतमा बनने की अभिलाषिणी होती हैं।

भारत की देवियों! देखा अपने एक पतिव्रता स्त्री का अन्य पुरुष के प्रति मातृभाव! अगर सच पूछिये तो यह पातिव्रत का प्रभाव और सतीत्व की शानदार विजय थी। माताओ और भगनियो! तुम भी इसी मार्ग का अवलम्बन करो और भविष्य में पैदा होने वाली सन्तानों के लिये अपना उच्च आदर्श रखती जाओ, ताकि किसी को भी मातृ-जाति पर अथवा स्त्री-जाति पर लाञ्छन लगाने का अवसर ही प्राप्त न हो।

भारतवर्ष में लक्ष्मी, सरस्वती, सीता, अनसूया, सुलोचना, दमयन्ती आदि अनेक सती स्त्रियाँ हो गयी हैं। यदि इनके पातिव्रत के प्रभाव का इतिहास लिखा जाय तो एक मोटा सा ग्रन्थ ही बन जाय। इसलिये भारत की ललनाओं सती और आदर्श स्त्रियों का अनुकरण करना सीखो। यह बात मिथ्या है कि— "आदर्श स्त्रियाँ केवल प्राचीन समय में ही हुआ करती थीं। कलियुग में सती और आदर्श स्त्रियों का आविर्भाव होना ही असम्भव है।" आत्मोन्नति करने की प्रबल इच्छा रखने वाली देवियों के लिये आज भी सतयुग विद्यमान है। वर्तमान समय में भी भारत में कितनी ऐसी श्रेष्ठ महिलाएं हैं, जो अपने चारु चरित्र का दिव्य प्रकाश चारों ओर फैला रही हैं। मैं चाहता हूँ भारत का समस्त स्त्री-समाज इसी प्रकार उच्च सद्गुणों से अपनी आत्मा को विभूषित करे और स्वच्छ हृदय से विदुषी, परोपकारी और पतिव्रता बनने का संकल्प करे। इसी से मिलती जुलती सम्मति संस्कृत भाषा के श्रेष्ठ कवि वाल्मीकि मुनि देते हैं—

वीर दुर्गावती—महारानी दुर्गावती माण्डलाराज्य के अधिपति राजा दलपतिसिंह की वीर पत्नी थीं। दिल्लीपति अकबर दलपतिसिंह से भय खाता था और परोक्षरूपमें युद्ध करने से हिचकता था। जब कभी उसने सामना किाय, उसे मुँहकी खानी पड़ी। जब तक वे जीवित रहे अकबर की दाल न गलसकी। अकस्मात् दैव की करालगतिने उनको शीघ्रही इस असार संसारसे उठालिया। प्रजामें हाहाकार मचगया। रानी दुर्गावती विधवा हो गईं। उनके जीवन का सर्वस्व लुटगया। राजपूत प्रथा के अनुसार पति के साथ सती हो जाने की तैयारियाँ करने लगीं परन्तु उनकी गोद में एक तीनवर्ष का बालक था जिससे देख उनका हृदह काँप उठता था। उन्होंने सोचा मेरे सती हो जानेपर इस अबोधबालक की क्या दशाहोगी। यह निसहाय हो जायगा और जीवित रहना असम्भव है। फिर राज्य की क्या हालत होगी। इस प्रकार विचारों के आते ही सती होने का विचार त्यागदिया। पति के पैरोंपर चलकर उनके गौरव की रक्षा करना और उनका नाम अमर करना, साथ ही साथ प्रजा को सुखदेना और जीवित रहकर स्वदेश और जाति के नामपर प्राणाहुति देना सती हो जाने से कहीं श्रेयस्कर समझा।

अतः पति के क्रिया-कर्म से निश्चिन्त होने के वाद राज्य का समस्त कार्यभार अपने हाथ में ले लिया। राज्य चलाने मे अपने पति की नीति का ही अनुसरण किया। राज्य का कार्य पूर्ववत् चलने लगा। प्रजा भी रानी दुर्गावती के दयालु स्वभाव और निरपेक्ष वर्ताव से प्रसन्नतापूर्वक कालयापन करने लगी। धूर्तों और

विश्वासघातियों की एक भी दाल उनके सामने न गलने पाती थी। रानी अपनी प्रजा को पूर्ववत् सुखी देख बड़ी प्रसन्न हुई।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि मुगलों का दांत सम्पत्तिशाली माण्डलापर रहता था, पर दलपतिसिंह की वीरता के आगे उनकी एक न चलती थी। परन्तु राजा के मरते ही उनके प्रसन्नता का पारावार न रहा। उज्जैन का समकालीन नव्वाब आशफ खाँ अपनी ताक लगाये बैठा था। उसने रानी को असहाय और अबला जान आक्रमण करने का अच्छा अवसर देखा। दिल्ली जाकर अकबरसे माण्डला को हस्तगत करने का अच्छा मौका बतलाया। बस क्या था? अकबर ने तुरन्त आज्ञा दे दी। आशफ खाँ एक विशाल सेना ले माण्डलापर चढ़ आया।

रानी को जिसबात का संदेह था वही सामने आ गया। वे युद्ध करना नहीं चाहती थीं क्योंकि अपनी निरीह प्रजा का रक्त बहाना और धन व्यय करना व्यर्थ समझती थीं। इसके लिये इन्होंने प्रयत्न भी किया परन्तु व्यर्थ। खून का प्यासा आसफ भला समझाने से कब माननेवाला था। युद्ध अनिवार्य समझ इन्होंने एक अन्तिम पत्र फिर लिखा जिसका आशय यह था:—

लौट जावें। यदि मेरे निवेदन को स्वीकार न करेंगे, तो याद रखिये, मैं क्षत्राणी की बेटी हूँ, एक बीर की पत्नी हूँ। भय से भागनेवाली नही और न बिना युद्ध के तिलभर जमीन दे सकती हूँ। क्षत्राणियों के बल का तजुर्बा कराऊँगी और इस अन्याय का विना बदला लिये शान्त न बैठूँगी। याद रखना, एक हिन्दू स्त्री अपनी जाति और स्वदेश की रक्षा के लिये हर समय प्राण की ममता छोड़देती हैं। खूब सोच समझकर युद्धभूमि में पैर रखना। यदि आपकी विजय भी होगी तो वह हर्षकी नही वलिक हँसी और वदनामी का कारण होगी और यदि उलटा हारना पड़ा तो डूबमरने के लिये चिल्लूभर पानी भी नसीब न होगा।"

आसफपर इसपत्र का उलटा ही प्रभाव पड़ा। उसने दूतद्वारा कहला भेजा कि तुम्हारा हित इसी में है कि मेरी अधीनता चुपचाप स्वीकार करो। तुम्हारी इन पेचीली वातों में आसफ नहीं फँस सकता।

आसफ का उत्तर पातेही महाराणी आग ववूला हो गई। आँखों से अग्नि की ज्वाला निकलने लगी। तुरंत सेना को तैयार होने की आज्ञा दे दी। यथासमय दोनो ओर की सेनायें युद्धभूमिमें डटगई। घमासान युद्ध हुआ। राजपूतों की विलक्षण मार के सामने मुगल सेना न टिक सकी। मुगलों के पैर उखड़गये और भाग खड़ेहुए।

आसफ को यह हार काटे के समान चुभने लगी। वह चुप न वैठ सका और पहिले से भी अधिक सेना का संगठनकर दूसरीवार चढ़आया। महाराणी ने भी द्विगुणित उत्साहसे मुगलों का सामना

किया। दूसरीबार भयकर युद्ध छिड़गया । बाणों की सरसराहट और तलवारों की झनझनाहट ने उग्ररूप धारण करलिया।

महाराणी दुर्गावती का पुत्र वीर वल्लभ जो उस समय केवल १५ वर्ष का था, नयाजोश और नई उमग के साथ यवनों को मूली की तरह काटता हुआ आगे बढ़ने लगा । देखते २ खून की नदी बहचली। वीर वल्लभ और रानी का सैन्य संचालन देख शत्रुओं के छक्के छूटरहे थे । इस प्रकार कई घंटे युद्ध होने के पश्चात् वीर वल्लभ का घोड़ा ठोकर खाकर गिरपड़ा । फिर क्या था, मदान्ध मुगलों ने एकसाथ मिलकर आक्रमण किया। परन्तु महाराणी की दृष्टि वहाँतक पहुँच गई। कितनों का सिरच्छेद करतीहुई वीरवल्लभ तक पहुँच गईं और उसे उठवाकर किले में भिजवा दिए स्वयं युद्ध में जुट गईं।

कर लें। परन्तु वाह रे रानी! उसने कहा "खबरदार! ऐसीबात न करना, मरना तो एकदिन सभी को है। मैं युद्ध में मरना सबसे उत्तम मृत्यु समझती हूँ परन्तु पीठ दिखाना या हार मानना नहीं पसन्द करती। यह हिन्दू रमणी का धर्म और आदर्श है। मैं यह भी जानती हूँ कि जीत नहीं सकती और बच भी नहीं सकती परन्तु याद रखो क्षत्राणी अपना प्राणदेकर भी मान की रक्षा कर सकती है। यदि तुम मेरे लायक कोई उपकार करसकते हो तो इतना करो कि यवनोंके हाथसे मुझे न मरना पड़े। मेरा शरीर यवन अपवित्र न करने पावे। यह तलवार लो और मेरा शिर धड़ से अलग कर दो।

परन्तु सरदार को आगापीछा करता देख उन्होंने अपने ही हाथ से गर्दनपर एक ऐसा वार किया कि सर धड़ से अलग पृथ्वीपर नाचने लगा। इस प्रकार*रानी अपनी अमर-कीर्ति छोड़ संसार के लिये नारी शक्ति का परिचय देतीहुई स्वर्ग को चलीगई।

विलास कुमारी—अजमेर के कुछदूर अचलगढ़ नाम का एक प्रसिद्ध किला था। किले का आधिपत्य सोलंकी-सेनापति विक्रमसिंह के हाथ में था। उनकी अध्यक्षता में बहादुर राजपूतों की एक सुसंगठित सेना थी जो समय समयपर अचलगढ़ के लिये अपने प्राणों की आहुति देने के लिये प्रस्तुत रहती थी। विक्रमसिंह को एक

---

* महारानी दुर्गावती का पूरा इतिहास जानने के लिये हमारे यहाँ से प्रकाशित "वीर दुर्गावती" मंगाकर पढ़ सकती हैं। मू० ॥)

कन्या के अतिरिक्त अपना कहनेवाला कोई न था । क्योंकि पत्नी के देहावसान के पश्चात् उन्होंने दुसरा विवाह नहीं किया था कन्या का नाम देवयानी था परन्तु उसे वेशभूषा अधिक पसन्द होने के कारण विक्रमसिंह उसे विलासकुमारी के नाम से पुकारा करते थे। राजपूत अपने पुत्र को जैसी शिक्षा दिया करते हैं, विक्रमसिंह भी अपनी कन्या को वैसी ही शिक्षा देते थे । धीरे २ वह अश्वारोहण और अस्त्र-शस्त्र संचालन में ऐसी निपुण हो गयी कि बड़े २ योद्धा उसके सामने नत-मस्तक हो जाते थे । युद्ध से उसे ऐसा प्रेम हो गया कि प्रायः वह पिता के साथ युद्धभूमि में जाया करती और उसके असीम साहस और वीरता को देख लोग उसकी भूरि २ प्रशंसा करते ।

बबूला हो गये। राजपूती रक्त उनके नस २ में संचार करने लगा। उन्होंने तुरंत सेना को तैयार होने की आज्ञा दे दी।

युद्ध सामग्री ठीक हो जानेपर विक्रमसिंह सेना सहित रण मैदान में जा पहुंचे और रण-भेरी बजा दी। यवन-सेना इस आकस्मिक विपत्ति को देख घबड़ा उठी। अफ़ज़ल जो अभीतक गुलछर्रे उड़ा रहा था, तुरन्त सचेत होगया और शत्रुओं पर आक्रमण करने की आज्ञा दे दी। देखते २ "हर २ महादेव" और "अल्ला हो अकबर" के गगनभेदी शब्दों से आकाश मण्डल गूँज उठा।

खूब घमासानयुद्ध हुआ। थोड़े ही समयमें दोनों तरफके कितने ही वीर धराशायी हो गये। युद्धभूमि रक्त से प्लावित हो उठी भयानक दृश्य था। एकाएक अफ़ज़ल विक्रसिंह के निकट आ पहुँचा और कहा "राजपुत वीर! तुम वास्तव मे वीर हो, मैं तुम्हारा वध करना नही चाहता बशर्तें विलासकुमारी को मेरे सुपुर्द कर दो।" विक्रमसिंह को यहबात असहनीय हो गई। उन्होंने तलवार खींचकर एक भरपूर वार अफजलपर किया परन्तु तलवार अफ़ज़ल को लगने के पूर्व ही एक यवन सैनिक ने दूर से ही धोखे से कटार का एक ऐसा निशाना मारा कि विक्रमसिंह घोड़ेसे नीचे गिर पड़े।

अपने सेनापति को मरता हुआ देख राजपूत-सैनिकों का धैर्य छूटगया। वे भाग खड़ेहुए। परन्तु उसी समय एक १५ वर्षीय युवक ने ललकारकर कहा "राजपूत-ललनाओं की कोख को कलंकित करने वाले कायरों! स्वदेश को पराधीनता की बेड़ी मे अवद्ध कराने वाले नर-पिशाचों ठहरो! मेरे जीते जी अचलगढ़पर यवनों का

आधिपत्य होना असंभव है । यदि तुममें से कोई भी, आज्ञा की अवहेलनाकर युद्धस्थल से पीठ दिखावेगा तो समझ रखो फिर भी जीवित नहीं रह सकते । सभों को मृत्यु दण्ड भोगना पड़ेगा । उधर देखो ! अभी अचजगढ़ का रक्त-मिश्रित पताका मेरे हाथ में है ।"

भागते हुये राजपूत सैनिक इस संभ्रात युवक की कठोर आज्ञा को सुन लौटपड़े । सबोंने इस नये सेनापति की अध्यक्षता में वायु-वेग से यवनापर आक्रमण किया । घमासान युद्ध आरम्भ हो गया। यह आगन्तुक जिधर भी घुसता सैकड़ों को तलवार के घाट उतार देता । अपने सेनापति की अनुपम वीरता को देख राजपूत-सैनिक भी द्विगुण उत्साह और साहस से लड़ने लगे । लगातार एक प्रहरतक युद्ध हो । के पश्चात् यवनों के पैर उखड़ गये । यवन-सेना अपनी जान लेकर जिधर रास्ता मिला उधर ही बेतहाश भागने लगी । देखते २ युद्धभूमि यवनो से खाली हो गयी । अफ़ज़ल भी अपनीजान ले एकतरफ़ भागा ।

क्रोध साथ ही साथ हुआ। उसने कहा "क़ाफ़िर बालक ! मेरे हाथो क्यों व्यर्थ प्राण गवाने आया है ।" बालक ने उत्तर दिया "घमंडी ! मूर्ख ! अच्छी तरह आँखें खोलकर देख कि मैं बालक नहीं स्त्री हूँ।" इतना कहतेहुए उस बालक ने पगड़ी उतारकर फेंक दी। काले मेघ में पूर्णिमा के चाँद की भाँति कामिनी का कमनीय मुख दिखलाई पड़ा । विलासकुमारी ने कहा "दुष्ट ! व्यभिचारी सेनापते ! अब पहचाना कि मैं कौन हूँ।"

भय और विस्मय से उस भुवन मोहिनी, खड्ग-धारिणी साक्षात् दुर्गा को निहारतेहुए उदासीन मुँह से अफ़ज़ल ने कहा "अहा ! तुम तो विक्रमसिंह की कन्या हो।"

विलासकुमारी ने झपटकर एक हाथ से अफ़ज़ल के सर के बाल पकड़े तथा दूसरे हाथ से तलवार तानकर कहा "विक्रमसिंह की कन्या आज पितृ-हन्ता के खून से अपने परलोकगत पितृदेव का तर्पण करेगी। यदि शक्ति हो तो अपने प्राण बचाने की चेष्टा कर।

अफ़ज़ल ने काँपतेहुए हाथ से विलासकुमारी को लक्ष्यकर एक तलवार चलाई परन्तु, उसकी तलवार विलासकुमारी के गर्दनपर पड़ने के पहले ही उसका कटासिर विलासकुमारी के हाथ में लटकने लगा। इस तरह विलासकुमारी ने आज अपने पिता के हत्यारे का बदला ले मारे हर्ष के गदगद हो उठी।

कर्मदेवी—कर्मदेवी के पिता का नाम दुर्जनसिंह था जो जालोर के अधिपति थे। जिस समय अकबर ने महाराणा प्रताप का सामना हल्दी घाटी के मैदान मे किया था, उस समय दुर्जनसिंह ने

अकबर का पक्ष ग्रहण किया था। कर्मदेवी ने उन्हें लाख समझाया परन्तु उन्होंने ऐक न मानी। पिता की इस नीच वृत्ति को देख कर्मदेवी को बडी वेदना हुई। पिता के प्रति श्रद्धा के बदले घृणा ने घर करलिया। परन्तु कर्मदेवी ने अपने हृदय मे प्रतिज्ञा की कि जबतक इस शरीर में प्राण विद्यमान है, यवनों को राजपूतों की इस पवित्र भूमिपर पैर न रखने दूँगी। इस प्रतिज्ञा को कार्यरूप में परिणत करने के लिये उसने कई स्त्रियों का एक सैनिक समूह बनाया जिसका काम था यवनों को जहाँ कहीं भी राज्य-सीमा के अन्दर देखे शिरच्छेद कर डाले।

एकदिन जंगलों में यवनों की खोज में घूमती हुई उसकी दो वीर सखियों से पूगल राज्य के युवराज मल्लसिंह से भेंट हो गई। उन्होंने उनको यवन समझ तीरों की बौछार से घायल करदिया। परन्तु अन्त में एक राजपूत जान छोड़दिया।

कर्मदेवी को इस घटना का समाचार मालूम हो गया। उसने सखियों को इस कृत्य के लिये बहुत फटकारा। मुझको मालूम हो जानेपर कि वे पूगलराज्य के युवराज हैं, सम्मानार्थ [illegible] लिवालाई। कर्मदेवी के फटकारने का यही कारण था कि मल्लसिंह के शौर्य एवं बहादुरी का नाम सुन उन्हें हृदयमे वरण करचुकी थी।

सखियों में से एक ने कहा कि ये भी तो आपके पिता शत्रु के पुत्र हैं और शत्रु का वध करना राजधर्म है।

आखिर हैं तो पिता ही। उन्होंने केवल जन्म दिया है। परन्तु मैं पली हूँ जासोर की मिट्टी से! और इसी पवित्र भूमिको पिताजी ने यवनो के निरीक्षणपर छोड़ रखा है। इससे बढ़कर शत्रु और कौन हो सकता है। मल्लसिंह! देश और जाति के लिये मर मिटनेवाले त्यागमूर्ति हैं। मेरे विचारों के समर्थक हैं। मैं उनका हृदय से स्वागत करूँगी।

कर्मदेवी की सुन्दरता और प्रशंसा को सुन मल्लसिंह कर्म· देवी से भेंट करने का निश्चयकर कर्मदेवी के महलतक पहुँच गये दोनों परस्पर मिलकर बड़े आनन्दित हुए। स्वदेश-रक्षा के निमित्त अनेकानेक बातें हुई। मल्लसिंह की बीरतापूर्ण बातो को सुन कर्म· देवी उनपर मुग्ध हो गई। दोनों प्रणय-बन्धन में आबद्ध हो गये।

इधर मल्लसिंह अकबर की आँखो में खटका करते थे। इसके दो कारण थे। एक तो यह कि कर्मदेवी उनको चाहती थी दूसरे यह कि इन्होने महाराणा प्रताप का पक्ष * हल्दीघाटी की लड़ाई में ग्रहण किया था। अकबर चाहता था कि कर्मदेवी से विवाहकर दुर्जयसिंह को हमेशा के लिये अपना हितैषी बना लूँ। इसलिये दुर्जयसिंह के पास कईबार इस आशय का पत्र लिखा। परन्तु वीर कर्मदेवी की अस्वीकृति अकबर की लहलहाती हुई आशापर पानी फेर देती थी। दुर्जयसिंह भी कर्मदेवी की इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं कर सकते थे क्याकि वह थी बड़ी हटीली। कोई दूसरा उपाय न देख अकबर ने अपने रास्ते में विघ्न-स्वरूप मल्लसिंह को ही दूर करदेने का षड्यन्त्र रचना आरम्भ किया परन्तु कर्मदेवी की अनुपम चालाकी के आगे उसकी एक भी मनोकमना पूर्ण न हो सकी। उसका सब प्रयत्न व्यर्थ गया।

---

* "हल्दी घाटी का युद्ध" पढ़ने के लिये हमारे यहाँ से प्रकाशित "महाराणा प्रताप" नामक पुस्तक मँगाकर पढ़ सकती है।